बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 18 अंक 235

# रोजगार का भविष्य

देश की श्रम शक्ति बदलाव के दौर से गुजर रही है। भारतीय उद्योग परिसंघ, अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद और भारतीय विश्वविद्यालय संघ द्वारा तैयार हालिया भारत कौशल रिपोर्ट 2026 (काम का भविष्य- गिग श्रम शक्ति, फ्रीलांसिंग, एआई समर्थित श्रम शक्ति, दूर से किए जाने वाले काम और उद्यमिता) इस बदलाव को विस्तार से दर्ज करती है। रोजगार-योग्यता पिछले वर्ष के 54.81 फीसदी से बढ़कर 56.35 फीसदी हो जाने के साथ, रिपोर्ट नौकरी के लिए तैयार होने और कौशल अपनाने में निरंतर सुधार की ओर संकेत करती है। यह अध्ययन रोजगार-योग्यता परीक्षणों और 1,000 से अधिक संस्थानों से प्राप्त अंतर्दृष्टियों पर आधारित है।

रिपोर्ट के निष्कर्ष इस बात की पुष्टि करते हैं कि वैश्विक प्रतिभा केंद्र के रूप में भारत का कद बढ़ रहा है। वैश्विक स्तर पर आर्टिफिशल इंटेलिजेंस (एआई) के क्षेत्र में काम कर रही श्रम शक्ति का करीब 16 फीसदी भारत से है। इस क्षेत्र में करीब 6 लाख लोग काम कर रहे हैं और 2027 तक यह आंकड़ा दोगुना बढ़ने का अनुमान है। डिजिटल और फ्रीलांस अर्थव्यवस्था का भी तेजी से विस्तार हो रहा है और वर्ष 2030 तक गिग कर्मियों की संख्या बढ़कर 2.35 करोड़ हो जाने का अनुमान है। एआई समर्थित भर्ती, हाइब्रिड कार्य मॉडल और मानव संसाधन प्रणाली आदि तमाम क्षेत्रों में नियुक्तियों को नए ढंग से परिभाषित कर रहे हैं। अब हर10 में से करीब 9 कर्मचारी किसी न किसी तरह जेनेरेटिव एआई टूल्स पर निर्भर हैं। भारत में इसे अपनाने की दर अधिकांश विकसित देशों से कहीं तेज है।

बहरहाल, नई कार्य व्यवस्था अहम कमियों को भी उजागर करती है। गिग और प्लेटफॉर्म अर्थव्यवस्था को उसके लचीलेपन के लिए पसंद किया जाता है और यह अभी भी औपचारिक श्रम संरक्षण के दायरे से बाहर है। लाखों आपूर्ति कर्मी, फ्रीलांसर और प्लेटफॉर्म आधारित पेशों में बीमा का अभाव है, भविष्य निधि की व्यवस्था नहीं है या फिर दिक्कतें दूर करने की कोई व्यवस्था नहीं है। जब तक नियामकीय ढांचा विकसित नहीं होता है, लचीलापन असुरक्षा के रूप में नजर आ सकता है। रिपोर्ट में छोटे लाभ और निष्पक्ष कार्य प्रोटोकॉल की मांग, जिसमें कौशल-सत्यापित प्रमाणपत्र और डेटा संरक्षण मानदंड शामिल हैं, नीतिगत शून्य को रेखांकित करती है। कौशल के क्षेत्र में बढ़ती खाई भी एक बड़ी समस्या है। एआई विभिन्न उद्योगों में उत्पादकता को बदल रहा है, लेकिन केवल सीमित संख्या में कंपनियां बड़े पैमाने पर एआई प्रशिक्षण प्रदान करती हैं, जिससे डिजिटल साक्षरता का असमान परिदृश्य बन रहा है। बड़ी कंपनियां स्वचालन और विश्लेषण को अपना रही हैं, जबकि छोटे और मध्यम उद्यम इन्हें अपनाने के लिए जूझ रहे हैं। जैसे भारत की 1990 और 2000 के दशक की सेवा-आधारित वृद्धि ने समृद्धि के ऐसे क्षेत्र बनाए जिनसे बड़ी संख्या में कम-कुशल और असंगठित कामगार बाहर रह गए थे, वैसे ही एआई-आधारित वृद्धि उस समस्याग्रस्त प्रवृत्ति को दोहराने का जोखिम रखती है। स्वचालन की नई लहर असमानताओं की खाई को और चौड़ा कर सकती है, जैसा कि एक बार सेवाओं के उभार ने किया था।

लैंगिक यानी स्त्री-पुरुष में और क्षेत्रीय असमानता ने भी चुनौती बढ़ा दी है। महिलाओं की रोजगार-योग्यता का स्तर 50.86 फीसदी है जो अब पुरुषों के लगभग समान है लेकिन उच्च वृद्धि वाले क्षेत्रों मसलन तकनीक, विनिर्माण और ऊर्जा क्षेत्र में उनकी सीमित पहुंच है। क्षेत्रीय अंतर बरकरार हैं। उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र और कर्नाटक रोजगार के मामले में आगे हैं जबकि बिहार और पूर्वोत्तर के राज्य काफी पीछे हैं। देश के कौशल मिशन के अगले चरण में समता और दक्षता पर ध्यान देना होगा।

रोजगार की योग्यता को सार्थक रोजगार में बदलने के लिए नीतियों को अर्थव्यवस्था में हो रहे प्रगति और परिवर्तनों के साथ तालमेल बैठाना होगा। एक आधुनिक श्रम ढांचे को गिग और रिमोट कार्य को मान्यता देनी चाहिए। इस संदर्भ में लागू होने की प्रतीक्षा कर रहीं चार श्रम संहिताएं एक शुरुआत हो सकती हैं। इसके अतिरिक्त, नैतिक एआई शासन को बढ़ावा देने के लिए यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि भर्ती और कार्यस्थल प्रबंधन में एल्गोरिदम की पारदर्शिता और निष्पक्षता बनी रहे। अंततः, शिक्षा और कौशल सुधार के जरिये कक्षाओं को करियर से जोड़ना चाहिए और परियोजना-आधारित तथा उद्योगों के साथ तालमेल वाली शिक्षा दी जानी चाहिए।

अजय मोहंती

# अमेरिका से व्यापार समझौता संभव और जरूरी भी

## अमेरिका के साथ व्यापार समझौते के लिए बातचीत पर जल्द से जल्द आगे बढ़ना चाहिए। इसके लिए अमेरिका को कुछ रियायतें भी देनी होंगी। बता रहे हैं मिहिर शर्मा

कार्यकारी शक्ति के एक माध्यम के रूप में शुल्क लगाने की अमेरिकी राष्ट्रपति डॉनल्ड ट्रंप की 'प्रतिबद्धता' पर संदेह नहीं किया जा सकता। सार्वजनिक जीवन में अपनी लंबी पारी के दौरान (पहले एक व्यवसायी के रूप में, फिर एक टेलीविजन हस्ती के रूप में और अंत में एक राजनेता के रूप में) ट्रंप हमेशा व्यापार प्रतिबंधों एवं शुल्कों को हथियार बनाने के पक्ष में दलील देने में आगे रहे हैं। व्यापार प्रतिबंधों एवं शुल्कों को लेकर उनका रुख 1980 के दशक में भी दिखाई दिया था जब जापान वैश्विक अर्थव्यवस्था पर अमेरिका के प्रभुत्व को चुनौती देता दिखाई दे रहा था। वर्ष 1987 में ट्रंप ने जापान पर शुल्कों की मांग करते हुए कई राष्ट्रीय समाचार पत्रों में एक पूरे पन्ने का विज्ञापन प्रकाशित किया। वर्ष 1989 में उन्होंने कहा कि सफल अर्थव्यवस्थाओं पर आधार शुल्क 15 या 20 फीसदी होना चाहिए।

इस संदर्भ में यह कल्पना करना मुश्किल है कि व्यापार नीति से जुड़ी कोई भी कानूनी चुनौती, चाहे वह कितनी भी ताकतवर क्यों न हो, ट्रंप को उनके मंसूबे से दूर कर पाएगी। यह सच है कि अमेरिका के उच्चतम न्यायालय ने शुल्कों को चुनौती देने वाली उस याचिका पर सुनवाई करने का फैसला किया है जिसमें कहा गया है कि राष्ट्रपति के पास व्यापार नीति बदलने की शक्ति नहीं है बल्कि यह विधायिका के पास है। यह भी सच है कि इस मामले पर तेजी से सुनवाई होगी और यह बात भी उतनी ही सच है कि नौ न्यायाधीशों (इनमें ट्रंप द्वारा नियुक्त कुछ न्यायाधीश भी शामिल हैं) ने जो सवाल पूछे हैं उनसे संकेत मिलता है कि वे व्हाइट हाउस के तर्कों से प्रभावित नहीं हैं। मगर यह बात भी सच है कि लोकतंत्र में न्यायाधीश उन नीतियों को लागू करने वाले नेताओं के खिलाफ जाने से कतराते हैं जिन्हें एक चुनावी जनादेश मिला है। इन तमाम बातों के बावजूद अगर शीर्ष न्यायालय शुल्कों पर ट्रंप के निर्णयों को पलटते हुए उन्हें अमेरिकी संसद कांग्रेस को भेजता है तो वहां संसद सदस्य राष्ट्रपति का विरोध नहीं करने का विकल्प चुन सकते हैं। इस बात की भी संभावना है कि अगर सरकार की दो अन्य शाखाएं ट्रंप के खिलाफ जाती हैं तब भी वह शुल्क लगाने के लिए सीधे कार्यकारी आदेशों के अलावा कुछ दूसरे तरीकों का सहारा ले सकते हैं। अमेरिकी कानून में ऐसे प्रावधान हैं जिनका इस्तेमाल वह अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए कर सकते हैं।

ट्रंप और उनके वरिष्ठ अधिकारियों ने अपने शब्दों एवं व्यवहारों दोनों माध्यमों से अपनी व्यापार नीति का बचाव किया है। ट्रंप ने एक सोशल मीडिया पोस्ट में कहा कि शुल्कों के विरोधी 'मूर्ख' हैं। उनके वाणिज्य मंत्री हॉवर्ड लुटनिक यह कहते हुए जरा भी नहीं हिचकिचा रहे हैं कि शुल्क राष्ट्रपति के लिए एक ऐसा जरिया हैं जिनका उपयोग वह एक 'अनुचित' दुनिया पर 'न्याय' लागू करने के लिए कर रहे हैं। इसके साथ ही, ट्रंप प्रशासन उपभोक्ताओं पर शुल्कों के प्रत्यक्ष नकारात्मक प्रभावों को आंशिक रूप से कम करने के लिए कदम भी उठा रहा है। शुक्रवार को प्रशासन ने एक नया कार्यकारी आदेश जारी किया जिसके तहत बीफ से लेकर कॉफी, संतरे और उर्वरकों तक सौ से अधिक वस्तुओं पर अगस्त में लगाए शुल्क कम कर दिए गए हैं। त्योहारों के दौरान खाद्य वस्तुओं की कीमतें चिंता का विषय हैं और ऐसा प्रतीत होता है कि ट्रंप इससे निपटने में दिलचस्पी ले रहे हैं। उन्होंने सुझाव दिया है कि संघ सरकार को शुल्कों से मिल रही रकम करदाताओं को 2,000 डॉलर के चेक के रूप में भेजी जा सकती है। अगर यह अदालतों के फैसले से पहले होता है तो इससे अमेरिका का वित्तीय गणित गंभीर रूप से जटिल हो जाएगा क्योंकि शुल्क संबंधी आदेश रद्द होने पर उन कंपनियों को भी मुआवजा देना होगा जिन्होंने उनका (शुल्कों) का भुगतान किया था।

दो बातें एक साथ स्पष्ट हैं। पहली बात, ट्रंप अपनी आधारभूत मान्यता से पीछे नहीं हटेंगे कि कुछ शुल्क दरें (कम से कम 15 या 20 फीसदी) उचित हैं। दूसरी बात, वह शायद विशिष्ट उत्पाद श्रेणियों या देशों पर विशेष दरें समायोजित करने के लिए तैयार हो जाएंगे ताकि आर्थिक या भू-राजनीतिक व्यवधान कम किए जा सकें। इसका मतलब है कि भारत को विशेष रूप से अमेरिका के साथ एक व्यापार समझौता करने के अपने प्रयास जारी रखने चाहिए जिससे उसके निर्यात पर वर्तमान 50 फीसदी शुल्क कम हो जाएगा। भारत को ट्रंप को उसी रूप में स्वीकार करना होगा जो वह हैं और उनका मिजाज बदलने की उम्मीद छोड़ देनी होगी। अच्छी बात यह है कि राष्ट्रपति स्वयं इस संबंध में सकारात्मक बयान दे चुके हैं। उन्होंने पिछले सप्ताह भारत में नए राजदूत को शपथ दिलवाई। उन्होंने कहा, 'हम भारत के साथ एक समझौते पर काम कर रहे हैं, जो पहले से बहुत अलग है।' उन्होंने बाद में कहा कि 'किसी बिंदु पर, हम शुल्क नीचे लाएंगे।'

हालांकि ये उत्साहजनक संकेत हैं लेकिन अगला कदम भारतीय वार्ताकारों को उठाना होगा। राष्ट्रपति को किसी न किसी प्रकार की स्पष्ट बढ़त देनी होगी जिसे वह उस समय अपने मतदाताओं के बीच भुना सकें जब उन्हें ऐसा करने की जरूरत पेश आएगी। भारतीय अधिकारी विशेष रूप से कृषि और दुग्ध उत्पादों पर किसी तरह का समझौता करने के लिए तैयार नहीं हैं मगर सच्चाई यह है कि इन क्षेत्रों में कुछ रियायतें अमेरिका को देनी होंगी। ऑस्ट्रेलिया के साथ पिछले समझौतों और न्यूजीलैंड के साथ चल रही चर्चा से यह स्पष्ट है कि कुछ ऐसे समझौते हैं जिन पर काम किया जा सकता है। भारत इस बिंदु पर सख्त रुख नहीं अपनाकर सकारात्मक परिणाम की उम्मीद नहीं कर सकता है।

भारतीय वार्ताकार इस तथ्य से खुशी का अनुभव कर सकते हैं कि व्यापार तनाव के कारण अभी तक आर्थिक संकेतक कमजोर नहीं हुए हैं। जैसा कि इसी पृष्ठ पर अजय शाह ने भी अपने स्तंभ में कहा है कि अप्रैल में लगे पहले चरण के ट्रंप के शुल्कों के बाद अमेरिकी आयात बास्केट में भारत की हिस्सेदारी वर्ष की शुरुआत की 3.7 फीसदी से घटकर जुलाई में 3.1 फीसदी रह गई। इतना तो प्रबंधित किया जा सकता है।

मगर यह आंकड़ा उस 50 फीसदी शुल्क प्रभाव नहीं दिखाता जिसकी घोषणा बाद में की गई थी। अमेरिकी बाजारों पर निर्भर क्षेत्रों से हाल में आईं खबरें अधिक चिंताजनक हैं। उदाहरण के लिए 'द इकनॉमिक टाइम्स' ने बताया है कि खिलौना निर्यातकों के अनुसार पिछले साल की तुलना में त्योहारों के दौरान ऑर्डर लगभग आधे कम हो गए हैं। 50 फीसदी शुल्क जितने लंबे समय तक जारी रहेगा उन श्रम-आधारित क्षेत्रों में उतना ही अधिक व्यवधान होगा जो अमेरिकी व्यापार पर निर्भर हैं।

सरकार के कदम स्पष्ट हैं। इसे अमेरिका के साथ बातचीत पर जल्द से जल्द आगे बढ़ना चाहिए। इसे निर्यातकों द्वारा अनुपालन और नियामक बोझ कम करने की मांगों के प्रति भी उत्तरदायी होना चाहिए। उदाहरण के लिए गुणवत्ता नियंत्रण आदेश आंशिक रूप से वापस लेने का सिलसिला जारी रहना चाहिए और इसका लाभ अधिक से अधिक क्षेत्रों को भी मिलना चाहिए। अंत में, इसे निर्यातकों के लिए अतिरिक्त बाजार खोलने चाहिए। अमेरिकी व्यापार साझेदारी पर ध्यान देने के बीच अगले साल की शुरुआत से पहले यूरोपीय संघ के साथ व्यापार समझौते को निष्कर्ष पर पहुंचाने से भी पीछे नहीं रहना चाहिए।

# मास मीडिया की लगातार घटती जगह

**किसी** पब में डांस हो रहा हो, घर में कोई पार्टी हो या देश में कहीं भी शादी समारोह हो, आपको उसमें 80-90 के दशक से लेकर 2019 तक के गाने सुनने को मिलते हैं। किसी कार्यक्रम में 1998 में आई फिल्म 'दिल से' का गीत 'छैंया छैंया' बजते ही आधे लोग शाहरुख खान की तरह नाचने की मुद्रा में आ जाते हैं। दो वर्ष पहले केरल के कोवलम में मेरे समेत 150 लोग 'चुरा के दिल मेरा' (मैं खिलाड़ी तू अनाड़ी, 1994) से लेकर 'लुंगी डांस' (चेन्नई एक्सप्रेस, 2013) तक के गानों पर भोर तक नाचते रहे। यह तब था जबकि डीजे को बताया भी नहीं गया था कि इस मराठी-मलयाली शादी में कौन से गाने बजाने हैं।

यह लोकप्रियता की हमारी सामूहिक स्मृति है जो पूरे अनुभव को मजेदार बनाती है। यह बात फिल्मों और टीवी शो के लिए भी सही है। 'बुनियाद', 'क्योंकि सास भी कभी बहू थी' या 'तिरुमति सेल्वम' आदि को लाखों लोगों ने देखा और अगले दिन घरों और दफ्तरों में इनकी चर्चा की। यही बात 'शोले' (1975), 'दलपति' (1991) या 'दंगल' (2016) जैसी अन्य फिल्मों के बारे में भी कहा जा सकता है। खूब लोकप्रिय हो जाने वाली फिल्में और गाने पॉपुलर कल्चर का हिस्सा बन जाते हैं। उन्हें दोस्तों बीच, किसी महफिल में और सोशल मीडिया में आसानी से पाया जा सकता है। 'पुष्पा, आई हेट टियर्स' (अमर प्रेम, 1972) से लेकर 'कितने आदमी थे?'(शोले, 1975) और 'जा सिमरन जा, जी ले अपनी जिंदगी' (दिलवाले दुल्हनिया ले जाएंगे, 1995) तक पॉपुलर कल्चर की भाषा हमेशा फिल्मों, संगीत और टेलीविजन से निकली है।

ये हर लिहाज से मास मीडिया यानी जनसंचार का उदाहरण हैं। गत 24 अक्टूबर को पीयूष पांडेय के निधन और दो नवंबर को शाहरुख खान के जन्मदिन ने एक बार फिर इस बात को रेखांकित किया।

शाहरुख खान का जन्मदिन एक राष्ट्रीय घटनाक्रम बन गया है। हजारों लोग उनके घर के बाहर उनकी एक झलक के लिए इंतजार करते हैं। विज्ञापनों से लेकर पूरा मीडिया उनके जन्मदिन के जश्न में शामिल हो जाता है। इसका अधिकांश हिस्सा उस मनोरंजन का प्रतिबिंब है जो उनके सिनेमा ने दिया है। उनकी लगभग 100 फिल्मों में से 'कभी हां कभी ना', 'चक दे इंडिया', 'कल हो ना हो' जैसी कई केवल ब्लॉकबस्टर ही नहीं थीं, बल्कि उन्होंने यह भी परिभाषित किया कि हम प्रेम, दोस्ती, परिवार, देश और अन्य चीजों के बारे में कैसे सोचते हैं। आईएमडीबी रिपोर्ट के अनुसार पिछले 25 वर्षों में भारत की 130 सबसे बड़ी हिट फिल्मों में से 20 खान की हैं। उनका प्रशंसक वर्ग, जिसका अनुमान वैश्विक स्तर पर 3.5 अरब लोगों का है, जर्मनी, ब्रिटेन और ऑस्ट्रेलिया सहित कई देशों के दर्शकों तक फैला हुआ है।

**मीडिया मंत्र**

वनिता कोहली-खांडेकर

खान को सुपरस्टारों की श्रृंखला में आखिरी माना जाता है और यह सही भी है। अब किसी के लिए भी सुपरस्टार बनना लगभग नामुमकिन है। इसलिए नहीं क्योंकि उनमें प्रतिभा की कमी है बल्कि इसलिए क्योंकि अब मास मीडिया नहीं है। मीडिया अब लाखों अलग-अलग रील्स और इन्फ्लुएंशर्स में बंट चुका है जिसका नियंत्रण चुनिंदा प्लेटफॉर्म्स मसलन गूगल, मेटा या एमेजॉन के हाथों में रहता है। अब सामूहिक मनोरंजन का दौर खत्म सा हो चला है। अब हमारा स्क्रीन को देखने का समय रील्स, मीम्स, मैसेज और वेब सिरीज में बंट चुका है। यह सब भी ज्यादातर फोन पर देखा जाता है। यानी हमारा मनोरंजन व्यक्तिगत हो चुका है।

राजेश खन्ना, रजनीकांत या अमिताभ बच्चन सुपरस्टार इसलिए बने क्योंकि हम मास मीडिया के युग में जी रहे थे। खान ने नब्बे के दशक के आरंभ में फिल्मों में काम करना शुरू किया, जब सामूहिक अनुभव ही सफलता को परिभाषित करता था। यही बात पीयूष पांडेय पर भी लागू होती है। जब वे ओगिल्वी में आगे बढ़े, तब टेलीविजन उभार पर था। साल 2019 में अपने चरम पर, टीवी ने 90 करोड़ भारतीयों तक पहुंच बनाई। जो कुछ हम देखते थे, वह चर्चा का विषय बनता था, जिसमें विज्ञापन भी शामिल थे। इसने 'फेविकोल का जोड़' से लेकर 'हर घर कुछ कहता है' और अन्य स्थायी टैगलाइन ने ब्रांड संदेशों को प्रदर्शित करने और दोहराने में मदद की। जब पांडेय का निधन हुआ, तो फेविकोल, अमूल और एशियन पेंट्स ने बड़े-बड़े विज्ञापनों के जरिये श्रद्धांजलि दी। सोचिए, क्या आज कोई एक विज्ञापन-व्यक्तित्व है जो जोमैटो या मिंत्रा जैसे हजारों बड़े विज्ञापनदाताओं के बीच विज्ञापनों का चेहरा बन सके। अब अधिकांश कंपनियां ब्रांड-निर्माण से बचती हैं और 'परफॉर्मेंस मार्केटिंग' को प्राथमिकता देती हैं, जो तात्कालिक परिणामों जैसे क्लिक-थ्रू या बिक्री पर केंद्रित होती है। यह बदलाव इस बात का प्रतिबिंब है कि उपभोक्ता किस दिशा में जा रहे हैं।

टीवी की पहुंच घट रही है। फिलहाल करीब 65 करोड़ लोग टीवी से जुड़े हैं और 52.2 करोड़ लोग ऑनलाइन रहते हैं। उनमें से अधिकांश लोग टीवी पर अलग-अलग चीजें देखते हैं। इसलिए उसका वही समान प्रभाव नहीं पैदा होता। अपने बेहतरीन दिनों में बड़े टीवी शो 15 से 30 करोड़ लोगों तक पहुंचते थे। बड़ी से बड़ी फिल्म थिएटर के जरिये 3 से 10 करोड़ लोगों तक पहुंचती है। टीवी या स्ट्रीमिंग के दर्शक जोड़ दें तो एक हिट फिल्म के लिए यह संख्या 30 करोड़ तक पहुंच सकती है।

एक इन्फ्लुएंसर या क्रिएटर जिसके कुछ लाख फॉलोअर्स हों, वह सोने पर सुहागा है। ऐसे लाखों लोग हैं। उन्हें अपने ब्रांड के अनुरूप जोड़ना ही असली खेल है। अब किसी अभिनेता, फिल्म, विज्ञापन या गीत पर सामूहिक आह नहीं निकलती। यही कारण है कि हम पुरानी साझा स्मृतियों से जुड़ी चीजों में आनंद पाते हैं। शहरी भारत के लिए यह बात खासतौर पर सही है। ग्रामीण भारत पर अभी मास मीडिया का प्रभाव है क्योंकि वहां इंटरनेट की पहुंच कम है और दूरदर्शन अभी भी चल रहा है।

भारतीय बाजार के बाकी हिस्सों में, जहां सामूहिक प्रभाव की कमी है, दोहराई जाने वाली कोई भी चीज बेहद कीमती है। आईपीएल के मीडिया अधिकारों की कीमत पिछले दो सीजनों में तीन गुना हो गई है क्योंकि प्रसारक और टेक कंपनियां उन 30-40 करोड़ लोगों तक पहुंचने के लिए भारी रकम चुकाने को तैयार हैं। दूसरी ओर, लाइव इवेंट्स तेज़ी से बढ़ रहे हैं। शहरी उपभोक्ता साझा अनुभव का एहसास पाने के लिए अच्छा-खासा पैसा खर्च कर रहे हैं। चाहे वह जाकिर खान के किस्सों पर हंसना हो या कोल्डप्ले का कॉन्सर्ट देखना।

मीडिया में मास यानी जन की तलाश जारी है।

## आपका पक्ष

### अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रंप का बदला रुख

ट्रंप के बदले रुख ने अमेरिकी नीति की वास्तविकता उजागर कर दी है। वर्षों से एच-1 बी वीजा पर सख्ती दिखाने वाली प्रशासनिक सोच इसलिए नरम पड़ी है क्योंकि अमेरिकी उद्योगों की प्रतिस्पर्धात्मक बढ़त अब विदेशी टैलेंट पर ही निर्भर है। एक लाख डॉलर की एंट्री फीस जैसी कठोर शर्तों ने कंपनियों को टैलेंट क्राइसिस की ओर धकेल दिया, जिसके दबाव में ट्रंप को अपने कदम पीछे खींचने पड़े। विदेशी छात्रों पर लगी रोक और प्रवासियों के प्रति कठोर रवैया यह दिखाता है कि निर्णय लोकप्रियता आधारित थे, न कि आर्थिक विवेक पर टिके। बदला हुआ रुख स्वीकार करता है कि वैश्विक हुनर और विविध संस्कृतियों के बिना अमेरिका की टेक और शिक्षा व्यवस्था आगे नहीं बढ़ सकती। भारत को भी अपनी स्वाभाविकता को कायम रखते हुए कोई भी फैसला करना चाहिए।

*अमृतलाल मारू, इंदौर*

अमेरिका के राष्ट्रपति डॉनल्ड ट्रंप ने अमेरिका में काम करने वाले पेशेवरों के लिए एच-1बी वीजा नियम कड़े कर दिए थे

### साइबर धोखाधड़ी से बचाव के लिए जागरूकता जरूरी

डिजिटल युग में भारत ने तेजी से तकनीकी प्रगति की है। इंटरनेट उपयोगकर्ताओं की संख्या बढ़ने के साथ ऑनलाइन सुविधाओं का विस्तार हुआ है, लेकिन इसके साथ-साथ साइबर धोखाधड़ी में भी चिंताजनक वृद्धि देखी जा रही है। साइबर धोखाधड़ी में फिशिंग, ऑनलाइन पेमेंट फ्रॉड, सोशल मीडिया हैकिंग, फर्जी ऐप और वेबसाइटों के माध्यम से की जाने वाली ठगी शामिल हैं। सरकार और पुलिस साइबर अपराध रोकने के लिए कई पहल कर रहे हैं। राष्ट्रीय साइबर अपराध रिपोर्टिंग पोर्टल (1930 हेल्पलाइन) की स्थापना इसी दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम है, जहां पीड़ित तुरंत शिकायत दर्ज कर सकते हैं। इसके अलावा, जागरूकता अभियान भी चलाए जा रहे हैं ताकि लोग संदिग्ध संदेशों, लिंक और कॉल से सतर्क रहें। इसके बावजूद साइबर धोखाधड़ी से बचने के लिए लोगों को कुछ महत्त्वपूर्ण सावधानियों का पालन करना चाहिए। लोगों को किसी भी अनजान लिंक पर क्लिक न करना, बैंक विवरण साझा न करना, मजबूत पासवर्ड का उपयोग करना, दो-स्तरीय सुरक्षा सक्षम रखना चाहिए।

*मोहित कुमार, नई दिल्ली*

### शुद्ध हवा में सांस लेने का सभी को अधिकार

दिल्ली में वायु प्रदूषण तमाम कोशिशों के बावजूद कम नहीं हो रहा है। शुद्ध हवा में सांस लेने के अधिकार के लिए लोगों ने सड़कों पर उतर कर विरोध प्रदर्शन भी किया। हर साल स्मॉग और जहरीली हवा लोगों के स्वास्थ्य को प्रभावित कर रही है। बच्चों और वृद्धजनों पर प्रदूषण का ज्यादा असर पड़ रहा है। उच्चतम न्यायालय ने भी बढ़ते वायु प्रदूषण पर सरकार को सख्त निर्देश दिए हैं। इसके बावजूद प्रदूषण का स्तर 400 के आसपास बना हुआ है। वायु प्रदूषण का स्तर कम करने के लिए ग्रैप के चरणों को लागू किया गया है। लोगों को भी अपने स्तर पर प्रदूषण के खिलाफ लड़ाई में शामिल होना चाहिए। इसके लिए लोगों को ऐसे कार्य नहीं करना चाहिए जिससे प्रदूषण बढ़ सके। लोगों को कुछ समय के लिए पेट्रोल-डीजल वाहन चलाने से परहेज करना चाहिए।

*साक्षी सिंह, दिल्ली*

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिज़नेस स्टैंडर्ड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in
पत्र/ईमेल में अपना डाक पता और टेलीफोन नंबर अवश्य लिखें।

## देश-दुनिया

फोटो - पीटीआई

विदेश मंत्री एस जयशंकर ने बुधवार को रूस के येकातेरिनबर्ग और कजान शहर में नए भारतीय वाणिज्य दूतावास का उद्‍घाटन किया। उद्‍घाटन समारोह में रूस के उप विदेश मंत्री आंद्रे रुडेंको और रूस में भारत के राजदूत विनय कुमार भी उपस्थित थे। जयशंकर ने कहा कि वाणिज्य दूतावास के खुलने से भारतीय और रूसी उद्योगों के बीच तकनीकी, वैज्ञानिक, आर्थिक और व्यापारिक सहयोग को मजबूत बनाने में मदद मिलेगी।

https://t.me/AllNewsPaperPaid1

# संपादकीय

"शरणार्थी आतंकवादी नहीं, बल्कि अक्सर आतंकवाद के पहले शिकार होते हैं। -एंटोनियो गुटेरेस

कुख्यात नक्सली कमांडर माडवी हिडमा का मारा जाना देश में माओवादी आंदोलन के लिए अब तक का सबसे बड़ा झटका है। अमूमन किसी बड़े नक्सली नेता के मारे जाने पर कोई दूसरा उसकी जगह ले लेता है, लेकिन अब स्थिति अलग है।

## बड़ी कामयाबी

छत्तीसगढ़ और तेलंगाना की सीमा पर आंध्र प्रदेश के अल्लूरी सीतारामराजू जिले के घने जंगलों में हुई निर्णायक मुठभेड़ में कुख्यात नक्सली कमांडर माडवी हिडमा का मारा जाना देश में माओवादी आंदोलन के लिए अब तक का सबसे बड़ा झटका सिर्फ इसलिए नहीं है, क्योंकि यह नक्सलवाद के इतिहास में सुरक्षाबलों पर किए गए सबसे क्रूर हमलों का रणनीतिकार था, बल्कि इसलिए भी है कि वह एक थके हुए, अप्रासंगिक व अंत की कगार पर खड़े आंदोलन को प्रेरणा दे सकने वाला आखिरी व्यक्ति हो सकता था। हिडमा कोई साधारण माओवादी नहीं था। करीब तीन दशकों तक उसका नाम बस्तर के जंगलों में एक मिथक की तरह घूमता रहा। छत्तीसगढ़ के सुकमा जिले के पुवर्ती गांव में जन्मा यह आदिवासी युवक 1990 के दशक में संगठन से जुड़ा और तेजी से ऊपर उठा। यह बस्तर क्षेत्र का इकलौता आदिवासी था, जो सेंट्रल कमेटी तक पहुंचा। उसके नाम 26 से अधिक बड़े हमले दर्ज हैं, जिनमें सैकड़ों जवानों और निर्दोषों की जान गई। यह सफलता इसलिए भी ऐतिहासिक है, क्योंकि केंद्रीय गृह मंत्री अमित शाह ने सुरक्षा अधिकारियों को हिडमा को खत्म करने के लिए 30 नवंबर तक का समय दिया था, लेकिन यह कार्य डेडलाइन से 12 दिन पहले ही पूरा कर लिया गया। हाल ही में, सुरक्षाबलों द्वारा एक अन्य बड़े इनामी नक्सली प्रमुख बसवराजू के मारे जाने के अलावा भी पिछले कुछ महीनों में कई नामचीन नक्सली या तो मारे जा चुके हैं या आत्मसमर्पण कर चुके हैं। अब बचे-खुचे नक्सली सीधे टकराव से बचते हुए छोटे-छोटे समूहों में बिखर सकते हैं। इससे पैदा हुई युद्धविराम जैसी स्थितियों में उन पर बातचीत के लिए दबाव बनाया जा सकता है। नक्सलवादी इतिहास बताता है कि किसी बड़े नक्सली नेता के मारे जाने पर कोई दूसरा उसकी जगह ले लेता है, लेकिन अब स्थिति अलग है। देश से नक्सलवाद के खात्मे के लिए गृह मंत्रालय की तरफ से मार्च, 2026 की समयसीमा निर्धारित की गई है, लेकिन जिस तरह से

माडवी हिडमा के खात्मे के अगले ही दिन सात और नक्सली ढेर व करीब 50 गिरफ्तार किए जा चुके हैं, उसे देखते हुए देश में नक्सलवाद का अंत भी समयसीमा से पहले हो जाए, तो हैरत नहीं होनी चाहिए। हालांकि, नक्सलवाद से मुक्ति नजदीक होने के उत्साह में यह नहीं भूला जाना चाहिए कि यह एक सामाजिक-आर्थिक समस्या अधिक थी, जिसे बंदूक की नली से जोड़कर हिंसक बना दिया गया। ऐसे में यह जरूरी है कि देश में नक्सलवाद के खात्मे से उपजे शून्य को स्कूल, सड़कों और अस्पताल जैसी जन कल्याणकारी गतिविधियों से भरा जाए, ताकि भविष्य में ऐसे किसी आंदोलन की जरूरत ही न रह जाए।

## वाम और दक्षिण में उलझा यूरोप

**यूरोपीय राजनीति में 'फार राइट' फिर 'सेंटर लेफ्ट' और फिर....का सिलसिला एक पैटर्न बनता दिख रहा है। ऐसे में, प्रश्न उठता है कि आप्रवासियों जैसे मुद्दे वास्तविक हैं या फिर केवल फोबिया। 2015 में शार्ली हेब्दो के दफ्तर में कत्लेआम या विएना के आतंकी हमले सिर्फ फोबिया के उदाहरण पेश नहीं करते।**

वैचारिक और तकनीकी विकास के अर्थों में आज के यूरोप को देखने की कोशिश करते समय न जाने वह यूरोप क्यों नहीं दिखता, जो पुनर्जागरण के उस बुद्धिमत्तावाद से निर्मित हुआ था, जिसमें एक 'नए मानव'(न्यू मैन) और एक 'नई दुनिया' (न्यू वर्ल्ड) की खोज की ताकत थी। शायद उसी के दम पर उसने पूरी दुनिया पर कई सदियों तक शासन किया। लेकिन अब वही यूरोप द्वंद्वों का शिकार दिख रहा है। उसमें आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के युग में नई प्रतिस्पर्धा की महत्वाकांक्षा तो दिख रही है, लेकिन वह 'फार राइट' (दक्षिणपंथ) और 'सेंटर लेफ्ट' (मध्य मार्ग) के संघर्ष में उलझ गया है। सच में यह विचार करने का समय है कि उस कालखंड में जब बद्दुओं के (प्राचीन संदर्भों में अरब) देश दुनिया के टैलेंट को आकर्षित करने के लिए 'टैलेंट अट्रैक्शंस एंड रिटेंशन' जैसे मंत्रालयों का गठन कर रहे हैं, तब यूरोप के देश प्रवासन पर लेफ्ट-राइट कर रहे हैं।

रहीस सिंह
वैदेशिक मामलों के जानकार

यूरोप से प्रकाशित एक अखबार को पढ़ते समय एक संदर्भ में आयरिश लेखक डब्ल्यू बी यीट्स की पुस्तक *द सेकंड कमिंग* की उन पंक्तियों का जिक्र मिला, जिनमें आज भी यूरोप के विश्लेषक सूत्र खोजने की कोशिश कर रहे हैं, विशेषकर तब, जब वहां कोई राजनीतिक संकट उभर कर सामने आता है। इसके साथ ही, उनकी कविता की एक पंक्ति और लिखी थी, जिसमें कहा गया है-'सबसे अच्छे लोग अपने विश्वास को खो चुके हैं और सबसे बुरे लोग पूरी ऊर्जा से भरे हुए हैं।' तो क्या सच में आज के यूरोप की राजनीति का यही हाल है? यह बात तब भी खटकी थी, जब पूरे यूरोप में 'फार राइट' यानी दक्षिणपंथ की बयार तेज थी, लेकिन ब्रिटेन के नव उद्योगवादी और नव बाजारवादी कंजर्वेटिव समाजवाद के थपेड़ों को झेल नहीं पाए थे।

यह तो सभी ने देखा ही होगा कि जिस ब्रिटेन के लोग कुछ साल पहले तक सेंटर लेफ्ट लेबर पार्टी के 'क्वासी नेशनलिस्ट' और 'क्वासी लिबरल' एप्रोच को खारिज कर रहे थे, वही आखिर में कंजर्वेटिव्स के

राष्ट्रवाद से मुंह मोड़ लिए, आखिर क्यों? वे ठीक 180 डिग्री कैसे घूम गए? यही सवाल अब नीदरलैंड को देखकर भी किया जा रहा है, जहां मतदाताओं ने, जो मुख्यधारा के दलों से निराश और क्रोधित थे, उन उम्मीदवारों की ओर रुख किया, जो सिस्टम-विरोधी छवि पेश करते हैं, जिसके कारण अतिवादी शक्तियां वोट बटोर ले जाती हैं। लेकिन जब फार राइट्स (दक्षिणपंथी) वाले दल सत्ता में आए, तो जनता कुछ ही दिनों में उनसे दूर होने लगी। इस मोहभंग का असल कारण क्या है? 'सेंटर लेफ्ट' (वाम मार्गी) का लंबा अनुभव और वृहत आधार, अथवा कुछ और? आखिर वे फिर से सेंटर लेफ्ट की ओर क्यों लौटे?

ध्यान रहे कि नीदरलैंड में गीर्ट वाइल्डर्स के नेतृत्व वाली 'फ्रीडम पार्टी' को 2023 में इसलिए अवसर मिला, क्योंकि डच जनता परंपरागत मध्यमार्गी (सेंटर लेफ्ट) राजनीति से थक चुकी थी। लेकिन वाइल्डर्स की पार्टी के पास वास्तविक समस्याओं-जैसे आप्रवासन और आवास संकट, का कोई ठोस समाधान नहीं था। परिणाम यह हुआ कि डच मतदाता रॉब जेटेन जैसे युवा की डेमोक्रेटिक 66 (डी 66) की ओर मुड़ गए। रॉब जेटेन ने गीर्ट वाइल्डर्स की उस राजनीति को भी प्रभावी चुनौती दे दी, जो आप्रवासन और इस्लाम-विरोध पर टिकी थी। ऐसा क्यों हुआ? क्या आप्रवासन यूरोप के लिए कोई प्रभावी या चिंताजनक विषय नहीं है? काफी समय पहले मेनहाइम (जर्मनी) से प्रकाशित होने वाले दैनिक *मेनहाइमर मॉर्गन* ने लिखा था-जर्मनी और यूरोप में बड़े पैमाने पर हो रहा आप्रवासन सिर्फ राष्ट्रीय समस्या नहीं है, बल्कि यूरोप में लोगों की एकजुटता को भी खतरे में डाल रहा है। तो यह प्रश्न भी उठा कि यह संकट वास्तविक है या फिर महज एक फोबिया है?

यूरोप के कुछ उदाहरण बताते हैं कि फोबिया और चिंता के बीच एक बड़ा फासला है। 2015 में शार्ली हेब्दो के दफ्तर में कत्लेआम किसी फोबिया का उदाहरण पेश नहीं करता और न ही सैमुअल पैटी का सिर कलम। विएना के आतंकी हमले और यूरोप के अन्य भागों में हो रही ऐसी घटनाएं, फोबिया नहीं हो सकतीं, बल्कि यूरोपीय मन पर गहरा प्रभाव छोड़ने वाली घटनाएं हैं। संभवतः, यूरोप में 'फार राइट' का उभार इसी की देन है। ध्यान रहे कि पोप बेनेडिक्ट 16वें ने काफी पहले जर्मनी के एक विश्वविद्यालय में भाषण देते हुए कहा था कि यूरोप अपने भविष्य में आस्था खो रहा है, क्योंकि वह खुद को इतिहास से मिटाने के रास्ते पर चल पड़ा है। लेकिन कब से? उससे कुछ पहले से या बहुत पहले से? जिस चिंता से पोप बेनेडिक्ट 16वें ग्रस्त थे, वही चिंता कभी डोनाल्ड ट्रंप व्यक्त करते दिखे, तो कभी इमैनुएल मैक्रों या अन्य यूरोपीय नेता। लेकिन हुआ क्या? आखिर पूरे यूरोप और अमेरिका में 'फार राइट्स' प्रायः व्यक्तिवादी क्यों दिखाई देते हैं? पर्सनालिटी कल्ट उनके लिए प्रमुख क्यों है? यह उनकी ताकत है या उनकी कमजोरी का प्रतीक? क्या अभी तक वे उस विचार का विकल्प तलाश पाए हैं, जिसने यूरोप से लेकर यूरोपीय यूनियन तक का निर्माण किया?

हालांकि, यह बात हंगरी के ओर्बन, पोलैंड के डूडा, इटली की मेलोनी और नीदरलैंड के वाइल्डर्स के विषय में अलग तरह से कह सकते हैं, क्योंकि ये सभी चाहते हैं कि यूरोप अपने मूल में ईसाई बने, लेकिन उसके मानदंड और नियम सभी के लिए एकसमान हों। परंतु कैथोलिक, प्रोटेस्टेंट, कैल्विनवादी, लूथेरियन, ऑर्थोडॉक्स आदि के अंदर मौजूद द्वंद्व उन्हें सभ्यतागत एकता से दूर ले जाते हैं। मतदाताओं द्वारा उन्हें चुनने और कुछ समय बाद ठुकराने का कारण शायद यही है। इसका एक कारण शायद यह भी है कि एक संस्थान के रूप में यूरोपीय संघ पर अभी 'सेंटर लेफ्ट' का प्रभाव बना हुआ है और वह एक ऐसे संविधानेत्तर संगठन के रूप में काम कर रहा है, जो किसी के प्रति उत्तरदायी नहीं है।

फिलहाल यूरोपीय राजनीति में 'फार राइट' फिर 'सेंटर लेफ्ट' और फिर....का सिलसिला एक पैटर्न बनता दिख रहा है, कारण कुछ भी हों। नीदरलैंड, ऑस्ट्रिया, पोलैंड, इटली, हंगरी और स्लोवाकिया जैसे देश इन्हीं लहरों के सहारे आगे बढ़ रहे हैं। लेकिन वहां अभी किसी 'अपराजेय संयोजन' की संभावना पूरी होती नहीं दिखी।

## जीवन धारा

हेनरी थॉमस हैम्बलिन

सफलता व असफलता का मूल इन्सान के चरित्र में छिपा होता है। जीवन की यात्रा में असली विजेता वही है, जो किसी भी परीक्षा के लिए तैयार रहे और सफलता की चमक में भी अपनी मानवता को जीवित रखे।

### विजेता वही, जो हर परीक्षा के लिए तैयार रहे

*यह दुनिया सफलता को तभी स्वीकार करती है, जब वह किसी सार्थक उद्देश्य को पूरा करे, यानी जब वह समाज को बेहतर बनाए, लोगों के जीवन में समृद्धि लाए और जनहित में अपना योगदान दे। चाहे हमारे कर्मक्षेत्र का दायरा छोटा ही क्यों न हो, यदि हम अपनी कमजोरियों पर विजय पाएं, सही राह पर चलते हुए दूसरों के जीवन में रोशनी भरें, और अपने रोजमर्रा के कार्यों को आवश्यकता से बेहतर करने का प्रयास करें, तो निस्संदेह हमारा जीवन सफल माना जाएगा। और यदि जीवन के अंत में हम कृतज्ञता से भरकर यह महसूस कर सकें कि हमने अपने समय, अवसरों और जीवन का सर्वोत्तम इस्तेमाल किया, तो यही सच्ची सफलता है।*

*लेकिन कुछ लोग सफलता को केवल धन और शोहरत तक सीमित कर देते हैं। ऐसे लोग भले ही बाहरी रूप से सफल दिखते हों, लेकिन वे अंततः एक असफल इन्सान ही साबित होते हैं, क्योंकि ऐसे लोग धन तो कमा लेते हैं, पर एक समय के बाद उन्हें एहसास होता है कि पैसे से कभी भी असली शांति या संतुष्टि नहीं खरीदी जा सकती। उनकी कामयाबी बाहर से तो सुनहरी दिखती है, लेकिन भीतर से खोखली और महंगी होती है, जिसके बदले वे जीवन का असली रस खो देते हैं। एक महान विद्वान ने कहा था कि यदि मनुष्य संपूर्ण संसार भी जीत ले, पर अपनी आत्मा खो दे, तो उसे क्या लाभ? यदि वह धन की लालसा में अपने सुख, अपने स्वास्थ्य, अपनी संवेदनशीलता, परिवार की मधुरता, प्रकृति की सुंदरता और जीवन का आनंद खो दे, तो उसकी जीत भी पराजय बन जाती है।*

*जो व्यक्ति जीवन में बिना दिशा के भटकता रहता है, और बेहतर बनने का प्रयास ही नहीं करता, वह नागरिक कहलाने के योग्य नहीं है। यदि इन्सान को इस उपाधि के योग्य बनना है, तो उसे निरंतर प्रयास करते हुए उन्नति पाने को अपना सिद्धांत बनाना होगा। दरअसल, सफलता व असफलता का मूल इन्सान के चरित्र में छिपा होता है। केवल वही व्यक्ति जीवन की कठोर चुनौतियों का सामना कर सकता है, जिसकी आत्मा पवित्र हो, संकल्प मजबूत हो और चरित्र अडिग हो। ऐसे व्यक्ति को जीवन के हर मोड़ पर कठिनाइयों की परीक्षा देनी पड़ती है। यह जरूरी भी है, क्योंकि कठिनाइयां कमजोर इच्छाशक्ति वाले लोगों को अलग कर देती हैं, और वही लोग आगे बढ़ते हैं, जिनमें विश्वास, साहस, धैर्य, दृढ़ता, प्रसन्नता और चरित्रबल का प्रकाश प्रबल होता है।*

*याद रखें, जीवन की यात्रा में विजेता वही है, जो हर परीक्षा के लिए तैयार रहे और सफलता की चमक में भी अपनी मानवता को जीवित रखे, क्योंकि यदि मनुष्य स्वयं पर इतना केंद्रित हो जाए कि उसका हृदय कठोर और निर्दयी बन जाए, तो यह असफलता से ज्यादा भयानक पतन है। सच्ची सफलता वही है, जो आत्मा के साथ संसार को भी समृद्ध करे।*

### अपने मूल्यों पर अडिग रहें

सूत्र

*अक्सर हम कामयाबी को केवल धन-संपत्ति या शोहरत से जोड़कर देखते हैं, लेकिन असली सफलता तो उससे कहीं ऊपर है। यह जीवन के हर मोड़ पर उठ खड़े होने की क्षमता है, चुनौतियों को अवसर में बदलने की हिम्मत है, और अंतिम सांस तक अपने उद्देश्य, चरित्र और मूल्यों पर अडिग रहने का नाम है।*

## दूसरा पहलू

शेन्जेन स्थित लॉनवी बायोसाइंसेज के अनुसार, 150 साल तक जीना ख्वाब नहीं, बल्कि हकीकत भी हो सकता है।

### अंगूर के बीज में छिपा है 150 साल जीने का राज

**कुछ** समय पहले, चीन के सरकारी टेलीविजन पर एक बातचीत में राष्ट्रपति शी जिनपिंग और उनके रूसी समकक्ष को यह चर्चा करते सुना गया कि इन्सान 150 वर्ष या उससे अधिक समय तक जीवित रह सकता है। इस बातचीत को सुनकर भले ही कई लोगों को हैरत हो, लेकिन चीन के शेन्जेन स्थित लॉनवी बायोसाइंसेज की प्रयोगशाला के लिए यह कोई आश्चर्य की बात नहीं थी। कंपनी के सीटीओ ल्यू किंगहुआ का मानना है कि 150 साल तक जीना अब ख्वाब नहीं, भविष्य की हकीकत है। उन्होंने यह भी कहा कि अगले पांच से दस वर्षों में किसी को भी कैंसर नहीं होगा। लॉनवी ने अंगूर के बीजों के अर्क में पाए जाने वाले तत्व प्रोस्यानिडिन सी1 (पीसीसी1) पर आधारित एंटी-एजिंग गोलियां विकसित की हैं, जो कोशिकाओं को स्वस्थ रखती हैं। उनका दावा है कि ये गोलियां इन्सान की उम्र 100 से 120 वर्ष तक बढ़ा सकती हैं। कंपनी के सीईओ जिको का कहना है कि यह सिर्फ एक गोली नहीं, बल्कि जीवन का अमृत है। 2021 में *नेचर मेटाबोलिज्म* में प्रकाशित एक अध्ययन में पाया गया कि पीसीसी1 का जिन चूहों पर प्रयोग किया गया, उनकी उम्र 9.4 फीसदी और उपचार शुरू होने के बाद उनका जीवनकाल 64.2 प्रतिशत तक बढ़ गया। हालांकि, बाद में डाटा में कुछ त्रुटियों की बात सामने आई, पर कई अन्य अध्ययनों ने इस खोज का समर्थन किया। अमेरिकी विशेषज्ञ डेविड बार्जिलाई के अनुसार, 'जो चूहों पर काम करता है, जरूरी नहीं कि वह हमेशा इन्सानों पर भी असर करे'। चीन अब दीर्घायु शोध को संस्थागत और नीतिगत स्तर पर गंभीरता से ले रहा है। हार्वर्ड मेडिकल स्कूल के प्रोफेसर वदीम ग्लैडिशेव के अनुसार, 'कुछ वर्ष पहले तक चीन इस क्षेत्र में बहुत पीछे था, पर अब उसने जबर्दस्त प्रगति की है।' चीन की सरकार ने भी इस क्षेत्र को राष्ट्रीय प्राथमिकता दी है। *पीपुल्स डेली* के मुताबिक, चीन की औसत आयु अब 79 वर्ष हो गई है, जो वैश्विक औसत से पांच वर्ष अधिक है, हालांकि यह अभी भी जापान से पीछे है। टाइम पाई के सह-संस्थापक गान यू कहते हैं कि पहले दीर्घायु की चर्चा सिर्फ अमीर अमेरिकियों में होती थी, लेकिन अब चीनी भी इसमें निवेश कर रहे हैं। जीवन के अमृत की खोज, जिसे आज पीटर थील जैसे अमेरिकी अरबपति आगे बढ़ा रहे हैं, चीन में दो हजार साल पुरानी परंपरा है, जिसकी शुरुआत सम्राट किन शी हुआंग ने की थी। चीन अब इस क्षेत्र में तेजी से प्रगति कर रहा है।

एंड्रयू हिंगिस

लॉनवी का दावा है कि उसने अंगूर के बीजों से पीसीसी1 नामक ऐसी गोलियां बनाई हैं, जो इन्सानों की उम्र 100-120 साल बढ़ा सकती हैं।

*नेचर मेटाबोलिज्म* में प्रकाशित एक अध्ययन में पाया गया कि पीसीसी1 का जिन चूहों पर प्रयोग किया गया, उनकी उम्र 9.4 फीसदी और उपचार शुरू होने के बाद उनका जीवनकाल 64.2 प्रतिशत तक बढ़ गया।

## आंकड़े

### भारत और तपेदिक

दुनिया भर में तपेदिक (टीबी) के मामलों में सबसे तेज गिरावट के बावजूद भारत कुल वैश्विक मामलों के 25 फीसदी बोझ के साथ शीर्ष पर है।

| | |
|---|---|
| इंडोनेशिया | 10.0 |
| फिलीपींस | 6.8 |
| चीन | 6.5 |
| पाकिस्तान | 6.3 |
| नाइजीरिया | 4.8 |

आंकड़े टीबी के वैश्विक मामलों में देशों की हिस्सेदारी के, प्रतिशत में। | स्रोत : ग्लोबल टीबी रिपोर्ट 2025 (डब्ल्यूएचओ)

रामकृष्ण परमहंस के विरुद्ध शिकायतों का अंबार लग चुका था, लेकिन उनके शब्दों ने शिकायतकर्ताओं को मौन कर दिया। वे समझ गए कि यह सच्चा भक्त है।

### मां का सच्चा भक्त

**एक** समय की बात है। दक्षिणेश्वर के काली मंदिर में रामकृष्ण परमहंस को पुजारी नियुक्त किया गया। उनका वेतन बीस रुपये मासिक तय हुआ। अभी पंद्रह दिन भी नहीं बीते थे कि उनके विरुद्ध शिकायतों का अंबार लग गया। कोई बोला, 'यह कैसा पुजारी है, जो पहले स्वयं भोग चखता है, फिर मां को लगाता है।' किसी ने आरोप लगाया कि वह फूल सूंघकर देवी के चरणों में चढ़ाते हैं।

वह मंदिर कमेटी के सामने पेश हुए। कमेटी के एक सदस्य ने पूछा, 'क्या यह सच है कि तुम फूल सूंघकर मां को चढ़ाते हो?' रामकृष्ण जी सहज भाव से मुस्कराए और बोले, 'बिना सूंघे मैं फूल मां को क्यों चढ़ाऊं? पहले देखता हूं कि उसमें सुगंध है भी या नहीं। अगर बदबूदार फूल चढ़ा दिया, तो मां को अच्छा नहीं लगेगा?' फिर दूसरी शिकायत आई, 'तुम भोग चखकर देवी को चढ़ाते हो?'

रामकृष्ण जी ने जवाब दिया, जी, मेरी मां भी ऐसा ही किया करती थीं। जब कोई चीज बनाती थीं, तो पहले खुद चखकर देख लेती थीं कि वह ठीक है या नहीं और उसके बाद ही मुझे खाने को देती थीं। मैं भी तो मां का बच्चा हूं। भक्त जो भोग लाते हैं या जो मैंने बनाया है, पहले मैं खाकर देखता हूं कि वह मां को देने लायक है या नहीं। अगर खराब निकला, तो मां को कैसे खिलाऊं? उनके इन सीधे-सादे और प्रेमपूर्ण शब्दों ने सबको मौन कर दिया। कमेटी के सदस्य और बाकी लोग निरुत्तर हो गए और समझ गए कि वह मां के सच्चे भक्त हैं।

अंतर्यात्रा
संकलित

## आज का इतिहास

### पॉली उमरीगर ने भारत की तरफ से टेस्ट क्रिकेट में बनाया पहला दोहरा शतक

भारत में क्रिकेट एक खेल न रहकर जुनून बन गया है। देश में क्रिकेट का इतिहास दो सौ साल से ज्यादा पुराना है, लेकिन भारतीय क्रिकेट टीम ने अपना पहला टेस्ट मैच लॉर्ड्स में 25 जून 1932 को खेला था और भारत टेस्ट क्रिकेट खेलने वाला छठा देश था। आज भले ही क्रिकेट के तीनों स्वरूप में भारत का दबदबा है, लेकिन टेस्ट क्रिकेट में भारत को दोहरा शतक लगाने में 23 वर्ष का समय लगा। पॉली उमरीगर को देश की तरफ से पहला दोहरा शतक जमाने का श्रेय है। विराट कोहली और सचिन तेंदुलकर से पहले सुनील गावस्कर ने अपने बल्ले से भारतीय क्रिकेट के इतिहास में कई रिकॉर्ड उकेरे, लेकिन उनसे पहले ज्यादातर रिकार्ड पॉली उमरीगर के नाम पर थे। उन्होंने पहली बार भारत की तरफ से दोहरा शतक बनाया। उन्होंने 20 नवंबर, 1955 को न्यूजीलैंड के खिलाफ यह कारनामा किया था। 2016 : पीवी सिंधु ने चाइना ओपन सुपर सीरीज में चीन की सुन यू को हराकर पहला सुपर सीरीज ख.िताब जीता। 1984 : अपनी क्रांतिकारी रचनाओं में इंकलाब के साथ रूमानियत का रंग घोलने वाले मशहूर शायर फैज अहमद फैज का निधन। 1985 : माइक्रोसाफ्ट विंडोज 1.0 जारी हुआ।

## ताकि दूध की पौष्टिक प्रतिष्ठा बनी रहे

**एफएसएसएआई द्वारा जारी डेयरी उत्पादों के नमूनों से जुड़े आंकड़े चौंकाने वाले हैं। नीति-नियंताओं को इस ओर ध्यान देना चाहिए।**

मुहम्मद खालिद जीलानी | स्वास्थ्य

भारत में श्वेत क्रांति के जनक अर्थात फादर ऑफ द व्हाइट रिवॉल्यूशन पद्म विभूषण डॉ. वर्गीज कुरियन की जयंती हम इसी महीने 26 नवंबर को 'राष्ट्रीय दुग्ध दिवस' के रूप में मनाएंगे। विश्व खाद्य पुरस्कार व मैग्सेसे से सम्मानित वह दुनिया के सबसे बड़े दुग्ध विकास कार्यक्रम बिलियन लीटर आईडिया (ऑपरेशन फ्लड) के लिए मशहूर हैं।

भारत में दूध का इस्तेमाल बहुत अधिक मात्रा में किया जाता है। हालांकि, इसकी पौष्टिक प्रतिष्ठा के पीछे एक बड़ा सवाल भी छिपा है, जो जनस्वास्थ्य और उपभोक्ताओं के विश्वास के लिए खतरा है। दूध की मात्रा बढ़ाने, पहचान बदलने या गुणवत्ता परीक्षणों

को धोखा देने के लिए उसमें पानी, स्टार्च, डिटर्जेंट, यूरिया, कास्टिक सोडा, माल्ट्रोडेक्सट्रिन और यहां तक कि बेहद खतरनाक रासायनिक पदार्थ मिलाए जाते हैं। दूध में वसा की मात्रा बढ़ाने के लिए इस्तेमाल होने वाले कुछ रसायन, जैसे फॉर्मेलिन और हाइड्रोजन पेरोक्साइड कैंसरकारी माने जाते हैं या लीवर व किडनी जैसे अंगों पर जहरीला प्रभाव डालते हैं। मिलावट का यह अनैतिक व्यवहार, मुनाफे के लिए न केवल दूध के प्राकृतिक पोषण मूल्यों से समझौता करता है, बल्कि उपभोक्ताओं के स्वास्थ्य और जीवन के लिए भी गंभीर खतरा पैदा करता है। भारतीय खाद्य सुरक्षा और मानक प्राधिकरण (एफएसएसएआई) ने राज्यसभा में तीन वर्षों में लिए गए डेयरी उत्पादों के नमूनों से जुड़े आंकड़े जारी किए थे। एक रिपोर्ट के अनुसार, मिलावटी दूध के मामले में उत्तर प्रदेश अव्वल है। दूसरे नंबर पर राजस्थान, तीसरे पर तमिलनाडु और चौथे पर केरल का नाम है। रिपोर्ट में सामने आए ये आंकड़े चौंकाने वाले हैं। उत्तर प्रदेश में मिलावटी दूध बेचने वालों पर कार्रवाई भी हुई। यहां मिलावटखोरी के 1,928 मामले, जबकि तमिलनाडु में 944, केरल में 737, महाराष्ट्र में 191, बिहार में 174 केस दर्ज किए गए। पिछले पांच सालों में उत्तर प्रदेश के कई शहरों में दूध में मिलावट के बड़े मामले पकड़े गए हैं। अमोनिया और यूरिया के कारण खराब हुए स्वाद को बदलने करने के लिए अब स्टार्च मिलाया जाने लगा है, जिससे दूध में मिलावट का स्वाद पता नहीं चलता है। हैरान करने वाली बात यह है कि बिना मशीनों और लैब जांच के मिलावटी दूध की पहचान करना काफी मुश्किल हो गया है। राष्ट्रीय दूध सुरक्षा और गुणवत्ता सर्वेक्षण, 2018 ने हाइड्रोजन पेरोक्साइड, यूरिया और डिटर्जेंट मिले हुए दूध को मानव स्वास्थ्य के लिए असुरक्षित बताया है। आंकड़ों के मुताबिक, भारत में दूध का जितना उत्पादन नहीं होता, उससे ज्यादा खपत होती है। भारत में वर्ष 2013-14 में 14.63 करोड़ टन दुग्ध उत्पादन होता था, जो आज बढ़कर 23.06 करोड़ टन हो गया है। इसमें छह प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से वृद्धि हो रही है, जबकि वैश्विक औसत वार्षिक वृद्धि दो प्रतिशत है। देश में दुग्ध उत्पादन क्षेत्र 68 फीसदी असंगठित है, जिसे सरकारी स्तर पर संगठित बनाने और उत्पादन बढ़ाने के प्रयास जारी हैं। वर्तमान में देश में डेयरी उत्पादन मूल्य 11.16 लाख करोड़ रुपये का है। केंद्रीय पशुपालन एवं डेयरी मंत्रालय के आंकड़ों के मुताबिक, देश में मवेशियों की संख्या भी बढ़ी है, खासकर गायों की संख्या, 19.09 करोड़ से बढ़कर 19.30 करोड़ हो गई है। इसी तरह भैंसों की संख्या 10.8 करोड़ से बढ़कर 11 करोड़ हो गई है। पशुपालन एवं डेयरी उद्योग से 12 करोड़ से अधिक लोगों को रोजगार मिला हुआ है। भारत सहित अमेरिका और यूरोप जैसे कई देशों में दूध में मिलावट करने के लिए सख्त कानून हैं। चीन में तो फांसी की सजा का प्रावधान है।

Special arrangements by Amar Ujala

स्वत्वाधिकारी रामगोपाल इन्वेस्टमेन्ट्स प्रा.लि. के लिए मुद्रक, प्रकाशक समीर माहेश्वरी द्वारा नवभारत प्रेस, नवभारत भवन, प्रेस कॉम्प्लेक्स, जी.ई.रोड, रायपुर से मुद्रित एवं प्रकाशित. प्रधान संपादक : समीर माहेश्वरी, संपादक : राजेश आर. जोशी* (पी.आर.बी. कानून के अनुसार संपूर्ण संपादकीय दायित्व के लिये जिम्मेदार)
■ रायपुर फोन : 0771-4343434, 2535555-66-77, ■ भुवनेश्वर : 0674-2380511/2380518 ■ बिलासपुर : 07752-230591, 407748, 224563 ■ वर्ष 66 ■ अंक 177 (रजि.नं. 13045/59 आरएनआई), पो. रजिस्टर्ड नं. छ.ग./रायपुर संभाग/61/2022-24 ■ भिलाई फोन : (0788) 2294181, 4030655

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

# न्याय नहीं, बदला....शेख हसीना को फांसी देने वाला ऐलान

नई दिल्ली : बांग्लादेश की पूर्व प्रधानमंत्री शेख हसीना को पिछले साल जुलाई-अगस्त में हुई हिंसा के मामले में दोषी ठहराया गया है और उन्हें फांसी की सजा सुनाई गई है। यह फैसला ढाका के इंटरनेशनल क्राइम्स ट्रिब्यूनल में सुनाया गया, जहां मुकदमा चलाने के तरीके पर सवाल उठ रहे हैं। ऐसा लगता है कि इस सुनवाई का मकसद न्याय दिलाना नहीं, बल्कि बदला लेना था। इस फैसले से बांग्लादेश की राजनीतिक और सामाजिक अस्थिरता और बढ़ने की आशंका है। पूर्व गृह मंत्री असदुज्जमां खान कमाल को भी फांसी की सजा मिली है। इस फैसले पर कई सवाल खड़े हो रहे हैं, खासकर इसलिए क्योंकि आरोपियों को ठीक से अपना पक्ष रखने का मौका नहीं मिला। आरोपपत्र इसी साल जून में दाखिल हुआ था और सिर्फ पांच महीने में इतने गंभीर मामले का फैसला आ गया। शेख हसीना की पार्टी अवामी लीग का कहना है कि ट्रिब्यूनल में केवल 20 सुनवाई हुईं। यह बहुत कम समय है इतने बड़े मामले को निपटाने के लिए। बांग्लादेश इस समय एक अंतरिम सरकार के अधीन है, जिसका नेतृत्व मोहम्मद यूनुस कर रहे हैं। सेना का समर्थन होने के बावजूद, वे देश में स्थिरता लाने में कामयाब नहीं हो पाए हैं। उनके सत्ता संभालने के बाद से अल्पसंख्यकों पर 2,000 से ज्यादा हमले हुए हैं। कानून-व्यवस्था की हालत इतनी खराब है कि शेख हसीना पर फैसले से पहले ढाका में 'शूट एंड साइट' (देखते ही गोली मारने) का आदेश जारी करना पड़ा। इसके बावजूद, हिंसक घटनाएं रुकी नहीं। ऐसा लगता है कि कट्टरपंथियों के दबाव में इतिहास को नजरअंदाज किया गया और भारत विरोधी रुख अपनाते हुए पाकिस्तान से हाथ मिला लिया गया। मोहम्मद यूनुस ने देश को एक बहुत ही मुश्किल मोड़ पर ला खड़ा किया है। छात्र आंदोलन का सपना था कि देश में लोगों द्वारा चुनी हुई एक मजबूत सरकार बने, लेकिन यह सपना अब तक पूरा नहीं हुआ है। मोहम्मद यूनुस ने अगले साल फरवरी में चुनाव कराने का ऐलान किया है। हालांकि, इस चुनाव की विश्वसनीयता तब तक संदेह के घेरे में रहेगी, जब तक अवामी लीग सहित सभी राजनीतिक दलों को चुनाव में भाग लेने का समान अवसर नहीं मिलता। फिलहाल, अवामी लीग पर प्रतिबंध लगा हुआ है। शेख हसीना को फांसी की सजा का ऐलान बांग्लादेश की मौजूदा बड़ी समस्याओं से ध्यान भटकाने की कोशिश लग रही है। युवाओं में बेचैनी बढ़ रही है। छात्र समूह पहले ही अंतरिम सरकार से अपनी नाराजगी जाहिर कर चुके हैं। ऐसे में, बांग्लादेश को ईमानदार कोशिशों और असली सुधारों की सख्त जरूरत है। यह फैसला देश की समस्याओं को सुलझाने के बजाय उन्हें और बढ़ा सकता है। उचित सुनवाई न मिलना और इतने कम समय में फैसला आना, इस बात की ओर इशारा करता है कि यह फैसला निष्पक्ष नहीं था। देश को स्थिरता और विकास के लिए एक सही दिशा की आवश्यकता है, न कि बदले की भावना से लिए गए फैसलों की।

# रोजगार बाजार में एआई : पारंपरिक नौकरियों पर आंच के बावजूद नये अवसर

डॉ. जयंतीलाल भंडारी

लेखक जाने माने अर्थशास्त्री हैं

हाल ही में शिक्षा मंत्रालय ने नई पीढ़ी को प्रारंभिक स्तर से ही भविष्य की तकनीक कृत्रिम बुद्धिमत्ता यानी आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस से जोड़ने की सार्थक पहल की है। इसके मद्देनजर आगामी शैक्षणिक सत्र 2026-27 से देशभर के सभी स्कूलों में तीसरी कक्षा से ही एआई पढ़ाने का फैसला किया है। इन दिनों भारत में श्रम शक्ति और रोजगार बाजार, पर आई रिपोर्टों में दो बातें रेखांकित हो रही हैं। एक भारत की नई पीढ़ी के लिए उद्योग-कारोबार की नई जरूरतों और नई डिजिटल अर्थव्यवस्था के तहत एआई की नौकरियों में तेजी से वृद्धि हो रही है। दो, विदेशों में भी भारत की एआई स्किल्स से सुसज्जित प्रतिभाओं के लिए मौके बढ़ रहे हैं।

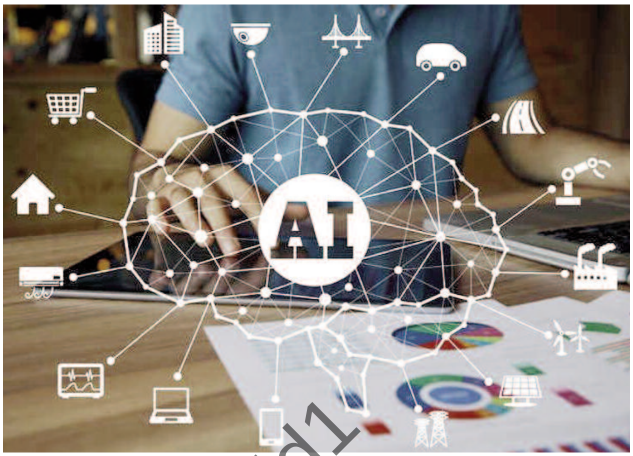


**हाल ही में वित्त मंत्रालय की रिपोर्ट में कहा गया है कि सितंबर, 2025 में एआई और मशीन लर्निंग दक्षता की नौकरियों में 61 फीसदी की वृद्धि हुई है। इनकी मांग आईटी व गैर आईटी क्षेत्र में भी बढ़ रही है। भारत सरकार के श्रम एवं रोजगार मंत्रालय ने राष्ट्रीय, श्रम शक्ति नीति 2025 के मसौदे के तहत स्वीकार किया है कि भारत का श्रम बाजार ढांचागत बदलाव से गुजर रहा है। अब एआई और नए कौशल विकास पर जोर देना जरूरी है। नीति आयोग की रिपोर्ट रोडमैप फॉर जॉब क्रिएशन इन द एआई इकोनॉमी 2025 के मुताबिक एआई के बढ़ते प्रभाव से जहां 2031 तक बड़ी संख्या में पारंपरिक नौकरियां खत्म हो सकती हैं।**

हाल ही में वित्त मंत्रालय की रिपोर्ट में कहा गया है कि सितंबर, 2025 में एआई और मशीन लर्निंग दक्षता की नौकरियों में 61 फीसदी की वृद्धि हुई है। इनकी मांग आईटी व गैर आईटी क्षेत्र में भी बढ़ रही है। भारत सरकार के श्रम एवं रोजगार मंत्रालय ने राष्ट्रीय, श्रम शक्ति नीति 2025 के मसौदे के तहत स्वीकार किया है कि भारत का श्रम बाजार ढांचागत बदलाव से गुजर रहा है। अब एआई और नए कौशल विकास पर जोर देना जरूरी है। नीति आयोग की रिपोर्ट रोडमैप फॉर जॉब क्रिएशन इन द एआई इकोनॉमी 2025 के मुताबिक एआई के बढ़ते प्रभाव से जहां 2031 तक बड़ी संख्या में पारंपरिक नौकरियां खत्म हो सकती हैं, वहीं एआई से जुड़ी करीब 40 लाख नई नौकरियां निर्मित होते हुए दिखाई देंगी।

निस्संदेह इस समय एआई फोकस की वजह से कई कंपनियों में पारंपरिक नौकरियां खत्म होते हुए दिखाई दे रही हैं, लेकिन इतिहास गवाह है कि प्रौद्योगिकी के कारण नौकरियां खत्म नहीं होतीं, बल्कि उसकी प्रकृति बदल जाती है और नई तरह की नौकरियां सृजित होती हैं। वस्तुतः एआई के आगमन ने नौकरी बाजार में क्रांति ला दी है, नए अवसर और भूमिकाएं पैदा की हैं। एआई का प्रभाव कुछ क्षेत्रों तक सीमित नहीं है, बल्कि यह कई उद्योगों और भूमिकाओं को बदल रहा है। भारत की नई पीढ़ी एआई कामों में लगातार अपना योगदान बढ़ा रही है। ओपन एआई के सीईओ सैम आल्ट मैन के मुताबिक एआई के लिए दुनिया में भारत दूसरा सबसे बड़ा बाजार है। गूगल के सीईओ सुंदर पिचाई के मुताबिक भारत एआई के क्षेत्र में दुनिया का नेतृत्व कर सकता है। माइक्रोसॉफ्ट के सीईओ सत्या नडेला के मुताबिक भारत की गणित में दक्ष नई पीढ़ी के लिए एआई में अपार संभावनाएं हैं।

इस समय भारत में एआई पारिस्थितिकी तंत्र तेजी से विस्तार कर रहा है। फॉर्च्यून बिजनेस इनसाइट्स के मुताबिक भारत में एआई का बाजार तेजी से बढ़ रहा है। जहां इस वर्ष 2025 में भारत का एआई बाजार 13.05 अरब डॉलर मूल्य की ऊंचाई पर है, वहीं यह बाजार आकार 2032 में 130.63 अरब डॉलर मूल्य का अनुमानित है। भारत में प्रौद्योगिकी और एआई पारिस्थितिकी तंत्र में 60 लाख से अधिक लोग कार्यरत हैं। देश में 1,800 से अधिक वैश्विक क्षमता केंद्र हैं, जिनमें 500 से अधिक एआई पर केंद्रित हैं। भारत में लगभग 1.8 लाख स्टार्टअप हैं, और पिछले वर्ष शुरू किए गए नए स्टार्टअप में से लगभग 89 फीसदी ने अपने उत्पादों या सेवाओं में एआई का उपयोग किया है। एआई अपनाने वाले अग्रणी क्षेत्रों में औद्योगिक और ऑटोमोटिव, उपभोक्ता वस्तुएं और खुदरा क्षेत्र, बैंकिंग, वित्तीय सेवाएं तथा बीमा और स्वास्थ्य सेवा क्षेत्र शामिल हैं। ये एआई के कुल मूल्य में लगभग 60 प्रतिशत का योगदान करते हैं।

आज एआई को लेकर निवेश की वैश्विक होड़ लगी हुई है। हाल ही में 14 अक्तूबर को दुनिया की प्रमुख डिजिटल कंपनी गूगल के सीईओ सुंदर पिचाई ने विशाखापट्टनम में एक बड़ा डेटा सेंटर और कृत्रिम बुद्धिमता (एआई) हब बनाने का ऐलान करते हुए कहा कि उनकी कंपनी अगले पांच साल में यानी 2030 तक भारत में 15 अरब डॉलर का निवेश करेगी। यह भारत में गूगल का अब तक का सबसे बड़ा निवेश है। निस्संदेह, यह एआई हब भारत के डिजिटल भविष्य में एक माइलस्टोन है। वस्तुतः इस एआई हब से न केवल करीब दो लाख नए रोजगार मौके तैयार होंगे, बल्कि यह टेक इनोवेशन को बढ़ावा देने में भी मदद करेगा।

एआई स्किल्स से प्रशिक्षित भारतीय युवाओं के लिए विदेशों में भी मौके बढ़ रहे हैं। दुनिया की जनसांख्यिकी भारत के पक्ष में खड़ी है। कई देशों में जन्म दर गिर चुकी है और वृद्ध जनसंख्या तेजी से बढ़ रही है। हाल ही में बोस्टन कंसल्टिंग ग्रुप की एक रिपोर्ट ने अनुमान लगाया कि 2030 तक वैश्विक स्तर पर 4.5 से 5 करोड़ श्रमिकों की कमी हो जाएगी। ऐसे में ह्यग्लोबल एक्सेस टू टैलेंट फ्रॉम इंडिया फाउंडेशनह्व का मानना है कि भारत को केवल अपने लिए नहीं, बल्कि दुनिया के लिए भी उच्च कौशल से प्रशिक्षित कार्यबल तैयार करना होगा। यह भी महत्वपूर्ण है कि भारत सरकार अब बड़े पैमाने पर श्रम बल को विदेशों में रोजगार दिलाने की दिशा में कदम उठा रही है। पिछले छह वर्षों में भारत 20 से अधिक देशों के साथ लेबर-मोबिलिटी समझौते कर चुका है। इनमें यूरोप, एशिया और खाड़ी के विकसित देश भी हैं। भारतीय श्रमबल को वैध रास्ते से विदेशों में भेजा जा सके और उनकी सुरक्षित वापसी और पुनर्वास भी सुनिश्चित हो सके। इसी परिप्रेक्ष्य में भारत के विदेश मंत्रालय ने नौ अक्टूबर को ओवरसीज मोबिलिटी बिल 2025 का मसौदा जारी किया है, ऐसे श्रम निर्यात माडल से भारत के एआई स्किल्स से दक्ष लाखों युवाओं को विदेशों में अच्छे रोजगार के मौके प्राप्त होंगे।

# हिड़मा का अंत नक्सल आंदोलन के ताबूत में आखिरी कील

नीरज कुमार दुबे

लेखक वरिष्ठ पत्रकार, स्तंभकार एवं विश्लेषक हैं

भारत के आंतरिक सुरक्षा तंत्र के लिए 2025 एक निर्णायक मोड़ साबित हो रहा है। सीपीआई (माओइस्ट) के सबसे क्रूर, सबसे चालाक और सबसे कुख्यात सैन्य कमांडर मदवि हिड़मा का खात्मा केवल एक ऑपरेशनल सफलता नहीं, यह एक बहुत बड़ा संदेश भी है। यह संदेश है उस अंतिम लड़ाई का, जिसकी समय सीमा खुद केंद्रीय गृह मंत्री अमित शाह ने तय की थी। हिड़मा का अंत 30 नवंबर 2025 की डेडलाइन से ठीक 12 दिन पहले हुआ है। यह डेडलाइन अमित शाह ने सुरक्षा बलों को देते हुए कहा था कि हिड़मा का आतंक उसी दिन तक समाप्त होना चाहिए। हिड़मा की मौत ने यह स्पष्ट संकेत दे दिया है कि देश अब उस विजय रेखा के बेहद करीब है, जिसे गृह मंत्री ने 31 मार्च 2026 तक माओवाद को पूरी तरह समाप्त करने के रूप में परिभाषित किया था।

हम आपको याद दिला दें कि अमित शाह ने पिछले वर्ष घोषणा की थी कि माओवाद को जड़ से उखाड़ फेंकने का समय आ चुका है। उन्होंने बड़ी समय-सीमा देने के साथ-साथ सुरक्षा एजेंसियों को छोटे-छोटे लक्ष्य भी सौंपे थे। जैसे- कहीं किसी इलाके को माओवादियों से पूरी तरह मुक्त कराना, कहीं किसी शीर्ष माओवादी नेता को समर्पण के लिए मजबूर करना और कहीं ऑपरेशनों के माध्यम से संगठन की कमर तोड़ देना। उसी रणनीति का सबसे अहम माइलस्टोन था हिड़मा का निपटारा, जिस पर अमित शाह ने हाल की समीक्षा बैठकों में निजी तौर पर जोर दिया था। हिड़मा का अंत उसी जंगल में हुआ, जहाँ से उसका आतंक शुरू हुआ था।

आज यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि अमित शाह की सख्त, निरंतर और परिणाम-उन्मुख नीतियों ने सुरक्षा बलों में वह गति भर दी, जिसकी भारत को वर्षों से आवश्यकता थी। माओवादी हिंसा जिस रफ्तार से सिमट रही है, वह उनकी रणनीति का प्रत्यक्ष परिणाम है।

कौन था हिड़मा और क्यों था इतना महत्वपूर्ण यदि इस सवाल पर गौर करें तो आपको बता दें कि मदवि हिड़मा माओवादियों की केंद्रीय समिति का सबसे युवा सदस्य था, लेकिन उसकी कुख्याति, क्रूरता और क्षमताएँ उसे संगठन का सबसे खतरनाक सैन्य चेहरा बनाती थीं। वह पीएलजीए की कुख्यात बटालियन नंबर 1 का कमांडर रहा था। वह बस्तर का एकमात्र आदिवासी नेता था जिसे माओवादियों की केंद्रीय समिति में जगह दी गई। छत्तीसगढ़, तेलंगाना और ओडिशा में कई बड़े हमले उसी की योजना का हिस्सा थे। वर्षों से सुरक्षा बल उसकी तलाश में थे, लेकिन वह हमेशा बच निकलता था। पिछले दिनों छत्तीसगढ़ के उपमुख्यमंत्री विजय शर्मा ने उसकी माँ से मिलकर समर्पण की अपील भी करवाई, पर वह तैयार नहीं हुआ। उसकी मृत्यु पर बस्तर रेंज के आईजी सुंदरराज पी का यह बयान बिल्कुल सटीक है कि ह्यवह वामपंथी उग्रवाद के खिलाफ लड़ाई में ऐतिहासिक माइलस्टोन हैह्व

हम आपको बता दें कि केंद्रीय समिति की शक्ति अब घटकर केवल 7 सदस्यों पर आ गई है। इनमें भी गणपति अस्सी के करीब है, मिसिर बेसरा झारखंड के कुछ क्षेत्रों तक सीमित है और संगठन का कैडर आधार तेजी से खत्म हो रहा है। सक्रिय नेताओं में देवजी, संग्राम, गणेश उइके, रामदर और दो क्षेत्रीय कमांडर– बरसे देवा व पप्पा राव ही बचे हैं। अनुमान है कि 100-150 से ज्यादा सशस्त्र माओवादी कैडर अब पूरे देश में नहीं बचे हैं। जो बचे हैं वह भी कुछ आरक्षित वनों और सीमावर्ती इलाकों तक सिमटे हुए हैं।

देखा जाये तो 2025 में माओवादियों को जो सबसे बड़ी चोटें लगी हैं, वे अभूतपूर्व हैं। पहले पीबी नेता नंबाला केसव राव मारा गया फिर सोनू उर्फ वेणुगोपाल राव ने आत्मसमर्पण किया। इसके अलावा, कई केंद्रीय समिति सदस्य मारे गए या समर्पण कर चुके हैं। सत्यनारायण रेड्डी, कट्टा रामचंद्र रेड्डी, चेलपति, रवि, विवेक यादव, थेंतु लक्ष्मी, सुजाता, चंद्रन्ना और रुपेश जैसे वरिष्ठ कैडर ने हथियार डाल दिए हैं। यह परिदृश्य बताता है कि माओवादी संगठन अंतिम साँसें गिन रहे हैं।

देखा जाये तो हिड़मा का खात्मा उन हजारों जवानों के संघर्ष, बलिदान और धैर्य का प्रतिफल है, जो वर्षों से नक्सल प्रभावित इलाकों में लड़ाई लड़ रहे हैं। यह उस केंद्रीय नेतृत्व का भी प्रमाण है, जिसने लक्ष्य स्पष्ट किए, समय सीमाएँ तय की और परिणाम की मांग की। आज भारत पहली बार उस बिंदु पर खड़ा है जहाँ माओवादी संरचना बिखरी हुई है, उसकी केंद्रीय समिति कमजोर है, टॉप कमांडर समाप्त हो गये या आत्मसमर्पण कर रहे हैं, कैडर संख्या सबसे निचले स्तर पर है और जनता का सहयोग सुरक्षा बलों की ओर झुक चुका है।

बहरहाल, भारत दशकों से इस लाल आतंक से जूझ रहा था। अब पहली बार, देश उस ऐतिहासिक क्षण के बेहद करीब है जहाँ माओवादी हिंसा केवल स्मृति बन सकती है। यह उपलब्धि किसी एक ऑपरेशन की नहीं, यह राजनीतिक इच्छाशक्ति, स्पष्ट रोडमैप और अमित शाह के नेतृत्व वाली कठोर, लक्ष्य-उन्मुख रणनीति की देन है। यदि वर्तमान गति बनी रहती है तो 31 मार्च 2026 की वह तारीख– जिसे अमित शाह ने नक्सलवाद की अंतिम तिथि कहा है वह सिर्फ कागजी लक्ष्य नहीं बल्कि भारत की सुरक्षा इतिहास का निर्णायक मोड़ बन सकती है।

https://t.me/AllNewsPaperPaid1

हर खबर पर पैनी नज़र
नई सोच एक्सप्रेस
(बिहार और झारखंड से प्रकाशित हिन्दी दैनिक)



# राजनीतिक घरानों की भिड़ंत : भविष्य की दिशा तय करने की जंग

आरती कुमारी

बिहार चुनाव में राष्ट्रीय जनता दल की करारी हार के बाद दल प्रमुख लालू प्रसाद यादव के परिवार में वर्चस्व का संग्राम छिड़ गया है। लालू की बेटी रोहिणी आचार्य ने तेजस्वी यादव के करीबी संजय यादव और रमीज खान को चुनाव में हार के लिए जिम्मेदार ठहरा दिया है। परिवार के सदस्यों में मानसिक विकृति किस हद तक होती है, इसका उदाहरण देते हुए रोहिणी ने कहा है कि 'मुझे गालियां देते हुए कहा गया कि मैं गंदी हूं और मैंने अपने पिता को अपनी गंदी किडनी लगवा दी। इसके बदले में मैंने करोड़ों रुपए और चुनावी टिकट लिए। मुझे अब अपनी उदारता पर पछतावा हो रहा है। मेरा देश की सभी बेटियों से अनुरोध है कि जब आपके मायके में कोई बेटा या भाई हो तो भूलकर भी अपने पिता को नहीं बचाएं।' लालू के बड़े बेटे तेजप्रताप यादव भी रोहिणी के समर्थन में खुलकर सामने आ गए हैं। उन्होंने यहां तक कह दिया है कि 'यदि बहन रोहिणी का माता-पिता ने किसी भी भी तरह का मानसिक उत्पीड़न दिया है तो उसकी जांच होनी चाहिए।' तेजप्रताप ने यहां तक कह दिया कि जयचंदों को जमीन पर दफन कर देंगे। राज और राजनीतिक वंशों में देखने में आया है कि जब तक वे प्रगति कर रहे होते हैं, तब तक उनमें एकता बनी रहती है, लेकिन पतन के समय ये कुनबे बिखर जाते हैं। कुदरत का यह ऐसा जाल है कि वह वंशों के डीएनए में ही अलगाव के बीच बो देता है। भारतीय लोकतंत्र की जमीन पर जड़ें जमाते राजनीति के वंश-वृक्ष देश की संवैधानिक संप्रभुता की जड़ों में मट्ठा घोलने का काम कर रहे हैं। कांग्रेस समेत हरेक क्षेत्रीय राजनीतिक दल में राजनीतिक उत्तराधिकार और वंशवाद को राजनीति के फलक पर स्थापित करने की होड़ लगी है। भाजपा में भी वंशवाद का रोग पनपा हुआ है। वामदलों को जरूर हम अपवाद के रूप में देख सकते हैं। इसीलिए प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी जरूर परिवारवाद को बढ़ावा दे रहे दलों की मानसिकता पर कुठाराघात करते हुए उन्हें लोकतंत्र और संविधान की मूल भावना का विरोधी बताते हुए हमेशा हमलावर रहे हैं। उन्होंने इस प्रवृत्ति को सामंतशाही की संरक्षक और लोकतांत्रिक मूल्यों और मान्यताओं के लिए घातक बताया है। इसमें कोई दो राय नहीं कि विकृत वंशवादी मनोवृत्ति के चलते बहुदलीय शासन प्रणाली, एकतंत्रीय व्यक्तिवाद की गिरफ्त में आती जा रही है। इस नाते देश के प्रमुख राष्ट्रीय दल संवैधानिक लोकतांत्रिक व्यवस्था को एकध्रुवीय बनाने की कोशिश में लगे रहे हैं। कांग्रेस ने तो समूची राजनीति को राहुल गांधी और क्षेत्रीय दलों ने परिवार के मुखियाओं पर केंद्रित कर दी है। जबकि संवैधानिक व्यवस्था बहुदलीय है। लोकतंत्र को राजतंत्र में बदलने का यह खेल न तो देश की बुनियादी समस्याएं भूख, अन्याय और असमानता से लड़ने में कामयाब हो सकती हैं और न ही सीमाई संप्रभुता व आंतरिक समस्याओं से निपटने में दो-चार हो सकती हैं ? दरअसल आसानी से मिला राजनैतिक उत्तराधिकार का वैभव व्यक्ति की मानसिकता को सुविधा-भोगी और व्यक्तिवादी महत्वाकांक्षा को बढ़ाने का काम करता हैं। वह राजसी भोग-विलास में भी लग जाता है। प्रजातंत्र में यह स्थिति अपरोक्ष रूप से सामंती मूल्यों को स्थापित करने वाली है। स्वतंत्रता के बाद अस्तित्व में आए संविधान में समता, स्वतंत्रता, न्याय और बंधुता के आदर्शों के साथ देश को एक मजबूत राष्ट्र में गूंथने की परिकल्पना की गई थी। किंतु जब 1952 में स्वतंत्र भारत का पहला आम चुनाव हुआ तो संविधान में दर्ज आदर्श को पलीता लगाने का काम कांग्रेस समेत अनेक राजनीतिक दलों ने धर्म और जाति के आधार पर उम्मीदवारों का चयन और वोट मांग कर किया। अब आजादी के 78 साल बाद भी धर्म और जाति तो अपनी जगह कायम हैं ही, खरपतवार की तरह वंशवादी ऐसे बरगदी वृक्ष भी उग आए हैं,जो प्रजातांत्रिक मूल्यों और भावनाओं को ठेंगा दिखाने का काम कर रहे हैं। बुंदेलखंण्ड में एक कहावत प्रचलित है कि चंबल नदी की गहराई एक दर्जन खाटों की बान से भी नहीं नापी जा सकती ? लेकिन प्रजातंत्र की मिट्टी में वंशवाद की जड़ें जितनी गहरी होती जा रही हैं,उन्हें तो दो दर्जन खाटों के बान से भी नहीं नापा जाना मुश्किल है ? राजनैतिक वंशवाद का वास्ता ग्वालियर क्षेत्र में सिंधिया राजघराने से आज भी मजबूती से जुड़ा है। आजादी की लड़ाई में असहयोग के बावजूद राज-परिवार की जड़ें इतनी मजबूत हैं कि वंशवाद से नाता टूटने की फिलहाल कोई उम्मीद ही नहीं हैं। विजयाराजे सिंधियां से शुरू हुआ वंशवादी यह जीवाणु उनके बेटे माधवराव सिंधिय और बेटियों वसुंधरा राजे व यशोधरा राजे के बाद इनकी तीसरी पीढ़ी ज्योतिरादित्य और दुष्यंत सिंह के जरिए भी अवतरित होता चला गया है। अब ज्योतिरादित्य अपने पुत्र महाआर्यमन को मध्यप्रदेश क्रिकेट ऐसोशिएशन के जरिए राजनीति की सीढ़ियां चढ़ाने में लगे है। एक समय इस वंश की खूबी यह रही कि यह देश के दोनों प्रमुख राष्ट्रीय दल भाजपा और कांग्रेस में समान रूप से स्थापित रहा, लेकिन अब ज्योतिरादित्य के भाजपा में आने के बाद पूरा कुनबा भाजपाई हो गया है। इन दो वंश-वृक्षों से उत्प्रेरित होकर कालांतर में कई राजनेताओं के परिवार इस डगर पर चल निकले हैं। इसमें वे लोहियावादी भी शामिल हैं,जो कई दशकों तक विवाद को कोसते हुए इन्हें लोकतंत्र और संविधान के लिए खतरा बताते रहे। लेकिन क्षेत्रीय दलों के प्रमुख बनने और सत्ता की बागडोर हाथ में आते ही लालू प्रसाद, मुलायम सिंह और रामविलास पासवान इसके प्रमुख उदाहरण हैं। लालू को जब चारा घोटाले के मामले में बिहार का मुख्यमंत्री रहते हुए जेल जाने की नौबत आई,तो उन्हें अपना राष्ट्रीय जनता दल में ऐसा एक भी होनहार नेता नहीं दिखाई दिया जो मुख्यमंत्री की कुर्सी संभालने की काबिलियत रखता हो ? आखिरकार यह योग्यता उन्हें अपनी निरक्षर धर्मपत्नी रावड़ी देवी में ही दिखाई दी। अंततः लालू ने प्रजातांत्रिक राज्यसत्ता रावड़ी को मनोनीत करके हस्तांतरित कर दी। स्वतंत्र भारत में राज्यसत्ता के पारिवारिक उत्तराधिकारी को ही हस्तांतरित किए जाने की यह मनोवृति सबसे शर्मनाक स्थिति रही है। बाद में लालू के दो पुत्र और दो पुत्रियां राजनीति में सीधे दखल देने लग गईं। किंतु 2025 के बिहार विधानसभा चुनाव में करारी हार के बाद लालू कुनबे की कलह सड़क पर आ गई। मुलायम सिंह यादव की कहानी भी लालू जैसी ही है। इनके पूरे कुनबे ने ही राजनीति में हस्तक्षेप करके गांधी और सिंधिया परिवार को पीछे छोड़ दिया है। मुलायम के भाई शिवगोपाल

और रामपाल राजनीति में हैं। बेटा अखिलेश उत्तरप्रदेश के मुख्यमंत्री रह चुके हैं। अब समाजवादी पार्टी उन्हीं की मुट्ठी में है। अखिलेश की पत्नी डिपंल भी सांसद हैं। भतीजे धर्मेन्द्र और अक्षय भी सक्रिय राजनीति में हैं। रामविलास पासवान के भाई रामचंद्र तो पहले से ही राजनीति में थे अब उनकी मृत्यु के बाद पुत्र चिराग की मुट्ठी में लोक जनशक्ति पार्टी की कमान है। रामविलास पासवान 2002 में गुजरात में हुए सांप्रदायिक दंगों के कारण राजग से अलग हो गए थे। उन्होंने इन दंगों का ठींकरा नरेंद्र मोदी पर फोड़ा था, लेकिन 2014 में जब मोदी का राजनैतिक वर्चस्व देश की राजनीति पर छा गया था, तब चुनाव के पूर्वानुमान ताड़ते हुए वे चिराग के कहने पर राजग गठबंधन के सहयोगी बन गए थे। ये चिराग वही हैं, जो राजनीति में आने से पहले फिल्मों में किस्मत आजमा रहे थे, लेकिन वहां प्रतिभा का कमाल दिखा नहीं पाए तो राजनीति में चले आए। परिवारवाद के चलते राजनीति में तो बिना प्रतिभा के भी कामयाबी हाथ लग जाती है, फिर पिता की विरासत साथ हो तो शंका की कोई गुंजाइश ही नहीं रह जाती। हालांकि अब चिराग और उनके चाचा पारश के बीच वर्चस्व की जंग छिड़ी हुई है। दक्षिण में भी वंश-वृक्ष खूब फल-फूल रहे हैं। आठ दशक पुराने क्रांतिकारी द्रविड आंदोलन और हिन्दी के विरोध की कोख से जन्मी द्रविड मुनेत्र कशघम यानी द्रमुक भी वंशवाद की राह पर है। एम करुणानिधि की राजनैतिक विरासत का वास्तविक उत्तराधिकारी कौन है, इस सवाल को लेकर उनके दोनों बेटों में खूनी जंग भी छिड़ चुकी है। हालांकि बड़े बेटे एमके अलागिरी की बजाए करुणानिधि ने छोटे बेटे एमके स्टालिन को अपना उत्तराधिकारी घोषित किया था, इसलिए पार्टी, तमिलनाडू और राज्य सत्ता की कमान स्टालिन के हाथ है। उनकी बेटी कनिमोझी भी सासंद हैं। 2 जी स्पेक्ट्रम घोटाले में वे जेल भी जा चुकीं हैं। हालांकि करूणानिधि और उनका दल साम्यवाद से प्रभावित रहा है। मार्क्स का जो ऐतिहासिक भौतिकवाद है, वह प्रजातंत्र में कुनबापरस्ती का विरोध करता है, लेकिन करुणानिधि का वंश इसी कुनुबापरस्ती की गिरफ्त में है। तृणमूल कांग्रेस की मुखिया ममता बनर्जी और समाजवादी पार्टी की सुप्रीमो मायावती अविवाहित हैं, बावजूद वंशवादी मानसिकता के चलते अपने भतीजों को आगे बढ़ा रही हैं। तेलंगाना में केसीआर का उत्तराधिकारी कौन हो इसे लेकर भाई-बहन आपस में टकरा रहे हैं। बेटी कविता 2023 के शराब घोटाले में गिरफ्तार हुई तो भीतर का संघर्ष सड़क पर आ गया। महाराष्ट्र में उद्धव ठाकरे और उनके चचेरे भाई राज ठाकरे के अलग होने के बाद 2022 में शिंदे की बगावत ने शिवसेना के दो फाड़ कर दिए। इस अलगाव की वजह से बाल ठाकरे की विरासत कमजोर हुई तो भाजपा सत्ता के सिंहासन पर जा बैठी। आंध्र प्रदेश में वाईएसआर की मौत के बाद 2023-24 में पैतृक संपत्ति पर अधिकार को लेकर जगन और उर्मिला के बीच विवाद सामने आया और दोनों अलग-अलग दलों में पहुंच गए। महाराष्ट्र में शरद पवार की राजनीतिक विरासत पर रस्साकशी के बाद 2023 में अजीत पवार भाजपा-शिंदे सरकार में शामिल हो गए, जिसके चलते पार्टी दो हिस्सों में विभाजित हो गई, इस विभाजन के साथ ही महाराष्ट्र में कई सीटों पर कांग्रेस-शिवसेना और अन्य गठबंधनों के साथ समीकरण बदल गए। जिसका नतीजा कांग्रेस शरद पवार और शिवसेना को भुगतना पड़ा। आज देश में दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति यह निर्मित हो गई है कि एक जमाने में वंशवाद के जो प्रबल विरोधी थे और जिन्हें गांधी परिवार फूटी आंख भी नहीं सुहाता था, वे इसके समर्थक व निष्ठावान अनुयायी हो गए हैं। इसी कारण राजनीतिक वंशवाद ने अब एक ब्रांड का रूप धारण कर लिया है। आम जनता को इससे सचेत होने की जरूरत है। ब्रिटेन के लोकतंत्र का उल्लेख करते हुए दार्शनिक रूसो ने कहा था,'इग्लैंण्ड की जनता समझती है कि वह आजाद है,तो यह उसका भ्रम है। जनता की आजादी केवल वहीं तक है,जहां तक वह माननीय सांसदों का चुनाव करती है। चुनाव प्रक्रिया संपन्न होने के बाद जनता को गुलाम कैसे बनाए रखा जाए, इस दूषित मानसिकता का दुश्चक्र तुरंत घूमना शुरू हो जाता है'। भारत में यह कथन सत्य के निकट है।

# जनमत, जनयुद्ध और जनादेश की अभूतपूर्व यात्रा दिखी – "बिहार विधानसभा चुनाव 2025"

जितेन्द्र कुमार सिन्हा, पटना

बिहार विधानसभा चुनाव 2025 की आधिकारिक समाप्ति हो गई है, बिहार ने अपना निर्णय 14 नवंबर को ही जनता के मन, मस्तिष्क और मतदान की चेतना द्वारा लिख दिया था। यह चुनाव सिर्फ लोकतांत्रिक प्रक्रिया नहीं था, बल्कि एक ऐसा राजनीतिक महाकाव्य था, जिसे आने वाले वर्षों तक भारत के राजनीति विज्ञान में पढ़ाए जाने वाले अध्यायों में सुनहरे अक्षरों में दर्ज किया जाना चाहिए। कुल 39 दिनों का यह चुनावी कालखंड एक प्रयोगशाला की तरह था जहां भावनाएँ, रणनीतियाँ, जातीय समीकरण, सामाजिक ध्रुवीकरण, नेतृत्व की चमक, गठबंधन की मजबूती, और लोकतंत्र की धड़कन, सब एक साथ स्पंदित हो रहे थे। इस चुनाव ने एक बार फिर सिद्ध किया है कि "लोकतंत्र में अंतिम निर्णय जनता का होता है और जनता कभी गलत नहीं होती है।" पराजित पक्ष इसे चाहे EVM हैक, वोट चोरी, आयोग पक्षपात, अथवा किसी अन्य साजिश का रूप देकर समझने से इंकार करे, लेकिन वास्तविकता यह है कि लोगों के दिलों में एक बदलाव धीरे-धीरे पक रहा था, और जब वह पक कर तैयार हुआ, तो उसने जनादेश के रूप में एक नई इबादत लिख दी। बिहार भारत की सबसे जटिल राजनीतिक इकाइयों में से एक है। यहाँ जाति संरचना, वर्गीय विभाजन, क्षेत्रीय संतुलन, नेतृत्व पर विश्वास और राजनीतिक स्मृतियों का प्रभाव गहरा और स्थायी है। प्रत्येक चुनाव अपने आप में अनोखा होता है, लेकिन 2025 का चुनाव कई मायनों में विशिष्ट था। तीन विशेष कारण इसे ऐतिहासिक बनाता है कि चुनाव में नेतृत्व की सीधी आमने-सामने की लड़ाई थी। गठबंधनों का पुनर्गठन और उनके भीतर की हलचल तेज थी। मतदाताओं की मनोवैज्ञानिक परिपक्वता स्पष्ट दिखाई दी। बिहार की जनता अब सिर्फ वादे नहीं सुनती है, बल्कि पिछले कार्यकाल का प्रदर्शन, भविष्य की संभावनाएँ और चुनावी समय में हुए व्यवहार को बारीकी से देखती है। चुनावी घोषणा के साथ बिहार एक रंगमंच बन गया था, जहाँ अभिनेता सिर्फ नेता नहीं थे, बल्कि कार्यकर्ता, रणनीतिकार, मीडिया, सोशल मीडिया टीमें और सबसे महत्वपूर्ण था कि, जनता भी बराबरी से शामिल थी। इन दिनों में बिहार ने भाषा के सभी रंग देखे थे, जिसमें सम्मान, व्यंग्य, उपहास, कटाक्ष, चुनौती, आरोप-प्रत्यारोप और कभी-कभी मर्यादा भंग तक शामिल था। नेताओं के भाषणों में भावनाओं का ज्वार भी था और अहंकार की झलक भी। शुरुआत में जो मुद्दे प्रमुख थे वह था बेरोजगारी, सड़क एव बिजली, शिक्षा, महंगाई, किसान संकट और जातीय संतुलन। वे अचानक पीछे छूट गए और चुनाव को आगे बढ़ाया, गठबंधन समीकरण, नेतृत्व की विश्वसनीयता और उम्मीदवारों की व्यक्तिगत छवि। प्रत्येक चुनाव में एक चरण आता है जब जनता चुपचाप निर्णय बना लेती है। इस चुनाव में भी वैसा ही दिखा। "लोकतंत्र के शांत क्षण में सबसे बड़ा निर्णय होता है।" बिहार के गांव, चौपाल, शहरों की गलियां, चौकी-चौराहों पर होने वाली शांत और धीमी फुसफुसाहटें ही अंतिम परिणाम का आधार बनीं। 2025 में यह मनोवैज्ञानिक परिवर्तन सबसे रोचक रहा। लोग नाराज थे, परंतु केवल नाराज नहीं थे। वे विकल्प देख रहे थे। वे भविष्य की दिशा तय कर रहे थे। जनता ने उन नेताओं पर भरोसा किया जिन्होंने धरातल पर काम किया, जिनकी भाषा संयमित रही, जो सामाजिक सामंजस्य की बात करते थे, जो बिहार के भविष्य की स्पष्ट तस्वीर दे पाए। और जनता ने दूरी बना ली कटु भाषा, अत्यधिक आत्मविश्वास, तिरस्कारपूर्ण वक्तव्यों और गठबंधन की अंतहीन कलह से। राजनीति विज्ञान के छात्रों के लिए यह चुनाव एक केस स्टडी है।इसके कारण हैं कि कैसे नीतियाँ बनती हैं, नरेटिव सेट होता है, जनता की मनोविज्ञान बदलती है और कैसे चुनाव मैनेजमेंट किया जाता है। यह चुनाव इस बात का बड़ा उदाहरण है कि "सोशल मीडिया का शोर हमेशा जीत की गारंटी नहीं होता है।" छात्र सीख सकते हैं कि कब गठबंधन लाभ देता है, कब नुकसान और जनविश्वास किस तरह बदलता है। नेता की छवि, व्यवहार और भाषा चुनाव को कैसे पलट सकता है इस चुनाव ने स्पष्ट कर दिया है। पराजित दलों ने अपनी पुरानी परंपरा को निभाते हुए EVM, चुनाव आयोग, प्रशासन और अधिकारियों पर आरोप लगा रहे हैं। लेकिन बिहार का सच यह कहता है कि "हार से पहले ही जनता संकेत दे चुकी थी।" लोकतंत्र में यह समझना आवश्यक है कि हार लोकतांत्रिक प्रक्रिया का हिस्सा है और उसे स्वीकार करना भी लोकतंत्र की परिपक्वता है। 2025 के बिहार चुनाव ने सिर्फ बिहार ही नहीं, बल्कि पूरे भारत को संदेश दिया है कि वे सुनती हैं, सोचती हैं, और देर से सही, पर निर्णय स्वयं लेती हैं। यह चुनाव एक सामाजिक परिवर्तन का संकेत है। वोटर अब परिपक्व हो चुके हैं। मजबूत नेतृत्व के सामने गठबंधन का गणित ढह सकता है। बिहार की जनता लगातार नेतृत्व के व्यवहार का विश्लेषण कर रहा था, चुनाव में स्थानीय मुद्दे प्रबल था। उम्मीदवारों की व्यक्तिगत छवि मजबूत फैक्टर बन चुका था। जातीय समीकरण टूटने लगा था। युवा वर्ग निर्णायक भूमिका में था। ग्रामीण और शहरी दोनों इलाकों में हवा एक दिशा में थी। पराजित पक्ष ने इन संकेतों को नहीं पढ़ा, और चुनाव परिणाम उनके लिए "अचानक" लगने लगा। लेकिन जनता के लिए यह अप्रत्याशित नहीं था, बल्कि स्वाभाविक था। बिहार का संदेश दलों के लिए स्पष्ट है कि जनता को हल्के में न लें। भाषा और व्यवहार से ही छवि बनती है, कड़वाहट और अहंकार नुकसान देता है। जातीय समीकरण अब अकेले निर्णायक नहीं होता है, बदलते बिहार को समझना होगा। उम्मीदवारों की व्यक्तिगत भूमिका बहुत बड़ी होती है। क्योंकि इस 39 दिन की चुनावी यात्रा में भाव भी थे, भाषा भी, व्यंग्य भी, अहंकार भी, सामंजस्य भी, मर्यादा भी और जनशक्ति की प्रचंड अभिव्यक्ति भी। यह चुनाव आने वाले दशकों तक एक राजनीतिक शोध मॉडल के रूप में पढ़ाया जा सकता है।

https://t.me/AllNewsPaperPaid

**मेष राशिः** आज आपको ऑफिस में अपने आसपास के लोगों से थोड़ा संभलकर रहने की जरूरत है। वे आपका काम बिगाड़ने की कोशिश कर सकते हैं। आज किसी भी काम में बड़ों की सलाह लेना बेहतर रहेगा। आप अपने जीवनशैली में कुछ बदलाव करेंगे, ये बदलाव आपके लिए फायदेमंद रहेगा। बिजनेस में आपको विरोधियों से बचकर रहना चाहिए।

**वृष राशिः** आज कारोबार से जुड़े रुके हुए जरूरी काम पूरे होने की संभावना है। लोगों से कुछ नई बात सीखेंगे। जीवनसाथी की अपेक्षाएं पूरी होगी। आपका मन प्रसन्न रहेगा। आपको किसी अजनबी लोगों पर भरोसा करने से बचना चाहिए। आपको अपनी योजनाओं के प्रति गोपनीयता बनाएं रखने की जरुरत है। मित्रों से मिलने उसके घर जायेंगे, जिससे आपकी दोस्ती और भी अधिक मजबूत होगी। आप किसी सामाजिक कार्य का हिस्सा बनेंगे।

**मिथुन राशिः** आज आप किसी नए काम को करने की सोचेंगे। करियर के मामले में चीज़ें बेहतर होने के आसार है। आज सेहत के प्रति आपको थोड़ा सतर्क रहने की जरूरत है। फ़ास्ट फ़ूड खाने से आपको बचना चाहिए। किसी बड़ी डील को करने से पहले आपको सोच-समझकर ही आगे बढ़ना चाहिए।

**कर्क राशिः** आज कुछ ऐसे लोगों से मुलाकात होगी, जो आपके करियर के लिए मददगार रहेंगे। आप परिवार वालों की इच्छा पूरी करेंगे, जिसमें आपको सफलता मिलेगी। आज आपके कुछ नए दोस्त बनेंगे। आपको कुछ नये बिजनेस प्रपोजल मिल सकते हैं। जीवनसाथी के साथ आपके रिश्तों में मधुरता बरकरार रहेगी।

**सिंह राशिः** आज इनकम के नए सोर्स प्राप्त होंगे। आपको व्यापार में उम्मीद से कुछ कम ही लाभ होगा। कुछ मामलों में साथ काम करने वाले लोगों से सहयोग नहीं मिल पायेगा। आप अपने जीवन को और बेहतर बनाने के लिए कोशिश करेंगे। आज ऑफिस में काम का बोझ थोड़ा बढ़ सकता है।

**कन्या राशिः** आज आपको कोई अच्छी खबर मिलेगी। ऑफिस में कोई नया काम मिलेगा, जिसे आप पूरा करने में सफल रहेंगे। शाम को परिवार वालों के साथ मौज-मस्ती में समय बितायेंगे, जिससे पारिवारिक जीवन खुशहाल बनेगा। माता-पिता के साथ धार्मिक स्थल पर जाने का प्लान करेंगे। प्लान सफल रहेगा। मैनेजर पोस्ट के लोगों के लिए दिन शानदार रहेगा।

**तुला राशिः** आज किसी काम के सिलसिले से की गई यात्रा फायदेमंद रहेगी। समाज में आपका मान-सम्मान बढ़ेगा। परिवार में किसी रिश्तेदार के आगमन से घर में खुशी का माहौल बनेगा। आज आपकी मुलाकात कुछ खास लोगों से होगी। आपके सोचे हुए काम पूरे होंगे। आप अपने लक्ष्य के बारे में विचार करेंगे। ऑफिस में आपके जूनियर आपसे काम सीखना चाहेंगे। जो लोग मार्केटिंग के फील्ड से जुड़े हैं, उन्हें आज अच्छे क्लाइंट मिलेंगे।

**वृश्चिक राशिः** आज जीवनसाथी के साथ समय बितायेंगे। कार्यक्षेत्र में लोगों से पूरा-पूरा सहयोग प्राप्त होगा। आज इनकम के नए रास्ते खुलेंगे। बच्चे माता-पिता के साथ मंदिर जायेंगे। बायोलॉजी स्टूडेंट्स के लिए दिन बेहतर रहने वाला है। आज किस्मत आप पर मेहरबान रहेगी।

**धनु राशिः** आज आपके रुके हुए काम पूरे होंगे। छात्रों के लिए आज का दिन अनुकूल रहने वाला है। खासतौर पर साइंस से जुड़े छात्रों के लिए फायदेमंद रहेगा। माता-पिता के साथ रिश्ता बेहतर होंगे। आज कोई बड़ा ऑफर मिलने से धन लाभ होने की संभावना है। आप परिवार वालों के साथ मनोरंजन के लिए किसी ट्रिप का प्लान बनायेंगे।

**मकर राशिः** आज आय के नए स्रोत सामने आएंगे। ऑफिस में किसी बड़े अधिकारी का सहयोग प्राप्त होगा। दाम्पत्य जीवन में मधुरता आयेगी। सॉफ्टवेयर इंजीनियर्स के लिए दिन बेहतरीन रहने वाला है। आपको लाभ के कुछ अवसर प्राप्त होंगे। सुबह उठकर जॉगिंग पर जाने से दिनभर खुद को तरोताजा महसूस करेंगे। आज आपको अपनी मेहनत का फल अवश्य मिलेगा।

**कुम्भ राशिः** आज दोस्त आपसे किसी काम के लिए मदद मांग सकते हैं। परिवार में आपके गुणों की प्रशंसा होगी। किसी नयी तकनीक के द्वारा आपके व्यापार में वृद्धि होने की संभावना है। साथ ही उत्पादन कार्य भी बढ़ सकता है। अपने पार्टनर के साथ आप डिनर करने का प्रोग्राम बनायेंगे। जो लोग संगीत गायन के क्षेत्र से जुड़े हैं, उन्हें किसी बड़ी जगह परफॉर्म ?स करने का मौका मिलेगा। संतान सुख की प्राप्ति होगी।

**मीन राशिः** आज किसी जरूरी काम में आपको भाई-बहन का सपोर्ट मिलेगा। अपने परिवार वालों के साथ आप कुछ बेहतरीन पलों का आनंद उठायेंगे। आज आप खुद को उर्जावान महसूस करेंगे। करियर में तरक्की के नए रास्ते खुलेंगे। हर जगह आपकी प्रसंशा होगी। बिजनेस के लिहाज से की गई यात्राएं आपके लिये लाभकारी होगी। आज आपकी रचनात्मक प्रतिभा खुलकर सामने आयेगी। आपकी आर्थिक स्थिति भी बेहतर रहेगी। आज मेहनत का पूरा नतीजा मिलेगा।

# आम चुनाव में बिहार की विनिंग टीम के साथ ही उतरेगी बीजेपी

संजय सक्सेना, वरिष्ठ पत्रकार

भारतीय जनता पार्टी बिहार में भले ही नंबर एक की पार्टी उभरी हो, लेकिन दूसरे नंबर की पार्टी जतना दल युनाइटेड के नेता नीतीश कुमार को ही वह वायदे के अनुसार मुख्यमंत्री की कुर्सी पर बैठा रही है तो इसके पीछे तमाम किंतु-परंतु हैं। दरअसल, नीतीश के साथ सरकार बनाते समय बीजेपे इस लिये कोई नया प्रयोग नहीं करेगी क्योंकि उसकी नजर 2029 के लोकसभा चुनाव पर टिकी हुई है। बिहार में सत्ता समीकरण को लेकर पार्टी का रुख यह बताता है कि वह यहां किसी बड़े प्रयोग से बचना चाहती है और स्थिरता पर जोर दे रही है। पिछली सरकार के दौर में मुख्यमंत्री नीतीश कुमार और बीजेपी के दो उपमुख्यमंत्रियों के संतुलन ने गठबंधन को कार्यात्मक बनाए रखा था। अब जब विधानसभा में बीजेपी की स्थिति मजबूत है, तब भी आलाकमान का यही फैसला कि वही पुरानी टीम बनी रहेगी, एक सोची-समझी रणनीति का परिणाम है। बीजेपी समझती है कि बिहार का सामाजिक और राजनीतिक ताना-बाना बेहद संवेदनशील है। यहां सत्ता चलाने से ज्यादा मुश्किल उसमें निरंतरता बनाए रखना होता है। ऐसे में अगर पार्टी किसी नए चेहरे या ढांचे के साथ प्रयोग करती, तो पुराने गठबंधन समीकरणों में हलचल हो सकती थी। मुख्यमंत्री पद पर नीतीश कुमार को यथावत बनाए रखने और दोनों पुराने डिप्टी सीएम को फिर से दोहराने का निर्णय उसी स्थिरता की गारंटी देता है, जो जनता दल (यू) और बीजेपी के रिश्तों को सहज बनाती रही है। दरअसल, बीजेपी के शीर्ष नेतृत्व का लक्ष्य सिर्फ बिहार की सरकार चलाना नहीं, बल्कि आने वाले 2029 के लोकसभा चुनाव में राज्य से अपना आधार और सीटें और मजबूत करना है। 2019 के चुनाव में पार्टी और उसकी सहयोगी जदयू ने अच्छा प्रदर्शन किया था, लेकिन 2024 में जो हल्की गिरावट दिखी, उसने बीजेपी आलाकमान को यह सोचने पर मजबूर किया कि बिहार में संगठन के साथ-साथ सत्ता में भी सहजता का माहौल बनाकर जनता का भरोसा दोबारा अर्जित किया जाए। इसके लिए विनिंग कॉम्बिनेशन यानी विजयी फॉर्मूले को न छेड़ना ही सबसे व्यावहारिक रास्ता है। ऐसा इसलिये है क्योंकि अक्सर राज्य स्तरीय राजनीति में बदलाव संगठनात्मक विचलन लाता है। अगर बीजेपी अपने डिप्टी सीएम या सरकार में चेहरों में बदलाव करती, तो इसका संदेश नीचे के स्तर पर यह जा सकता था कि पार्टी फिर से प्रयोगों के दौर में है। बिहार के मतदाता प्रयोगों से ज्यादा परिणाम देखना चाहते हैं। एक स्थिर सरकार को वे पसंद करते हैं, जो काम में निरंतरता दिखाए। आलाकमान यह समझता है कि बिहार में जो संतुलन नीतीश कुमार और बीजेपी के बीच तैयार हुआ है, उसी के भरोसे 2029 तक राजनीतिक ज़मीन तैयार की जा सकती है। नीतीश कुमार का चेहरा अभी भी बिहार की राजनीति में संतुलनकारी माना जाता है। हालांकि उनकी लोकप्रियता पहले जैसी नहीं रही, लेकिन वे अभी भी सामाजिक समीकरणों को संभालने वाले नेता के तौर पर स्वीकार्य हैं। बीजेपी को उनकी यही छवि चाहिए, ताकि वह बड़े पैमाने पर वोटों का धुरवीकरण किए बिना ही सत्ता और संगठन दोनों को मजबूत रख सके। यह रणनीति 2029 के लोकसभा चुनाव को देखते हुए इसलिए भी अहम है क्योंकि बीजेपी को केंद्र में अपना जनाधार मजबूत रखने के लिए बिहार जैसे बड़े राज्य से कम से कम 35 से अधिक सीटों का लक्ष्य चाहिए। पार्टी जानती है कि इसके बिना उत्तर प्रदेश पर ज्यादा दबाव बढ़ जाएगा। इसलिए बिहार

में यदि गठबंधन स्थिर और प्रभावी रहता है, तो लोकसभा में सीटों की गारंटी लगभग तय मानी जाती है। इसके अलावा, बिहार से जुड़े अन्य समीकरण भी बीजेपी नेतृत्व के ध्यान में हैं। जातीय जनगणना, आरक्षण और समाज के कमजोर वर्गों की भागीदारी जैसे मुद्दों पर नीतीश कुमार के माध्यम से सॉफ्ट पोलिटिकल हैंडलिंग की जा रही है। अगर बीजेपी इन मुद्दों को सीधे अपने नेतृत्व में संभालती, तो संभव है विपक्ष इसे धुरवीकरण के एजेंडे से जोड़ देता। नीतीश कुमार का रहना इसीलिए बीजेपी के लिए एक कुशन का काम करता है। दूसरी ओर, पार्टी का लक्ष्य राज्य संगठन को मजबूत करने का भी है। सरकार में पुरानी टीम के बने रहने से शीर्ष स्तर पर कोई असंतुलन नहीं होगा, जिससे संगठन जिलों, मंडलों और बूथ स्तर पर चुनावी तैयारियों पर पूरी ऊर्जा लगा सकेगा। जब सरकार और संगठन दोनों में टकराव न्यूनतम होता है, तब लोकसभा चुनाव के लिए ग्राउंड मैकेनिज्म अधिक परिणामकारी बनता है। बीजेपी की यह रणनीति यह भी दर्शाती है कि वह अब बिहार को सिर्फ सहयोगी दल की राजनीति का मैदान नहीं मान रही। आलाकमान की कोशिश है कि धीरे-धीरे अपना वोट आधार स्वतंत्र रूप से इतना मजबूत किया जाए कि भविष्य में नीतीश कुमार जैसे सहयोगियों पर निर्भरता कम की जा सके। लेकिन फिलहाल, पार्टी के लिए नीतीश के साथ स्थिर रिश्ते बनाए रखना फायदेमंद सौदा है। कुल मिलाकर, बीजेपी ने यह निर्णय लेकर यह स्पष्ट कर दिया है कि उसका फोकस अल्पकालिक राजनीतिक लाभ पर नहीं, बल्कि दीर्घकालिक रणनीतिक मजबूती पर है। वही पुरानी विनिंग टीम बनाए रखना सिर्फ सत्ता की निरंतरता का प्रतीक नहीं, बल्कि 2029 के लक्ष्य की दिशा में बिछाई जा रही राजनीतिक बिसात का हिस्सा है। बिहार में स्थिरता का यह फॉर्मूला अगर अगले कुछ वर्षों तक कायम रहता है, तो 2029 के लोकसभा चुनाव में बीजेपी को इसका सीधा लाभ मिलने की पूरी संभावना है।

राष्ट्रीय
सहारा
पटना | बृहस्पतिवार • 20 नवम्बर • 2025
www.rashtriyasahara.com

अनमोल वचन

*दूसरे की दया सब लोग खोजते हैं और स्वयं करनी पड़े तो कान पर हाथ रख लेते हैं*

-जयशंकर प्रसाद



# पुरुष दिवस पर पुरुषों की संवेदनशीलता

हर साल 19 नवंबर को मनाया जाने वाला अंतरराष्ट्रीय पुरुष दिवस यानी इंटरनेशनल मेंन्स डे हमें अपनी जिंदगी के उन पुरुषों को धन्यवाद देने का मौका देता है जो चुपचाप, बिना कुछ कहे, ज़िम्मेदारियां निभाते रहते हैं। इस मौके पर टीवी के मशहूर कलाकारों ने इस खास दिन की अहमियत पर विचारों को साझा किया। आर्य बब्बर, जोकि ज़ी टीवी के शो जागृति एक नई सुबह में कालीकांत का किरदार निभा रहे हैं, कहते हैं, मेरे लिए मर्दानगी का मतलब है करुणा, सम्मान, और दूसरों को ऊपर उठाने की क्षमता। इसी तरह हप्पू की उलटन पलटन में दरोगा हप्पू सिंह की भूमिका निभा रहे योगेश त्रिपाठी कहते हैं, मेरी ज़िंदगी का सबसे बड़ा सबक रहा है-हिम्मत नहीं हारना। भाबीजी घर पर है में मनमोहन तिवारी का किरदार निभाने वाले रोहिताश्व गौड़ कहते हैं, मेरी ज़िंदगी की सबसे बड़ी सीख मुझे टीवी में आने से पहले ही मिली थीं और वह है-मेहनत, विनम्रता और लोगों को समझना।

सोनाक्षी बत्रा, जो जगद्धात्री में मुख्य किरदार निभा रही है, कहती है, उन पुरुषों को भी सराहना मिलनी चाहिए जो हमेशा हमारे साथ खड़े रहते है।उधर, राजेंद्र चावला, जो लक्ष्मी निवास में श्रीनिवास की भूमिका निभा रहे हैं, कहते है, पुरुष दिवस पर मै चाहता हूँ कि हम मर्दानगी को नए नजरिए से देखे, ज़िम्मेदारी, अपनापन और खुलापन। इधर, मोहक मटकर, जो सरू में मुख्य भूमिका निभा रही है, कहती है, यह दिन हमें याद दिलाता है कि पुरुष भी कई दबावों से गुजरते है, जिन पर बात होना ज़रूरी है। अभिषेक शर्मा, जो वसुध में देवांश का किरदार निभा रहे है, कहते है, पुरुष दिवस पर मै चाहता हूँ कि हम सभी इस चुपचाप निभाई जा रही हिम्मत को सराहें। निशी सक्सेना, जो वसुधा में नंदिनी की भूमिका निभा रही है, कहती है, पुरुष दिवस हमें याद दिलाता है कि हमें उन्हें भी वही समझ, अपनापन और देखभाल देनी चाहिए जो वे दूसरों को देते है। शेज़ान खान, जो गंगा माई की बेटियां में सिद्धू का किरदार निभा रहे है, कहते है, मै हर पुरुष को यह कहना चाहता हूँ कि वे अपनी भावनाएं खुलकर जताएं, अपनी बात बिना डर के कहें और अपनी संवेदनशीलता को कमजोरी न समझें। पारस अरोड़ा जोकि एण्ड टीवी के आगामी शो घरवाली पेड़वाली में जीतू का किरदार निभाते नजर आएंगे, ने कहा, मेरी ज़िंदगी की शुरुआती सीखों में सबसे अहम रही है-ईमानदारी और लगन।

## कटाक्ष/ कबीरदास

# पढ़ोगे-लिखोगे तो होगे खराब!

हिन्दू वाकई खतरे में हैं। छोटे-मोटे खतरे में नहीं, भारी खतरे में हैं। सिर्फ भारी खतरे में नहीं, लगातार बढ़ते हुए खतरे में हैं। बताइए, कांवड़ का सीजन है, और बरेली में एक स्कूल का मास्टर छोटे-छोटे बच्चों को हिन्दू धर्म के खिलाफ भड़का रहा था और वह भी गा-गाकर। कांवड़ लेने मत जाना, तुम ज्ञान का दीप जलाना! ये ज्ञान का दीप क्या बला है जी, जिसे कांवड़ से बड़ा बताया जा रहा है?

योगी जी की सरकार ने सही किया, इस हिन्दू विरोधी मास्टर के खिलाफ एफआईआर करा दी, जो ज्ञान का दीप जलाने की शिक्षा देकर बच्चों को बिगाड़ रहा है। हम तो कहते हैं कि एफआईआर काफी नहीं है, ऐसे मास्टर को तो सीधे जेल में डालना चाहिए था और वह भी हिन्दू-विरोध के लिए। एक तो मास्टर और ऊपर से कवि। कांवड़ उठाने की जगह ज्ञान का दीप जलाने के लिए बच्चों को उकसाना, हिन्दू-विरोध नहीं तो और क्या है? क्या कहा, बच्चे, मास्टर सब हिन्दू थे। तब तो यह और भी खतरनाक हिन्दू विरोध का मामला हुआ-हिन्दू धर्म में भितरघात! क्या बताएं, अमृतकाल में भी उत्तम प्रदेश में कुछ उल्टी ही हवा बह रही है। मास्टर, ज्ञान का दीप जलाने की शिक्षा दे रहे हैं, तो बच्चे सड़कों पर उतर कर आंदोलन कर रहे हैं। कह रहे हैं-मधुशाला नहीं, पाठशाला दो! बेचारे योगी जी की सरकार ने इस साल पांच हजार से ज्यादा पाठशालाएं बंद करने और नयी मधुशालाएं खुलवाने का जरा सा फैसला क्या कर लिया, बच्चे लगे रो-रोकर प्रदर्शन करने-पाठशाला दो। क्यों भाई, पाठशाला ही क्यों, मधुशाला क्यों नहीं? आखिर, पाठशाला में ही ऐसा क्या मिल जाता है, जो मधुशाला में नहीं मिलेगा? ज्ञान का दीप जला भी लिया, तो उससे घर का चूल्हा तो जल नहीं जाएगा। नौकरियां तो हैं ही नहीं। और पढ़े-लिखों के लिए नौकरियां तो बिल्कुल ही नहीं हैं। जब पाठशाला के बाद भी मधुशाला में ही जाना है, गम-गलत करने के लिए भी और दांव लग जाए तो रोटी का इंतजाम करने के लिए भी, तो क्यों न सरकार मधुशालाएं ही खुलवाए। जो पाठशााला में रहकर ज्ञान का दीप जलाएंगे, वे तो कांवड़ उठाने जाने से रहे। कांवड़ियों के लिए सरकार जब सारे इंतजाम कर ही रही है, तो यह भी सही। पाठशालाओं में ज्ञान का दीप बुझाएंगे, तभी तो बेरोजगार नौजवान कांवड़ उठा कर हिन्दू धर्म को बचाने जाएंगे!

## साइबर स्लेवरी/अमित बैजनाथ गर्ग

# ठगी का नया पैंतरा

सेक्सटॉर्शन, निवेश, हनीट्रैप, ई-ट्रेडिंग फ्रॉड, डेटिंग एप फ्रॉड, साइबर बुलिंग, फर्जी लोन एप्स, जॉब ऑफर फ्रॉड, इनकम टैक्स फ्रॉड और डिजिटल अरेस्ट के बाद इन दिनों साइबर ठगी का एक नया रूप सामने आ रहा है, जिसे 'साइबर स्लेवरी' यानी 'साइबर गुलामी' कहा जा रहा है। दक्षिण-पूर्व एशिया क्षेत्र में आकर्षक नौकरियों के नाम पर भारतीय प्रवासी अब एक नये तरह के जाल में फंस रहे हैं, जहां भारतीयों को उच्च वेतन वाली नौकरियों का भ्रामक वादा करके साइबर गुलामी करवाई जा रही है।

साइबर स्लेवरी के इस खतरनाक ट्रेंड में तकनीकी रूप से दक्ष और पढ़े-लिखे युवाओं को विदेश में आकर्षक नौकरियों का लालच देकर दक्षिण-पूर्वी एशियाई देशों में फंसाया जा रहा है, जहां उन्हें बंधक बनाकर साइबर अपराध करवाए जा रहे हैं। यह संगठित गिरोह खासतौर पर लाओस, म्यांमार और कंबोडिया जैसे देशों में सक्रिय हैं। हाल ही में सरकार और पुलिस ने लोगों को साइबर स्लेवरी के खतरनाक ट्रेंड को लेकर गंभीर चेतावनी दी है। पुलिस का कहना है कि इन देशों में युवाओं को आईटी सेक्टर में शानदार नौकरी देने का झांसा दिया जाता है। जैसे ही वे वहां पहुंचते हैं, उनके पासपोर्ट और अन्य दस्तावेज छीन लिए जाते हैं और उन्हें प्रताड़ित कर साइबर ठगी के लिए मजबूर किया जाता है। असल में साइबर गुलामी शोषण का एक आधुनिक रूप है, जिसमें व्यक्तियों को अवैध रूप से बंधक बनाकर साइबर धोखाधड़ी में शामिल होने के लिए मजबूर किया जाता है। इसके तहत व्यक्तियों को उच्च वेतन वाले डाटा एंट्री पदों को हासिल करने का लालच देकर दक्षिण-पूर्व एशियाई देशों में ले जाया जाता है, जहां उनसे जबरन साइबर धोखाधड़ी करवाई जाती है। असल में साइबर गुलामी अभूतपूर्व गंभीरता और पैमाने के संगठित अपराध के रूप में उभर रही है।

# संकट में शेख हसीना के साथ भारत

## बांग्लादेश

### विवेक शुक्ला

बांग्लादेश की पूर्व प्रधानमंत्री शेख हसीना को सोमवार को जब ढाका की एक अदालत ने मौत की सजा सुनाई तब वो नई दिल्ली के अपने आवास में सुरक्षित बैठी थीं। उन्हें इंटरनेशनल क्राइम्स ट्रिब्यूनल ने जुलाई 2024 के छात्र आंदोलन के दौरान हुई हत्याओं का मास्टरमाइंड बताया। वहीं दूसरे आरोपी पूर्व गृह मंत्री असदुज्जमान खान को भी 12 लोगों की हत्या का दोषी माना और फांसी की सजा सुनाई। शेख हसीना नई दिल्ली के एक अज्ञात स्थान पर है। सुरक्षा कारणों से उनके आवास की जानकारी गुप्त रखी गई है। वो अपने देश में पिछले साल हुए हिंसक प्रदर्शनों के बाद आनन-फानन में नई दिल्ली आ गई थीं। शेख हसीना ने बीते दिनों भारत के कुछ खास अखबारों को इंटरव्यू देते हुए अपने देश की सरकार की निंदा भी की थी। उन्हें भले ही सजा सुना दी गई है, पर शेख हसीना भारत की राजधानी नई दिल्ली में सुरक्षित है। फिलहाल तो उनके अपने देश में वापस जाने की कोई संभावना भी नहीं है।

देखा जाए तो दिल्ली उनके लिए दूसरे घर की तरह है, क्योंकि 1975 से 1981 तक छह साल उन्होंने यहीं निर्वासन में बिताए थे। उन दिनों शेख हसीना नई दिल्ली पंडारा पार्क में रहती थीं। उनके पति डॉ. एम.ए. वाजेद मियां (परमाणु वैज्ञानिक) और दोनों बच्चे भी साथ थे। उनके पड़ोस में ही भाजपा के दिग्गज नेता लाल कृष्ण आडवाणी भी रहा करते थे। तब समय काटने के लिए शेख हसीना ने आकाशवाणी के बांग्ला सेवा में काम करना भी शुरू कर दिया था। वरिष्ठ पत्रकार मनमोहन शर्मा याद करते है, शेख हसीना उस दौर में नियमित रूप से संसद मार्ग स्थित आकाशवाणी भवन में आया करती थीं।

दरअसल 15 अगस्त 1975 को ढाका के धानमंडी स्थित घर में उनके पिता बंगबंधु शेख मुजीबर रहमान, मां और तीन भाइयों की हत्या कर दी गई थी। उस वक्त शेख हसीना अपने पति और बच्चों के साथ जर्मनी में थीं, इसलिए बच गईं। परिवार के नरसंहार से वे पूरी तरह टूट चुकी थीं। तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने उन्हें भारत में राजनीतिक शरण दी। इंदिरा और मुजीबुर रहमान के बीच गहरे व्यक्तिगत संबंध थे।

दिल्ली में उनके सबसे करीबी दोस्त प्रणब मुखर्जी और उनकी पत्नी शुभ्रा मुखर्जी थे। दोनों परिवार लगातार मिलते-जुलते थे। तालकटोरा रोड स्थित प्रणव मुखर्जी के घर हसीना अपने बच्चों के साथ अक्सर जाती थीं। दोनों परिवारों के बच्चे भी अच्छे दोस्त बन गए थे। प्रणब मुखर्जी की बेटी शर्मिष्ठा मुखर्जी ने एक बार बताया था, मम्मी और हसीना आंटी घंटों कला, संगीत और बांग्ला साहित्य पर बातें करती थीं। जब 18 अगस्त 2015 को मम्मी का निधन हुआ तो हसीना आंटी अपनी बेटी पुतुल के साथ श्रद्धांजलि देने आई थीं। पुतुल और मै इंडिया गेट पर गुड़ियों से साथ खेलते थे।

बांग्लादेश में हालात सुधरे तो शेख हसीना 1981 में स्वदेश लौट गईं, लेकिन मुखर्जी परिवार से रिश्ता कभी नहीं टूटा। दिल्ली आने पर वे जरूर शुभ्रा और प्रणब मुखर्जी से मिलती थीं। अवामी लीग के नेता लगातार दिल्ली आकर उनसे बांग्लादेश लौटने और सक्रिय राजनीति करने की गुजारिश करते थे। काफी सोच-विचार के बाद उन्होंने 1981 में वापसी का फैसला किया। वो 2024 से दिल्ली में है, लेकिन अब न शुभ्रा मुखर्जी है, न पूर्व राष्ट्रपति प्रणब मुखर्जी। दोनों इस दुनिया में नहीं रहे। यह ममकिन है कि प्रणव कुमार मुखर्जी के परिवार के सदस्य उनसे मिलते-जुलते हों।

आज, जब वो फिर से नई दिल्ली में है, तो यह इतिहास का एक विडंबनापूर्ण दोहराव लगता है। 2024 का वह काला साल था जब बांग्लादेश की सड़कों पर छात्रों का गुस्सा फूट पड़ा। उस आंदोलन ने जल्द ही पूरे देश को जकड़ लिया। सरकार ने सरकारी नौकरियों में 30 प्रतिशत आरक्षण को बनाए रखने का फैसला किया था, जो स्वतंत्रता संग्राम के वीरों के परिजनों के लिए था। छात्रों ने इसे अन्यायपूर्ण बताते हुए विरोध शुरू किया। लेकिन हसीना सरकार ने इसका दमनकारी जवाब दिया। पुलिस और सशस्त्र बलों ने प्रदर्शनकारियों पर गोलीबारी की, जिसमें सैकड़ों की मौत हो गई। आधिकारिक आंकड़ों के अनुसार, 300 से अधिक लोग मारे गए, जबकि मानवाधिकार संगठनों का अनुमान 1,000 से ऊपर है। यह हिंसा हसीना के 15 वर्षों के शासन का अंतिम अध्याय साबित हुई।

अगस्त 2024 में, सेना प्रमुख जनरल वाकर-उज-जमान ने हस्तक्षेप किया और हसीना को इस्तीफा देने के लिए मजबूर कर दिया। हसीना ने हेलीकॉप्टर से भागते हुए भारत का रुख किया। नई दिल्ली पहुंचकर उन्होंने कहा, 'मै हमेशा भारत की कृतज्ञ हूं।' भारत ने उन्हें शरण दी, लेकिन यह निर्णय विवादास्पद रहा। बांग्लादेश की नई अंतरिम सरकार, जिसका नेतृत्व नोबेल विजेता मुहम्मद यूनुस कर रहे है, ने हसीना के प्रत्यर्पण की मांग की है। लेकिन भारत ने इसे अस्वीकार कर दिया, संप्रभुता और मानवीय आधार पर। हसीना के भारत में रहने से दोनों देशों के बीच तनाव बढ़ गया है।

आज की सजा उसी हिंसा का परिणाम है। ढाका की अंतरराष्ट्रीय अपराध ट्रिब्यूनल (आईसीटी) ने हसीना को 'जनसंहार' और 'मानवता के खिलाफ अपराधों' का दोषी ठहराया। खैर, शेख हसीना फिलहाल भारत में है। बांग्लादेश सरकार ने उनके प्रत्यर्पण के लिए भारत से औपचारिक अनुरोध किया है, लेकिन भारतीय विदेश मंत्रालय ने कहा है कि 'यह मामला संवेदनशील है और कानूनी प्रक्रियाओं का पालन किया जाएगा।' हसीना के वकील अब अपील की तैयारी कर रहे है, जो बांग्लादेश की सर्वोच्च अदालत में होगी। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर, संयुक्त राष्ट्र और एमनेस्टी इंटरनेशनल ने दोनों पक्षों से संयम बरतने की अपील की है।'

शेख हसीना शुरू से ही भारत ते करीब रहीं। इंदिरा गांधी ने शेख हसीना के पिता को मुजीब को 'भाई' कहा था, और हसीना को उनकी 'बेटी'। यह बंधन आज भी कायम है। हसीना के शासनकाल में भारत-बांग्लादेश संबंध चरम पर पहुंचे। 2015 में भूमि सीमा समझौता, व्यापार वृद्धि और आतंकवाद विरोधी सहयोग प्रमुख उपलब्धियां थीं। लेकिन हसीना के भारत-समर्थक रुख ने उन्हें पाकिस्तान-समर्थित विपक्ष का निशाना बनाया। क्या भारत उन्हें सौंपेगा? विशेषज्ञों का मानना है कि नहीं, क्योंकि यह भारत की शरण नीति का उल्लंघन होगा।

**(लेख में निजी विचार हैं)**

**शेख हसीना ने बीते दिनों भारत के कुछ खास अखबारों को इंटरव्यू देते हुए अपने देश की सरकार की निंदा भी की थी। उन्हें भले ही सजा सुना दी गई है, पर शेख हसीना भारत की राजधानी नई दिल्ली में सुरक्षित हैं। फिलहाल तो उनके अपने देश में वापस जाने की कोई संभावना भी नहीं है। देखा जाए तो दिल्ली उनके लिए दूसरे घर की तरह है, क्योंकि 1975 से 1981 तक छह साल उन्होंने यहीं निर्वासन में बिताए थे। उन दिनों शेख हसीना नई दिल्ली पंडारा पार्क में रहती थीं।**

## चमत्कारिक 'छोटी दूधी' पेट और त्वचा, दोनों का रखती है ख्याल

- भारत समेत कई उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में अक्सर खाली पड़ी जमीन पर छोटा सा पौधा औषधीय गुणों को समेटे हुए पाया जाता है, जिसे हम 'छोटी दूधी' कहते हैं। इसे खरपतवार मान कर नजरअंदाज कर दिया जाता है, लेकिन आयुर्वेद में इसे कई बीमारियां दूर करने में इस्तेमाल किया जाता है।
- छोटी दूधी का वैज्ञानिक नाम 'यूफॉर्बिया थाइमीफोलिया' है। इसे अंग्रेजी में 'थाईम लीव्ड स्पर्ज' कहते हैं। यह 'युफोरबिएसी' परिवार से संबंधित है, जो जमीन पर फैला हुआ होता है। इसकी टहनियां पतली और लाल रंग की होती हैं तो फूल बहुत छोटे और हरे-लाल रंग के होते हैं, जो पत्तियों की बगल में गुच्छों में लगे होते हैं
- अमेरिकी नेशनल लाइब्रेरी ऑफ मेडिसिन के मुताबिक छोटी दूधी दस्त, कब्ज, अपच जैसी दिक्कतों से राहत दिलाने में मददगार है। बाल झड़ने की समस्या दूर करने में भी यह सहायक है

(मीडिया इनपुट्स)

धर्मनिरपेक्ष पार्टियों ने अपने मुस्लिम-प्रथम धर्मनिरपेक्षतावाद से मुसलमानों के लिए 'विलगाव' के हालात पैदा कर दिए हैं जहां उन्हें आधुनिक शिक्षा और भारत के बहुलतावादी मूल्यों के साथ समन्वय करने में दिक्कतें आ रही हैं। यही तो जिन्ना और माउंटेबेटन ने भारत की आजादी की बेला में अपेक्षा की थी।

**मिन्हाज मर्चेंट, लेखक**
**@MinhazMerchant**

# अवध और कोसल की संस्कृतियों का संगम

## मुद्दा | गौरव अवस्थी

1-9 नवंबर तक चले आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी पुस्तक मेले में भगवान राम की धरती अवध में शामिल रायबरेली में बेटियों के जन्म से लेकर विदाई से जुड़े लोकनृत्य की प्रस्तुति के दौरान माता कौशल्या के कोसल प्रदेश से आईं बच्चियां और कलाकार भावों में डूबकर स्वयं रो पड़े और दर्शकों को भी रुला दिया। अयोध्या की लोकगायिका संजोली पांडेय के स्वर में अवधी लोकगीतों की गूंज से सुप्त सांस्कृतिक चेतना पुनि-पुनि जागृत होती रही।

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी स्मृति न्यास के तत्वावधान में रायबरेली के फिरोज गांधी कॉलेज परिसर में 1-9 नवंबर तक चला आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी पुस्तक मेला साहित्य, समाजसेवा और सांस्कृतिक चेतना का केंद्र बना रहा। मेले में गंभीर साहित्यिक विमर्श भी हुए और हंसी-ठहाके भी गूंजे। पुस्तक मेला का यह मंच अवध, मिथिला और मां कौशल्या के कोसल प्रदेश की संस्कृतियों के संगम का गवाह बन गया। पुस्तक मेले के इस आयोजन ने साबित कर दिया कि आचार्य द्विवेदी की कर्मभूमि आज भी हिंदी के अक्षरों-संस्कारों और संस्कृतियों से धड़कती है।

ये मेला ऐतिहासिक होने वाला है, इसका अंदाजा पहले ही दिन लग गया। जब देश के सबसे बड़े चिकित्सीय संस्थान एम्स-रायबरेली की डायरेक्टर डॉ. अमिता जैन मेले का उद्घाटन करने पहुंची। कार्यक्रम में उन्होंने बच्चों को यादगार सीख इन शब्दों में दी-'पुस्तकें मानवता की सबसे बड़ी शिक्षक है। डिजिटल युग में भी पढ़ने की संस्कृति को जीवित रखना समाज की जिम्मेदारी है। युवाओं को डिजिटल युग में भी पुस्तकों से जुड़ाव बनाए रखना चाहिए।'

मेले का दूसरा दिन प्रतिभाओं को समर्पित रहा। मुंबई पुलिस को 500 से अधिक अपराधी पकड़वाने में मुफ्त मदद करने वाले स्केच आर्टिस्ट नितिन महादेव यादव को डॉ. राम मनोहर त्रिपाठी लोक सेवा सम्मान और रायबरेली की टॉपर छात्रा प्रांजलि जायसवाल को शिवानन्द मिश्र लाले सम्मान दिया गया। पहली बार मुंबई से रायबरेली पहुंचे स्केच आर्टिस्ट नितिन यादव ने कहा कि कला समाज सेवा का भी सशक्त माध्यम है जबकि प्रांजलि ने इसे अपनी प्रेरणा बताया।

3 और 4 नवंबर की शाम हंसी-ठहाकों और संगीतमय सुरों से गूंज उठी। पुस्तक मेले में तीसरे दिन दिल्ली से आए प्रसिद्ध कलाकार दीपक सैनी ने अपनी शानदार मिमिक्री और लाफ्टर शो से दर्शकों को इस कदर लोटपोट कर दिया कि पूरा पंडाल देर तक तालियों की गड़गड़ाहट से गूंजता रहा। चौथे दिन उस्ताद अब्दुल रशीद खां सम्मान ग्रहण करने आई अयोध्या की प्रसिद्ध लोकगायिका संजोली पांडेय और शाम्भवी शुक्ला ने अपनी मधुर आवाज में अवध के लोकगीत सुनाकर समां बांध दिया। दोनों के पारंपरिक लोकगीतों की भावपूर्ण प्रस्तुति ने दर्शकों को अपनी जड़ों से जोड़ दिया।

पुस्तक मेले में 5 नवंबर की शाम को भारत की लोकसंस्कृति की अद्भुत और यादगार झलक देखने को मिली। भगवान राम की धरती अवध की जमीं पर माता कौशल्या के कोसल प्रदेश और आज के (पश्चिम ओडिशा) से आई बच्चियों और कलाकारों के बेटियों के जन्म से लेकर विदाई से जुड़े लोकनृत्य की भावपूर्ण प्रस्तुति की छटा फिजां में बिखर गई। भावों में डूबे कलाकार स्वयं रो पड़े और जीवन में पहली बार ऐसा नृत्य एवं दृश्य देखकर दर्शकों की आंखों से भी आंसू छलक पड़े। इससे माहौल थोड़ी देर तक गम्भीर भी हो गया। लोगों ने एकटंकिया म्यूजिक स्कूल-पदमपुर से प्रशिक्षण पा रहे इन बच्चों को प्रस्तुति के बाद भरपूर आर्शीवाद दिया। 6 नवंबर को भी मेले में सांस्कृतिक कार्यक्रमों में रायबरेली जनपद के युवा कलाकारों ने अपनी प्रतिभा दिखाई।

पुस्तक मेले के सातवें दिन आचार्य द्विवेदी न्यास की ओर से श्रेष्ठ कवि व पूर्व सांसद डॉ. उदय प्रताप सिंह को आचार्य द्विवेदी युग प्रेरक सम्मान से सम्मानित किया गया। सम्मान ग्रहण करते हुए डॉ. उदय प्रताप भावुक हो गए। उन्होंने कहा कि हिंदी के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर करने वाले आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के नाम का सम्मान मिलना हमारे लिए गौरव की बात है। उन्होने न्यास द्वारा आनंद स्वरूप श्रीवास्तव के संपादन में प्रकाशित हो रही स्मारिका 'आचार्य पथ' का विमोचन भी किया। सम्मान समारोह के बाद कवि सम्मेलन में कवयित्री डॉ. सरिता शर्मा ने अपनी नई कविता 'सुनो समंदर, तिरस्कार सहते-सहते, सूख रही है एक नदी बहते-बहते..' पढ़कर श्रोताओं को भाव-विभोर कर दिया। बुजुर्ग महिलाओं और पुरुषों ने रस्साकशी, रूमाल झपट्टा प्रतियोगिता और म्यूजिकल चेयर रेस में जोश दिखाकर अपने बचपन को फिर से याद किया।

आठवां दिन मुशायरे के नाम रहा। इस दरम्यान पहला वाकिफ रायबरेलवी स्मृति सम्मान मरणोपरांत प्रयागराज के मरहूम शायर डॉ. जमीर अहसन को दिया गया, जिसे उनकी बेटियों अतिया नूर और कुदसिया ज़मीर ने ग्रहण किया। मुशायरे का बिस्मिल्लाह प्रयागराज के जीशान फ़तेहपुरी ने किया। बुजुर्ग शायर हसन रायबरेली ने मां गंगा पर शेर पेश किए, जिससे पूरा माहौल मंत्रमुग्ध हो गया। इसी दिन लखनऊ के महेंद्र भीष्म के उपन्यास 'हां मै हूं' और अयोध्या की कवयित्री डॉ. मानसी द्विवेदी के गीत संग्रह 'नदी सी मै' पर गंभीर विमर्श भी हुआ।

समापन दिवस पर युवा गायिका दृष्टि पांडेय की सांस्कृतिक प्रस्तुतियों के बाद भजन संध्या और फिर फूलों की होली ने माहौल होलियाना कर दिया। 1 से 9 नवंबर तक नौ दिनों तक चला आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी पुस्तक मेला संस्कृति, साहित्य और मानवीय जुड़ाव का उत्सव बन गया, जिसने यह साबित किया कि रायबरेली की धरती पर किताबों के साथ भावनाओं-कलाओं की गूंज आज भी इसलिए आचार्य द्विवेदी साहित्य भाषा व्याकरण के साथ इतिहास भूगोल विज्ञान और कलाओं के भी पारखी थे। उनके निबंध 'संगीत के स्वर' और 'भारतीय चित्रकला' आज भी चाव से पढ़े-पढ़ाए जाते है।

## सृजनात्मक शक्ति | ओशो

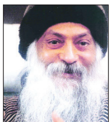

कभी आपने नहीं सोचा होगा, इतने पेंटर हुए, इतने मूर्तिकार हुए, इतने चित्रकार, इतने कवि, इतने आर्किटेक्ट, लेकिन स्त्री कोई एक बड़ी चित्रकार नहीं हुई! कोई एक स्त्री बडी आर्किटेक्ट, वास्तुकला में अग्रणी नहीं हुई! कोई स्त्री ने बहुत बड़े संगीत को जन्म नहीं दिया! कोई एक स्त्री ने कोई बहुत अद्भुत मूर्ति नहीं काटी! सृजन का सारा काम पुरुष ने किया है। और कई बार पुरुष को ऐसा खयाल आता है कि क्रिएटिव, सृजनात्मक शक्ति हमारे पास है। स्त्री के पास कोई सृजनात्मक शक्ति नहीं है, लेकिन बात उलटी है। स्त्री पुरुष को पैदा करने में इतना बड़ा श्रम कर लेती है कि और कोई सृजन करने कि जरूरत नहीं रह जाती। स्त्री के पास अपना एक क्रिएटिव एक्ट है। एक सृजनात्मक कृत्य है, जो इतना बड़ा कि न, पत्थर की मूर्ति बनाना और एक जीवित व्यक्ति को बड़ा करना...लेकिन स्त्री के काम को हमने सहज स्वीकार कर लिया है। और इसीलिए स्त्री की सारी सृजनात्मक शक्ति उसके मां बनने में लग जाती है। उसके पास और कोई सृजन की न सुविधा बचती है, न शक्ति बचती है। न कोई आयाम, कोई डायमेंशन बचता है। न सोचने का सवाल है। एक छोटे से घर को सुंदर बनाने में लेकिन हम कहेंगे, छोटे से घर को सुंदर बनाना, कोई माइकल एंजिलो तो पैदा नहीं हो सकता, कोई वानगाग तो पैदा नहीं हो जाएगा। कोई इजरा पाउंड तो पैदा नहीं होगा। कोई कालिदास तो पैदा नहीं होगा। एक घर में ठहरता था, मैं हैरान हो गया। गरीब घर है। बहुत सम्पन्न नहीं है, लेकिन इतना साफ सुथरा, इतना स्वच्छ मैंने कोई घर नहीं देखा, लेकिन उस घर की प्रशंसा करने कोई कभी नहीं जाएगा। घर की गृहणी उस घर को ऐसा पवित्र बना रही है कि कोई मंदिर भी उतना स्वच्छ और पवित्र नहीं मालूम पड़ता है, लेकिन उसकी कौन फिक्र करेगा? कौन माइकेल एंजलो,कालिदास और वानगाग में उसकी गिनती करेगा? वह खो जाएगी। या : एक ऐसा काम कर रही है, जिसके लिए कोई प्रतिष्ठा नहीं मिलेगी। क्यों नहीं मिलेगी? नहीं मिलेगी यह, यह दुनियां पुरुषों की दुनिया है। स्त्री के विकास, स्त्री की संभावनाओं, स्त्रियों की जो पोटेंशियलिटीज हैं, उनके जो आयाम, ऊंचाइयां हैं, उनको हमने गिनती में ही नहीं लिया है। अगर एक आदमी गणित में कोई नई खोज कर ले तो नोबल प्राइज मिल सकता है, लेकिन स्त्रियां निरंतर सृजन के बहुत नये आयाम खोजती हैं। कोई नोबल प्राइज उनके लिए नहीं है!

## रीडर्स मेल

### दोनों हाथों से बजती है ताली

परिवर्तन प्रकृति का नियम है। समय के साथ कानूनों और व्यवस्था में थोड़ा बहुत परिवर्तन भी जरूरी होता है। मोदी सरकार ने देश में आर्थिक सुधार करने के लिए जीएसटी का फैसला लिया था, लेकिन यह फैसला बिना किसी तैयारी और उतावलेपन में लिया गया। क्योंकि जीएसटी के लिए नित प्रतिदिन सरकार ने इसके नियम बदले। बार-बार जीएसटी में बदलाव करने से क्या उपभोक्ता और छोटे-बड़े दुकानदार असमंजस के चक्रव्यूह में नहीं घिरे होंगे? हालांकि अब लगभग व्यापारी और कारोबारी जीएसटी की परिभाषा समझ चुके हैं। सरकार को चाहिए कि वो कि वो कर की कमाई मे पारर्दिशता लाने के लिए भी कुछ कदम उठाए अर्थात करों की कमाई की बैलेस सीट मीडिया के जरिए जन-जन तक पहुंचाए। अगर सरकार हरेक नागरिक को अच्छी आधुनिक बच्चों की शिक्षा की टेंशन ले, बेरोजगारों को उनकी योग्यता अनुभव अनुसार भत्ता या नौकरी का इंतजाम करे और बुढ़ापे को सुरक्षित करने के लिए गंभीरता दिखाए तो आमजन भी हर तरह के कर, चाहे वो प्रॉपर्टी कर हो या इनकम देने के प्रति गंभीरता दिखाएगा।

**राम सिंह चौहान, इंदौर**

### नोबेल के लिए ट्रंप की जिद

अमेरिका के राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप का नोबेल शांति पुरस्कार के पीछे भागना राजनीति से ज्यादा व्यक्तिगत अहंकार का मामला लगता है। उन्हें हर हाल में यह साबित करना है कि वे बराक ओबामा से किसी भी मायने में पीछे नहीं हैं। ओबामा को यह सम्मान मिला था, तो ट्रंप भी चाहते हैं कि इतिहास उन्हें उसी कतार में खड़ा करे। फर्क बस इतना है कि ओबामा को यह सम्मान उनकी शांति की सोच के लिए मिला था, जबकि ट्रंप इसे धमकी और दबाव की राजनीति से हासिल करना चाहते हैं। नॉर्वे के वित्त मंत्री को फोन पर टैरिफ की धमकी देना इस बात का सबूत है कि उनके लिए 'शांति' महज एक प्रदर्शन है। असलियत यह है कि ट्रंप की विदेश नीति कई बार युद्ध भड़काने वाले फैसलों से जुड़ी रही है। ईरान पर हमला, गाजा को हथियार देना या पाकिस्तान से मिली-जुली राजनीति शांति नहीं, बल्कि तनाव को ही बढ़ावा देती है।

**रामेन्द्र तिवारी, ई मेल से**

### शिक्षा-चिकित्सा पर बेपरवाही

शिक्षा एवं चिकित्सा किसी भी देश के नागरिक के लिए प्रथम मूलभूत आवश्यकताएं हैं जिस पर केंद्र सरकार और राज्य सरकार अपने जिम्मेदारी निभा रही है। बावजूद इसके देश में शिक्षा और चिकित्सा आम आदमी की पहुंच से आज भी दूर है। इसी को रेखांकित करते हुए राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रमुख मोहन भागवत ने शिक्षा एवं चिकित्सा के निजीकरण एवं बाजारीकरण पर कड़ा प्रहार किया है। मोहन भागवत का यह बयान साहसिक एवं निष्पक्ष बयान है जिस पर केंद्र एवं राज्य सरकारों को जरूर संज्ञान लेना चाहिए और भविष्य में शिक्षा एवं स्वास्थ्य आम आदमी के पहुंच से बाहर ना हो। आम आदमी के लिए टेक्निकल/मेडिकल शिक्षा के लिए निजी क्षेत्र के विश्वविद्यालय में दाखिला एक बहुत बड़ी समस्या है। गरीबों की जिंदगी भर की कमाई फीस देने में लग जाती है। यह भी कड़वा सच है कि आज तक 'सबको शिक्षा समान शिक्षा' का लक्ष्य किसी राज्य सरकार ने पूरा नहीं किया है।

**वीरेन्द्र भुल्लर, दिल्ली**
letter.editorsahara@gmail.com

हमें गर्व है हम भारतीय हैं

राष्ट्रीय सहारा
● राष्ट्रीयता ● कर्त्तव्य ● समर्पण
**सहारा इण्डिया मास कम्युनिकेशन** के लिए प्रकाशक एवं मुद्रक **जिया कादरी** द्वारा सहारा इंडिया मास कम्युनिकेशन द्वारा हिन्दुस्तान मीडिया वेन्चर्स लिमिटेड प्रेस, मौजा-दरियापुर, पुलिस स्टेशन-शाहपुर, दानापुर, पटना से मुद्रित तथा चतुर्थ तल, सहारा इण्डिया विहार, बोरिंग रोड क्रासिंग, पटना से प्रकाशित। । स्थानीय संपादक - संजय त्रिपाठी *।
**पटना कार्यालय**- 3911448/417/454/422, **फैक्स :** 2535935,2520760 **विज्ञापन**-3911455/434, **प्रसार**- 3911451/428
वर्ष - 20, अंक 6836
आर.एन.आई. सं. -बीआईएचएचआईएन/2006/18082 Postal Reg. No. : R-10/NP-50/06-07
*इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु उत्तरदायी

CCI NG 3.7 Product: NBTMumbaiBS PubDate: 20-11-2025 Zone: Mumbai Edition: 1 Page: NBTMP8 User: cci Time: 11-19-2025 23:01 Color:

प्रकृति को गहराई से देखिए, फिर आप सब कुछ बेहतर समझ पाएंगे।
– *अल्बर्ट आइंस्टाइन*

## राहत नहीं, सख्ती चाहिए

**विभिन्न परियोजनाओं** को पर्यावरणीय मंजूरी के मामले में सुप्रीम कोर्ट ने अपने ही फैसले को पलट कर भले केंद्र और राज्य सरकारों को राहत दे दी हो, लेकिन इससे पर्यावरण को राहत नहीं मिलने वाली। क्लाइमेट चेंज के खतरों को देखते हुए अब कठोर निर्णयों की जरूरत है। शीर्ष अदालत के पास भविष्य के लिए नजीर पेश करने का मौका था।

**पुराना आदेश ।** सुप्रीम कोर्ट का पहला आदेश 16 मई को आया था। इसके मुताबिक, लगभग 20 हजार करोड़ रुपये के उन प्रॉजेक्ट्स को ध्वस्त करने का आदेश दिया गया था, जिन्हें बनाने से पहले नियमों के मुताबिक पर्यावरणीय मंजूरी नहीं ली गई थी।

SC ने फैसला पलटा

इन्हें बाद में जुर्माना वसूलने के बाद क्लियरेंस मिली। अब नए फैसले में सुप्रीम कोर्ट ने कहा है कि अगर मई का आदेश वापस नहीं लिया जाता तो इसके गंभीर परिणाम होंगे।

**छूट कब तक ।** तीन जजों की बेंच में शामिल चीफ जस्टिस बीआर गवई का सवाल बिल्कुल वाजिब है कि क्या ऐसी सभी परियोजनाओं को ध्वस्त कर देना और सरकारी खजाने से खर्च किए गए धन को कूड़ेदान में जाने देना जनहित में होगा? लेकिन, यह सवाल भी उठता है कि सार्वजनिक हित के नाम पर सार्वजनिक हित को नुकसान पहुंचाने वाले कामों में कब तक ढील दी जाएगी। इन परियोजनाओं को गिराने से एक बार नुकसान होता, लेकिन इनकी वजह से पर्यावरण को जो क्षति पहुंची, उसका असर शायद कभी कम न किया जा सके।

**सबक नहीं ।** विकास परियोजनाओं के नाम पर प्रकृति से होने वाली छेड़छाड़ का दुष्परिणाम आर्थिक नुकसान से ज्यादा गंभीर है। देश के हिमालयी राज्य इसका उदाहरण हैं, जहां इस साल आपदाओं की बारिश हुई- या फिर राजधानी दिल्ली और दूसरे महानगर जिनमें सांस लेना लगातार दूभर होता जा रहा है। इसके बाद भी सरकारें और जिम्मेदार संस्थाएं सबक नहीं ले रहीं। ग्रेट निकोबार आईलैंड प्रॉजेक्ट जैसी योजनाएं पर्यावरणविदों को गंभीर चिंता में डालने वाली हैं।

**हरियाली पर संकट ।** आदर्श रूप से 33% भूभाग पर वन या हरियाली होनी चाहिए, लेकिन है लगभग 25%। ग्लोबल फॉरेस्ट वॉच के मुताबिक, 2001 से लेकर अभी तक भारत में 20 लाख हेक्टेयर से ज्यादा हरा-भरा क्षेत्र खत्म हो चुका है, हालांकि इस दौरान पौधरोपण भी खूब हुआ। सुप्रीम कोर्ट के फैसले वाले दिन ही क्लाइमेट चेंज परफॉर्मेंस इंडेक्स भी जारी हुआ और इसमें भारत 13 स्थान फिसलकर 23वें पर पहुंच गया है। इसका सीधा मतलब है कि देश की पर्यावरणीय नीति असर नहीं दिखा रही। ऐसे वक्त में राहत कानून तोड़ने वालों को नहीं, पर्यावरण को चाहिए।

### गुस्ताखी माफ़

## जिसका ताऊ प्रेसिडेंट

**'क्या रे** बल्लू, कोई और काम नहीं है क्या तुझे, जब देखो धमाचौकड़ी मचाने में लगा रहता है?' ताजा तरकारी की तलब में झोला लेकर निकला ही था कि यह चंट बच्चा दिख गया। गली के बच्चों का मजमा जुटा रखा था।

अखिलेश प्रताप सिंह

आवाज सुनते ही उसने गुड इवनिंग अंकल का नारा लगाया। दुआ-सलाम करने में कोई कोताही नहीं करता ये। जहां किसी ने डपटा, ऊर्ध्वाधर से क्षैतिज होने में जरा भी देर नहीं लगाता। उसने ऐलान किया, 'अंकल, इस रोड को चौड़ा किया जाएगा। इधर जो किनारे फुटपाथ है, यह खत्म हो जाएगा। गाड़ियों के निकलने को ज्यादा जगह हो जाएगी। सैटरडे-संडे को कॉलोनी में जाम लग जाता है ना, जब हम लोग शॉपिंग को जाते हैं।'

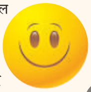

'यह तो गलत है बल्लू, मैंने टोका। पैदल चलने वालों का क्या होगा? ये जो अपने यहां सारे कानून मानने वाले लोग हैं, इन्होंने पहले ही खेल कर रखा है। जितनी अपनी जमीन, वहां तक चारदीवारी और उसके बाद स्लोप अलग से बना रखा है। जहां-तहां पैदल चलने वालों की जगह घेर रखी है। अब ये एक नई बदमाशी शुरू हो गई।' पर जब उसके चेहरे पर कोई शिकन नहीं आई, तो मैंने अपना बैटिंग स्टांस बदलकर सवाल दागा, 'तुम लोगों ने इसके लिए पूछा है किसी से? कम से कम कॉलोनी के प्रेसिडेंट से तो पूछ लेते? वे तो तेरे ताऊ ठहरे। जा, पूछकर आ।'

बल्लू मुस्कुराया। मैं समझा गया कि अब ये आउटस्विंगर फेकने वाला है। 'अंकल, जिसके ताऊ प्रेसिडेंट हों, उसे किसी से पूछने की जरूरत है क्या? कैसी बातें करते हैं आप। और यह तो विकास हो रहा है।' 'पर पहले से मंजूरी लेकर काम करना ठीक होता है बल्लू, दूसरे की जगह घेरने पर बाद में पेनल्टी भी लग सकती है', मैंने बैकफुट पर आते हुए समझाया। पर वह कहां मानने वाला था। 'पेनल्टी लगेगी तो लग जाए, जो काम शुरू हो गया, वह तो बंद नहीं होगा अंकल। परमिशन बैक डेट से भी मिल जाएगी। विकास का पैसा बर्बाद नहीं होने पाएगा। आप पर्यावरण, प्रदूषण और न जाने किस चिंता में दुबले होते रहिए। जिसका ताऊ प्रेसिडेंट, उसका काम नहीं रुकने वाला।'

### एकदा

संकलन : **दीनदयाल मुरारका**

## कला की क़ीमत

**12 नवंबर** 1840 को जन्मे ऑगस्ट रोडिन आधुनिक मूर्तिकला के जनक माने जाते हैं। बचपन से ही चित्रकारी में डूबे रहने वाले रॉडिन को फ्रांस सरकार ने उनके असाधारण योगदान के लिए

'लीजन ऑफ ऑनर' जैसे सर्वोच्च पुरस्कार से सम्मानित किया था। एक बार मशहूर नाटककार जॉर्ज बर्नार्ड शॉ ने रोडिन से अपनी मूर्ति बनाने का आग्रह किया। कीमत तय हुई 1000 पाउंड। रॉडिन ने शॉ के सामने बैठकर उनकी 10-12 मूर्तियां बनाईं, पर उनमें से एक भी उन्हें अपनी कलात्मक संतुष्टि के योग्य नहीं लगी। आश्चर्य यह था कि शॉ को उनमें से कुछ मूर्तियां बहुत पसंद आई थीं। एक दिन शॉ ने मुस्कुराते हुए पूछा, 'मेरी मूर्ति कब बनेगी? इतना समय लगाएंगे तो कमाएंगे क्या?' रोडिन ने शांत स्वर में कहा, 'जब कोई अच्छा मॉडल मिल जाए, फिर समय या पैसे का ध्यान नहीं रहता।' शॉ ने हंसकर कहा, 'अगर मैं अच्छा मॉडल हूं, तो आपको मुझसे पैसे लेने के बजाय मुझे भुगतान करना चाहिए।' रोडिन गंभीर हो गए। बोले, 'भुगतान तो मिलेगा, लेकिन उस दिन, जब आपको अपनी पहचान पर इस बात से गर्व होगा कि आपके पास रोडिन की बनाई मूर्ति है।' कला का असली मूल्य कीमत में नहीं, उसकी गरिमा में छिपा होता है।

# पितृसत्ता के लिए चुनौती है बराबरी की भाषा?

## देखना ज़रूरी है कि 'भाषा के संस्कार' महिलाओं को दोबारा अदृश्य न कर दें

अल्पयू सिंह

**'जी मैडम** सर'। डेल्ही क्राइम 3 में दिल्ली पुलिस की बड़ी अफ़सर वर्तिका चतुर्वेदी (शेफाली शाह) को उनके तहत काम करने वाला स्टाफ यही कहकर बुलाता है। मैडम सर का यही संबोधन जेंडर, भाषा और पावर के उस जटिल रिश्ते को सामने रख देता है, जो पितृसत्ता की देन है। अफ़सर महिला है तो 'मैडम' और ओहदे और आभामंडल में 'सर'। पितृसत्ता की पिच पर अब महिलाएं ना सिर्फ खेल रही हैं बल्कि शानदार प्रदर्शन कर रही हैं। खिलाड़ी भले ही नए हों, लेकिन शब्दावली और संबोधन तो नए गढ़े नहीं गए।

**भाषा भेद खोलती है ।** अगर किसी समझदार शख्स ने कभी ये कहा था कि भाषा भेद खोलती है तो गलत नहीं है। समाज में किसी भी वर्ग के साथ अगर भेदभाव होता है, तो भाषा में इस भेदभाव को बहुत आसानी से पढ़ा और समझा जा सकता है। लिंगभेद भी ग़ैरबराबरी की इस भाषा से अलग नहीं रहा है। भाषा ये तय करती है कि किसके अस्तित्व और पहचान को मान्य करार दिया जाए, किसे ख़ारिज किया जाए और किसे अदृश्य साबित किया जाए।

भाषा पर पितृसत्ता के दबदबे की वजह से ये दुनिया पुरुषों की नज़र से देखी गई है। बतौर इतिहास उनकी नज़र से पढ़ी गई है। सत्तर के दशक में भाषाविद रॉबिन लैकॉफ ने लैंग्वेज एंड विमिंस प्लेस के ज़रिए ज़ोरदार तरीक़े से बताया है कि कैसे भाषा लैंगिक गैरबराबरी के मूल में है। उन्होंने कहा कि इसमें बदलाव की ज़रूरत है। दरअसल, भाषा की यही लैंगिक राजनीति स्त्रियों को कमतर दिखाने से लेकर उन्हें अदृश्य बनाने तक में योगदान देती है।

ऐतिहासिक तौर पर ग़ैरबराबरी की दीवार खड़ी करने में भाषा सबसे उम्दा सीमेंट साबित हुई है। क्यों अंग्रेज़ी के Spinster (स्पिंस्टर) का पुरुषों के समानार्थ कोई शब्द नहीं। बैचलर इस्तेमाल होता है, लेकिन दोनों शब्दों में फर्क है। महिलाओं के लिए द्वेष से जुड़े इस संदर्भ को समझना इतना भी मुश्किल नहीं। 'क्यों औरतों की तरह रो रहे हो' जैसी कहावतों से भाषा की मिसोजनी दिखती रही है। चांद पर पहली बार कदम रखने वाले नील आर्मस्ट्रॉन्ग ने वहां पहुंचकर एक मशहूर बात कही थी, 'मनुष्य के लिए ये एक छोटा कदम, मानवता के लिए एक बड़ी छलांग है।' अंग्रेज़ी में इस वाक्य में Man और Mankind जैसे शब्द इस्तेमाल हुए हैं। अपने भाषाई इतिहास में हमें मानवजाति, मानवनिर्मित जैसे शब्दों में कभी स्त्री (Woman) क्यों नहीं दिखती?

ऐसा ही कुछ शादीशुदा होने को लेकर भी है। हिंदी समेत कई भाषाओं में मर्द हमेशा श्रीमान ही रहते हैं, शादी से पहले या बाद में। लेकिन महिलाएं सुश्री से श्रीमती में तब्दील हो जाती हैं। हालांकि बीते वर्षों में बदलाव दिखे हैं। विम्बलडन और फ्रेंच ओपन जैसे टूर्नामेंट ने खिलाड़ियों के लिए मिस और मिसेज़ संबोधन इस्तेमाल करना बंद कर दिया है। यानी भाषा की लैंगिक राजनीति को ना सिर्फ समझा जा रहा है बल्कि उसमें बदलाव हो रहा है। हालांकि बहुत कुछ किया जाना अभी बाक़ी है।

**नई शब्दावली पर बहस हो ।** कई स्तरों पर कई देश और कई समाज अपनी भाषाओं में बदलाव ला रहे हैं। चूंकि पेशेवर संबंध में आधी आबादी के लिए नए शब्द नहीं गढ़े गए हैं, इसलिए कई बार जो शब्दावली सामने आती है, उसमें लेडी डॉक्टर, करियर वुमन जैसे शब्द भी दिखाई देते हैं। लेकिन बोलचाल की भाषा में जल्दबाज़ी में शामिल हुए इन शब्दों के साथ भी दिक्कतें कम नहीं हैं। क्या कभी किसी ने इंजीनियर के लिए पुरुष इंजीनियर या पुरुष आर्किटेक्ट जैसे संबोधन कभी सुने हैं? यानी भाषा का व्यापक तरीक़े से बदलाव होना जरूरी है। लेकिन नई भाषा गढ़ने के लिए वृहद विचार मंथन और विमर्श की ज़रूरत है। बराबरी के सिद्धांत को मानते हुए, समाज के हर तबके की आवाज़ सुनी जानी चाहिए। ख़ासतौर पर यह जानना बहुत जरूरी है कि महिलाएं इसके बारे में क्या सोचती हैं, ये जानना बहुत जरूरी है। बड़ी बहस में थर्ड जेंडर की भी हिस्सेदारी होनी चाहिए। भाषा सबकी है, सब बहस करें और देखें कि किस तरह भाषा को ज्यादा समावेशी, ज्यादा खूबसूरत बनाया जा सकता है। कैसे पेशेवर ज़िम्मेदारियों से जुड़े महिलाओं के 'अपने' शब्द इसमें शामिल हों, जिससे महिलाएं 'भाषा के संस्कार' के नाम पर दोबारा अदृश्य ना हो जाएं।

**बराबरी = की भाषा**

नवभारत टाइम्स की पहल

AI Image

**भाषा में पूर्वाग्रह**

- 'क्यों औरतों की तरह रो रहे हो,' है भेदभाव की मिसाल
- 'पुरुष श्रीमान ही रहते हैं, महिलाएं सुश्री से श्रीमती
- मानवनिर्मित जैसे शब्दों में स्त्री नजर नहीं आती

**मुहिम पर सवाल**

- लड़कियां खुद हर क्षेत्र में बराबरी हासिल कर रही हैं
- सैनिक, कप्तान, पत्रकार के तौर पर खूब फब रही हैं
- नया विशेषण देकर उनसे ये उपाधियां छीनना गलत

### आमने-सामने

## लड़कियों में बराबरी का भाव नहीं लाता उन्हें अलग-थलग करता है ऐसा प्रयोग

विनीता मिश्रा

**मैं कई** वर्षों से नवभारत टाइम्स (NBT) की नियमित पाठिका हूं। बचपन में हम लोग समाचारपत्र पढ़ते थे तो उनकी भाषा सहज स्वाभाविक रूप से बोली जाने वाली हिंदी थी। जिस प्रकार बोलचाल की अंग्रेजी को सुधारने के लिए अंग्रेजी अख़बार पढ़ने को कहा जाता था, उसी प्रकार हिंदी पर पकड़ बनाए रखने के लिए हिंदी समाचारपत्र पढ़वाए जाते थे, खासकर संपादकीय पृष्ठ। उस समय न्यायालय, उच्च न्यायालय, उच्चतम न्यायालय, आक्रमण, उग्रवाद, राज्य, अभियंता, जिलाधिकारी, चिकित्सक, अधीक्षक, परिसर जैसे शब्द समाचारपत्रों से सीखने को मिले। ऐसे शब्दों का प्रयोग बोलचाल में और निबंध लेखन आदि में बड़े काम आता था।

समय बदला, भाषा बदली। साथ ही समाचारपत्रों की भाषा भी बदलती रही। हिंदी उर्दू की मिश्रित हिंदुस्तानी के साथ कुछ अंग्रेजी शब्दों के प्रयोग होने लगे। यह बदलाव बोली जाने वाली भाषा के साथ इतनी सहजता से हुआ कि अख़बार पढ़ते-पढ़ते पता ही नहीं चला कब हिंदी का स्वरूप बदलने लगा। यह सब देश, काल और परिस्थिति का हिस्सा था।

**अलग विशेषण, संज्ञा देने की मुहिम ।** एक दिन अचानक NBT में बराबरी की भाषा शीर्षक से एक विषय शुरू किया गया। जब पढ़ा तो पाया कि यह तो महिलाओं के लिए अलग विशेषण और संज्ञा देने की मुहिम है। तब लगा कि अभी तक तो भाषाई बदलाव के साथ यह अखबार समृद्ध हिंदी भाषा के उन शब्दों को भी भुला चुका है जो इस भाषा को समृद्ध, सक्षम और सुंदर बनाते हैं। आज हम हिंदी के कितने ही शब्दों को खोते जा रहे हैं।

मैं एक लेखिका भी हूं। अतः अपने लेखन में हिंदी के शब्दों का ही प्रयोग करती हूं। पहले से मौजूद शब्दों को त्यागकर स्त्रीलिंग के लिए नए शब्दों को रचने का जो कार्य इस अखबार में शुरू हुआ, उससे न केवल मेरा भाषाई प्रेम बल्कि मेरे भीतर का स्त्रीत्व भी आहत हुआ। 21वीं सदी में ही तो महिलाओं को जन्म के अधिकार, शिक्षा के अधिकार, खेल के अधिकार, आत्मनिर्भरता के अधिकार; बराबरी के रूप में मिलने आरंभ हुए थे। अभी तो भारतीय बालिका ने गगन में ऊंची उड़ान भरना, गौरव हासिल करना शुरू किया था कि इस कॉलम ने नए शीर्षक गढ़ उसे फिर से सोचने को विवश कर दिया कि तुम सैनिक नहीं सैनिका हो, पत्रकार नहीं पत्रकारा हो, कलाकार नहीं कलाकारा हो।

आज विश्व में लिंगभेद को दूर करने के लिए संज्ञा-सर्वनाम को बराबर किया जा रहा है, एक्टर-एक्ट्रेस के लिए एक्टर, विलेन-वैंप के लिए विलेन, ऑथर-ऑथ्रेस के लिए ऑथर का प्रयोग हो रहा है। यहां तक कि He और She जैसे शब्दों का भी चलन बंद हो रहा है, उनके लिए This\That का प्रयोग होने लगा है। विकसित देशों में थर्ड जेंडर भी काम-काज की मुख्य धारा से जुड़ रहा है। वे किसी तरह के भेदभाव का सामना कर असहज न महसूस करें इसके लिए भी लिंग सूचक शब्दों का प्रयोग बंद किया जा रहा है।

भूलना नहीं चाहिए कि हमारे देश में एक सक्षम-सशक्त महिला प्रधानमंत्री हो चुकी हैं - 'प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी'। हमारे देश में पहले भी महिला राष्ट्रपति हो चुकी हैं और वर्तमान में भी हैं। अगर हम इन्हें मुख्यमंत्रानी, प्रधानमंत्रानी, राष्ट्रपत्नी कहने लगेंगे तो निश्चय ही विश्व में सबसे पीछे खड़े नज़र आएंगे।

**आहत करता है यह प्रयोग ।** ऐसी उपाधियां हम स्त्रियों के मन में कौन सा भाव भरेंगी यह कहना भी अनुचित लग रहा है। यदि श्रीमती इंदिरा गांधी प्रधानमंत्री हो सकती हैं, श्रीमती द्रौपदी मुर्मु राष्ट्रपति हो सकती हैं तो विनीता मिश्रा लेखक क्यों नहीं हो सकतीं, हरमनप्रीत कौर कप्तान और विजेता क्यों नहीं हो सकतीं? क्या ये संज्ञाएं अधिक बराबरी की और सम्मानजनक नहीं लगतीं जो इन्हें विजेत्री, कप्तानिन जैसे विशेषण बनाकर स्थापित किया जा रहा है! आज जब हम भारतीय समाज से जातिसूचक, कार्यसूचक, रंगसूचक, वर्णसूचक, क्षेत्रसूचक शब्दों को समाप्त कर रहे हैं तब फिर हम स्त्रियों को अलग-थलग कर लिंग का बोध करवाने वाले शब्दों के गढ़ने की आवश्यकता क्यों?

एनबीटी की पहल 'बराबरी की भाषा' पर आप क्या सोचते हैं, **nbtreader@timesofindia.com** /वट्सऐप नंबर **92207 47220** पर अपने विचार शेयर करें।

### कांटे की बात

मुख्यमंत्री नीतीश कुमार NDA विधायक दल के नेता चुने गए हैं। बिहार की जनता ने हमारे अलायंस को प्रचंड जीत दी है। इसलिए NDA के सामने उनके विश्वास पर खरा उतरने की जिम्मेदारी है।

चिराग पासवान, *LJP (RV) के नेता*

### असंभव बातचीत

## आज के झूठ से कल का सच नहीं बदलेगा

*बांग्लादेश की पूर्व प्रधानमंत्री शेख हसीना को उनके देश में मौत की सजा सुनाई गई है। न्यायिक प्रक्रिया और लोकतंत्र की भावना के खिलाफ दिए गए इस फैसले पर शेख हसीना के पिता शेख मुजीबुर्रहमान क्या कहते?*

AI Image

**बंगबंधु** ने बेटी के चेहरे पर चिंता और उदासी की लकीरों को पढ़ लिया था, 'तुम्हें पता है कि यह फैसला जनता का नहीं। झूठ कुछ दिनों तक और कुछ लोगों के सामने खड़ा किया जा सकता है, 17.5 करोड़ लोगों के सामने नहीं।' 'हां, लेकिन मुझे बात रखने का मौका तक नहीं मिला। जनता समझेगी कि मैंने उन्हें छोड़ दिया।' 'जनता हमारी सोच से ज्यादा समझदार है। उसे थोड़े समय के लिए धोखे में रखा जा सकता है, पर हमेशा के लिए नहीं। मेरी कीमत उन्हें मेरी मौत के बाद समझ आई।' 'लेकिन अब वो आपको भूल रहे हैं।' 'फर्क नहीं पड़ता। बांग्लादेश जनता के लिए बना था, किसी नेता के लिए नहीं – मेरे लिए भी नहीं। कोई हिंसा या मुकदमे के नाम पर हुआ कोई ड्रामा इतिहास नहीं मिटा सकता।'

## इस धमाके के सबक याद रखने होंगे

10 नवंबर को लाल किले के पास जो आत्मघाती हमला हुआ, उसे रोका जा सकता था। इस हमले की साजिश

विशाल आनंद शर्मा

का एक सिरा 30 अक्टूबर को ही जम्मू-कश्मीर पुलिस के हाथ आ चुका था। फिर यह गलती क्यों हुई? 17 अक्टूबर को जम्मू-कश्मीर के नौगाम में एक पोस्टर लगा, जिसकी वजह से अक्टूबर के अंत में राज्य पुलिस की एक टीम फरीदाबाद आई। इस टीम ने 30 अक्टूबर को डॉ. मुजम्मिल को पकड़ा।

**कैसी पूछताछ हुई ।** इसी मुजम्मिल के मॉडयूल के सहयोगी डॉ. उमर ने 10 नवंबर को लाल किले के पास आत्मघाती हमला किया। सवाल है कि इन 10 दिनों में पुलिस डॉ. मुजम्मिल से पूछताछ में इस हमले की योजना के बारे में क्यों पता नहीं कर पाई? पुलिस को पता नहीं था कि डॉ. उमर कहां है, किस कार से निकला है और उसका टारगेट क्या है? उमर जिस गाड़ी से फरार हुआ, क्या उसका नंबर हरियाणा या जम्मू-कश्मीर पुलिस के पास नहीं था? क्या उसके भागने का एक भी CCTV फुटेज उस समय नहीं था?

**दिल्ली पुलिस अनजान ।** अगर, इन दोनों राज्यों की पुलिस ने डॉ. मुजम्मिल की गिरफ्तारी की जानकारी दिल्ली पुलिस को दी होती तो मुमकिन है कि डॉ. उमर किसी चेकपोस्ट पर पकड़ा जाता। मगर ऐसा नहीं हुआ। अलबत्ता, 10 नवंबर की दोपहर हरियाणा पुलिस ने एक प्रेस कॉन्फ्रेंस की, जिसमें उसने आतंकी मॉड्यूल से 3000 किलो अमोनियम नाइट्रेट की बरामदगी को बड़ी कामयाबी बताया। उसी शाम उस मॉड्यूल के फरार शख्स डॉ. उमर ने लाल किले के पास धमाका किया। इसमें गलती किसकी है?

**मीटिंग्स का हासिल ।** दिल्ली से फरीदाबाद का बॉर्डर लगता है। आए दिन दिल्ली पुलिस की सटे हुए राज्यों की पुलिस के साथ 'को-ऑर्डिनेशन मीटिंग्स' होती हैं। यह वर्षों से होता आया है। मगर लाल किले मामले से लगता है कि इन मीटिंग्स से कुछ हासिल नहीं हुआ। अगर इन 'को-ऑर्डिनेशन मीटिंग्स' का ग्राउंड लेवल पर असर होता तो डॉ. उमर कार में विस्फोटक लादकर दिल्ली न पहुंच पाता।

**नंबर प्लेट तक नहीं बदली ।** उसने तो उस कार की नंबर प्लेट तक नहीं बदली थी। वह दिल्ली में मेन रास्ते से दाखिल हुआ। यानी उसने एंट्री वहां से की, जहां CCTV लगे हैं। वह चाहता तो इससे बचने के लिए बदरपुर बॉर्डर के कच्चे-पक्के रास्तों से दिल्ली में दाखिल होता। लेकिन वह जानता होगा कि कोई भी उसकी कार को नहीं रोकेगा और हुआ भी वैसा ही। अगर दिल्ली पुलिस इंटेलिजेंस इनपुट पर उस समय अलर्ट होती तो डॉ. उमर कार की नंबर प्लेट भी बदलता। यह भी मुमकिन था कि उसे सुरक्षा एजेंसियां जहां भी रोकतीं, वह वहीं आत्मघाती धमाका कर देता।

### दिल्ली ब्लास्ट

**पुलिस पर सवाल ।** इस आशंका की वजह जम्मू-कश्मीर पुलिस का ट्वीट है। डॉ. मुजम्मिल और बाकियों की गिरफ्तारी के बाद उसने पोस्ट किया कि 'तुम भाग तो सकते हो, छिप नहीं सकते'। तो क्या जम्मू-कश्मीर पुलिस को डॉ. उमर की साजिश का पता चल चुका था? हैरानी की बात यह भी है कि 17 अक्टूबर को पोस्टर कश्मीर में लगा और डॉक्टर मॉड्यूल की साजिश का बेस कैंप फरीदाबाद में था। जाहिर है डॉ. उमर अपने आकाओं का हुक्म बजाना चाहता था क्योंकि उसे पता चल चुका था कि डॉक्टर मॉड्यूल के लोग धीरे-धीरे पकड़े जा रहे हैं।

**भविष्य के सबक ।** इस पूरे मामले में कई सवालों के जवाब अभी मिलने हैं। क्योंकि इनसे भविष्य में ऐसे किसी खतरे से निपटने में मदद मिलेगी। आतंकी वारदात को अगर पुलिस और जांच एजेंसियों के बीच बेहतर तालमेल से पहले ही रोका जा सका तो बेगुनाहों के खून से धरती लाल नहीं होगी।

THE SPEAKING TREE

और पढ़ने के लिए देखें
www.speakingtree.nbt.in

## पवित्र मन दुनियावी आकर्षणों से चंचल होना सीख लेता है

ब्रह्मा कुमारी शुक्ला

**मानव जीवन** में सफलता का सबसे बड़ा आधार मन की एकाग्रता है। मन को जोर-जबरदस्ती से नहीं, बल्कि प्यार और समझ से नियंत्रित किया जा सकता है। हमारा मन मूल रूप से पवित्र है, पर पुराने संस्कारों और दुनियावी आकर्षणों से चंचल हो जाता है। जब मन अस्थिर होता है, तो बुद्धि भी डगमगाने लगती है, और ऐसे कर्म हमें कमजोर बनाते हैं। मन-बुद्धि-संस्कारों का यह चक्र आत्मा को कर्मबंधन में बांध देता है। इसलिए कहा गया है- मन जीते, जगत जीते।

महाभारत में अर्जुन भी इसी संकट से जूझ रहे थे। उनमें शक्ति तो थी, पर मन पर काबू नहीं था। इसलिए भगवान कृष्ण ने उन्हें मन को ईश्वर में लगाने की सलाह दी। साथ ही निमित्त भाव अपनाने को कहा, ताकि कर्म करते हुए भी मन मोह और कमजोरी से मुक्त रहे। आज भी हमारे भीतर वही द्वंद चलते हैं, क्योंकि हमारा मन बाहरी चीजों में उलझा रहता है। सुख और शांति पाने के लिए मन को अंतर्मुखी बनाना जरूरी है।

नियमित आत्मचिंतन, ईश्वर चिंतन और समर्पण की भावना से मन स्थिर होता है। गीता कहती है- योग में स्थित होकर कर्म करो। यही योग, आत्मा का परमात्मा से प्रेम-भरा मानसिक मिलन है। जीवन की सफलता का मार्ग है।

**nbtedit@timesofindia.com** पर अपनी राय नाम-पते के साथ मेल करें।

**आर.एन.आई. पंजीयन नंबर 1613/1957** स्वत्वाधिकारी बेनेट, कोलमैन एंड कंपनी लिमिटेड के लिए आर. कृष्णमूर्ति द्वारा टाइम्स ऑफ इंडिया बिल्डिंग, डॉ. डी. एन. रोड, फोर्ट, मुंबई 400001 से प्रकाशित और उनके द्वारा (1) टाइम्स ऑफ इंडिया सबर्बन प्रेस, आकुर्ली रोड, निकट वेस्टर्न एक्सप्रेस हाइवे, कांदिवली (पू.) मुंबई 400101 एवं (2) टाइम्स ऑफ इंडिया प्रिंट सिटी, प्लॉट नं. 4, टी.टी.सी. इंडस्ट्रियल एरिया, ठाणे बेलापुर रोड, ऐरोली, नवी मुंबई-400708. फोन नं. (022) 2760 9999 ; फैक्सः (022) 2760 5275। फोन मुंबईः (022) 66353535, 22733535 रेस्पांसः (022) 66353636, 22733636 फैक्सः (022) 22731889, 22731144, कांदिवली (022) 28872324 से मुद्रित। **स्थानीय संपादक (मुंबई) : सुंदर चंद ठाकुर** (पी. आर. बी. अधिनियम के अंतर्गत समाचारों के चयन के लिए उत्तरदायी) सर्वाधिकार सुरक्षित। प्रकाशक की लिखित अनुमति के बिना संपूर्ण या आंशिक पुनर्प्रकाशन पूर्णतः प्रतिबंधित।
सड़क व रेल परिवहन सेवा शुल्कः मुंबई, ठाणे व रायगड जिलों के बाहर 1.00 रुपया। विमान सेवा शुल्कः रायपुर, नागपुर, गोवा एवं वाया 2.00 रुपये, इंदौर, चेन्नै एवं वाया 3.00 रुपये, अहमदाबाद, बेंगलुरु, कोचीन, कोयम्बतूर, एरनाकुलम, हैदराबाद, कोझीकोड, मंगलूर, त्रिवेंद्रम, उदयपुर, वाइजग एवं वाया 4.00 रुपये, दिल्ली, कोलकाता, एवं वाया 5.00 रुपये।

Machine Translated by Google



THE HINDU

# नियम तोड़ना

## पोस्ट-फैक्टो क्लीयरेंस अपवाद ही रहना चाहिए, नियम नहीं

टी सुप्रीम कोर्ट की एक बेंच का मई 2025 के अपने ऑर्डर को पलटने का बहुमत का फैसला, जिसने पोस्ट-फैक्टो एनवायर्नमेंटल क्लीयरेंस देने पर रोक लगा दी थी, यह दिखाता है कि एक बहुत ज़्यादा गलत इस्तेमाल किए गए कानून के ऐसे नतीजों से निपटना कितना मुश्किल है जिन्हें बदला नहीं जा सकता। यह विवाद एनवायर्नमेंट मिनिस्ट्री के उन तरीकों के रूप को लेकर भी है जिन्होंने उन छूटों को नॉर्मल बना दिया। एनवायर्नमेंट (प्रोटेक्शन)

एक्ट 1986 और 1994 और 2006 के EIA नोटिफ़िकेशन पहले के एनवायर्नमेंटल क्लीयरेंस (EC) के आधार पर बनाए गए हैं, जिसका मतलब है कि बड़े कंस्ट्रक्शन और इंडस्ट्रियल प्रोजेक्ट्स तब तक काम शुरू नहीं कर सकते जब तक कोई अथॉरिटी उनके नतीजों का अंदाज़ा न लगा ले।

कॉमन कॉज (2017) और एलेम्बिक फार्मास्यूटिकल्स (2020) समेत कोर्ट के फैसलों में पोस्ट-फैक्टो EC को गलत माना गया, जहां पहले EC ज़रूरी थी। मई में वनशक्ति में दिए गए ऑर्डर में इसे ऐसे प्रोजेक्ट्स के लिए पोस्ट-फैक्टो EC को पूरी तरह से खारिज करने के तौर पर पढ़ा गया। नया बहुमत यह नहीं कहता कि 'EC rst' अब नियम नहीं है, बल्कि एलेम्बिक, डी. स्वामी और दूसरों पर भरोसा करके पोस्ट-फैक्टो क्लीयरेंस के लिए एक छोटी सी जगह ढूंढता है, ताकि 'रेगुलराइजेशन' की इजाज़त दी जा सके, जब पहले से ही काफी रिसोर्स मौजूद हों।

dy किया गया है, आमतौर पर nes के साथ। इसका मतलब अभी भी यह है कि मंत्रालय 'EC rst' को कानूनी डिफ़ॉल्ट के तौर पर बनाए रख सकता है और सिर्फ़ बहुत कम, बहुत मुश्किल मामलों में ही पोस्ट-फैक्टो क्लियरेंस की इजाज़त दे सकता है। किसी भी मामले में EC सिस्टम की भावना एक्सएंटे बनी हुई है।

निर्माण शुरू होने या समाप्त होने के बाद दी गई मंजूरी ईआईए के तर्क को नहीं दोहरा सकती, जो कि संभावित संचयी परिणाम शुरू होने से पहले पर्यावरण संबंधी निर्णय लेना है। पोस्ट-फैक्टो मंजूरी केवल दंड लगा सकती है, शमन निर्धारित कर सकती है या बंद करने या विध्वंस का आदेश दे सकती है। भले ही न्यायपालिका अब कुछ परिस्थितियों में ऐसी ईसी की अनुमति दे, लेकिन मंजूरी सुधारात्मक होगी और 1990 के दशक से भारत में पर्यावरणीय न्यायशास्त्र की संरचना के साथ असहज होगी। अतीत और भविष्य के उल्लंघनकर्ताओं के साथ अलग-अलग व्यवहार के बारे में बहुमत की चिंता भी समझ में आती है, भले ही इसका उपाय न हो। वनशक्ति ने 2017 के नोटिस और बाद के पर्यावरण मंत्रालय के कार्यालय ज्ञापनों को रद्द कर दिया,

ज़्यादातर लोगों ने इसे भेदभाव वाला माना, जो सही है, लेकिन एक नरम सिस्टम से सख्त सिस्टम में बदलाव के दौरान रेगुलेटरी हाउसकीपिंग के दौरान अलग तरह का बर्ताव होना उम्मीद के मुताबिक है। इसके होने का मतलब यह नहीं है कि पुराने रास्ते को फिर से शुरू किया जाए। कोर्ट ने पोस्ट-फैक्टो ECs पर लगी रोक को भी वापस ले लिया है और कानूनी सवाल को फिर से खोल दिया है, जिससे पता चलता है कि सीमित पोस्ट-फैक्टो रेगुलराइजेशन अपने आप में नामुमकिन नहीं है। आखिर में, मिनिस्ट्री को पोस्ट-फैक्टो ECs को खास मानना चाहिए, खासकर इसलिए क्योंकि वे कानूनी ढांचे के खिलाफ हैं। पिछले और आने वाले नियमों को तोड़ने वालों के बीच भेदभाव की किसी भी शिकायत का हल पुराने नियमों को कड़ा करके किया जाना चाहिए, न कि पोस्ट-फैक्टो रेगुलराइजेशन को नॉर्मल बनाकर।

# रियाद के साथ रीसेट करें

## ऐसा लगता है कि US ने अपने वेस्ट एशिया प्लान में सऊदी अरब और इज़राइल को अलग कर दिया है।

एस क्राउन प्रिंस मोहम्मद बिन सलमान के व्हाइट हाउस दौरे से रिश्तों में आई थोड़ी देर की ठंडक खत्म हो गई।

सबसे ताकतवर देश और सबसे असरदार अरब देश के बीच। अक्टूबर 2018 में इस्तांबुल में सऊदी अरब के कॉन्सुलट के अंदर US में सऊदी के विरोधी पत्रकार जमाल खशोगी की हत्या के बाद रिश्ते खराब हो गए थे। US इंटेलिजेंस एजेंसियों ने बाद में यह नतीजा निकाला कि MBS ने हत्या का आदेश दिया था। अपने चुनाव कैंपेन के दौरान, जो बाइडेन ने MBS को ज़िम्मेदार ठहराने की कसम खाई थी। फिर भी, मिस्टर बाइडेन ने ही प्रिंस के पुनर्वास के लिए कदम उठाए। वह जुलाई 2022 में जेद्दा गए, जहाँ उन्होंने सऊदी राजगद्दी के वारिस का अभिवादन किया। डोनाल्ड ट्रंप, जिन्होंने 2020 अब्राहम समझौते में मध्यस्थता की थी, अपने अरब पार्टनर्स के साथ अमेरिका के पारंपरिक रिश्तों को और गहरा करने के इच्छुक रहे हैं।

मंगलवार को, उन्होंने MBS के ह्यूमन राइट्स रिकॉर्ड का बचाव करते हुए दावा किया कि प्रिंस को खशोगी की हत्या के बारे में "कुछ नहीं पता था"। उन्होंने इज़राइल के एतराज़ के बावजूद सऊदी अरब को टैंक और F-35 फाइटर जेट बेचने का भी वादा किया। इससे उसे अमेरिका के सबसे एडवांस्ड कंप्यूटर चिप्स का भी एक्सेस मिलेगा। MBS सऊदी अरब को एक टेक्नोलॉजी पावर हाउस में बदलने के लिए बड़े डेटा सेंटर बनाना चाहता है।

पहले से, सऊदी अरब के खराब ह्यूमन राइट्स रिकॉर्ड ने वॉशिंगटन के साथ उसके रिश्ते को बनाने में बहुत कम भूमिका निभाई है, जो लंबे समय से जियोपॉलिटिकल और एनर्जी हितों पर आधारित रहे हैं। तनाव के पल भी आए हैं, जैसे 1973 का तेल का झटका, 9/11 के बाद का अविश्वास या खशोगी की हत्या के बाद का ठंडापन, लेकिन दोनों पक्षों ने हमेशा वैल्यूज़ से ज़्यादा स्ट्रेटेजिक अलाइनमेंट को प्राथमिकता दी है।

लेकिन, एक लगातार मुश्किल यह रही है कि इज़राइल, अमेरिका का सबसे करीबी क्षेत्रीय साथी है, जिसके रियाद के साथ कोई फॉर्मल डिप्लोमैटिक रिश्ते नहीं हैं। अब्राहम समझौते पर साइन होने के बाद, बाइडेन एडमिनिस्ट्रेशन ने इज़राइल के साथ रिश्ते नॉर्मल करके सऊदी अरब को इस फ्रेमवर्क में शामिल होने के लिए मजबूर किया। MBS ने सितंबर 2023 में कहा था कि सऊदी अरब और इज़राइल बातचीत के एडवांस स्टेज में हैं। लेकिन 7 अक्टूबर के हमास हमले और इज़राइल के नरसंहार वाले गाजा युद्ध ने इस रफ़्तार को रोक दिया। आज, सऊदी अरब का कहना है कि वह समझौते में शामिल होने के लिए तैयार है, लेकिन तभी जब फ़िलिस्तीन के सवाल के लिए दो-राज्य समाधान की ओर एक भरोसेमंद, समयबद्ध रास्ता हो — एक ऐसी स्थिति जिसका इज़राइल विरोध करता है।

ऐसा लगता है कि मिस्टर ट्रंप को इलाके की मुश्किलों और इज़राइल के अड़ियल रवैये, दोनों का एहसास हो गया है। अब वे इज़राइल को तुरंत मान्यता देने की मांग किए बिना सऊदी अरब के साथ रिश्ते गहरे करने के लिए तैयार लगते हैं। असल में, उन्होंने अभी के लिए अब्राहम समझौते से सऊदी अरब को अलग कर दिया है, और इसके बजाय किंगडम के साथ सीधे, मज़बूत रिश्ते बनाने का फैसला किया है, जिसे वे अपने बड़े वेस्ट एशिया प्लान के लिए ज़रूरी मानते हैं।

# चाइल्डकेयर वर्कर की अहम भूमिका को पहचानें

नित्या राव

प्रोफेसर, स्कूल ऑफ ग्लोबल डेवलपमेंट, यूनिवर्सिटी ऑफ ईस्ट एंग्लिया, यूके

24 जुलाई, 2023 को संयुक्त राष्ट्र ने कहा कि जनरल असेंबली ने हर साल 29 अक्टूबर को इंटरनेशनल डे ऑफ़ केयर एंड सपोर्ट घोषित करने का प्रस्ताव पास किया। इस प्रस्ताव में समाज और उसके सभी सदस्यों – खासकर बच्चों, बुज़ुर्गों और दिव्यांग लोगों – की भलाई के लिए, बिना पैसे वाली देखभाल और घरेलू काम को कम करने, फिर से बांटने और उसकी अहमियत बढ़ाने के मकसद से पूरी देखभाल और सपोर्ट पॉलिसी की अहम भूमिका को पहचाना गया। खासकर इसलिए, क्योंकि देखभाल और घरेलू काम का एक बड़ा हिस्सा महिलाओं और किशोरियों द्वारा किया जाता है। यह नेशनल स्टैटिस्टिक्स में भी गायब, कम आंका गया और बिना हिसाब का रहता है, और आर्थिक और सामाजिक पॉलिसी बनाने में इसे नज़रअंदाज़ किया जाता है।

भारत में देखभाल के इंतज़ाम का एक लंबा इतिहास रहा है, जिसमें 19वीं सदी के आखिर और 20वीं सदी की शुरुआत में ताराबाई मोदक और गिजुबाई बधेका जैसे शिक्षाविदों के काम से परिवार के बाहर के इंस्टीट्यूशन सामने आए। आज़ादी के बाद मॉडर्न चाइल्डकेयर इंतज़ाम के आने के साथ, डेवलपमेंट के हिसाब से सही तरीकों वाले ये शुरुआती प्रयास धीरे-धीरे कम हो गए। मॉडर्न चाइल्डकेयर ज़्यादातर प्राइवेट, वॉलंटरी सेक्टर में होने की वजह से, कम इनकम वाले परिवार, जिन्हें चाइल्डकेयर सर्विस की सबसे ज़्यादा ज़रूरत थी, वे इससे बाहर हो गए।

प्रीस्कूल बच्चे के विकास पर स्टडी ग्रुप की रिपोर्ट, जो 1972 में भारत सरकार को सौंपी गई थी, जिसकी कन्वीनर मीना स्वामीनाथन थीं, ने देश में चाइल्डकेयर सर्विस के इतिहास को बदल दिया। इसने एक साफ़ सोशल जस्टिस एजेंडा तय किया, जिसमें छोटे बच्चों, खासकर गरीब और पिछड़े समुदायों के बच्चों की हेल्थ, न्यूट्रिशन और विकास की ज़रूरतों को पूरा करने के लिए एक होलिस्टिक अप्रोच पर ज़ोर दिया गया।

इसी वजह से 1975 में इंटीग्रेटेड चाइल्ड डेवलपमेंट सर्विसेज़ स्कीम (ICDS) शुरू हुई। आज यह दुनिया के सबसे बड़े शुरुआती बचपन के विकास प्रोग्राम में से एक है, जिसके तहत देश भर में 1.4 मिलियन आंगनवाड़ी (चाइल्डकेयर) सेंटर चल रहे हैं, जो 23 मिलियन बच्चों तक पहुँचते हैं, और लगभग 2.4 मिलियन आंगनवाड़ी वर्कर और हेल्पर इनकी सेवा करते हैं। अनुमानित आबादी के अनुमान और 2030 तक 60 मिलियन से ज़्यादा बच्चों तक पहुँचने की ज़रूरत के आधार पर, यह संख्या लगभग दोगुनी होकर 2.6 मिलियन सेंटर हो सकती है, जिनमें पाँच मिलियन से ज़्यादा वर्कर होंगे।

कम वेतन और कम मूल्यांकन जैसा कि कई राष्ट्रीय और वैश्विक अध्ययनों से पता चला है, सामाजिक विकास और कल्याण के लिए देखभाल के महत्व को पहचानने के बावजूद, देखभाल करने वालों को कम वेतन और कम मूल्यांकन दिया गया है, और बच्चे के शुरुआती विकास में उनके योगदान को पूरी तरह से मान्यता नहीं दी गई है।

ICDS पर तेज़ी से विस्तार करने और सबको कवर करने के दबाव की वजह से, केयर-वर्कर्स की प्रैक्टिस-बेस्ड लर्निंग में काबिलियत बनाने के लिए प्री-सर्विस और इन-सर्विस ट्रेनिंग पर कम ज़ोर दिया गया है, जो अच्छी चाइल्डकेयर के लिए ज़रूरी है। यह कुछ हद तक शुरुआती सालों के टीचरों को केयर करने वालों के तौर पर देखने की सोच की वजह से है, जो बच्चों की देखभाल के लिए ज़रूरी है।

> भारत में चाइल्डकेयर वर्कर को बेहतर पॉलिसी, सही वेतन और काम करने के हालात, और एक मज़बूत वर्किंग माहौल की ज़रूरत है।

देखभाल

आधारभूत संरचना

खाना, साफ़-सफ़ाई और टीकाकरण जैसी मुख्य ज़रूरतों को पूरा करने के लिए, न कि प्रोफ़ेशनल के तौर पर। उनके रोल की वैल्यू कम होने, उन्हें प्रोफ़ेशनल वर्कर न मानने का नतीजा न सिर्फ़ कम सैलरी है, बल्कि काम करने के हालात (पेड लीव सहित), सोशल सिक्योरिटी बेनिफिट, करियर में आगे बढ़ने के मौके, और मिलकर काम करने और रिप्रेज़ेंटेशन पर भी ध्यान नहीं दिया जाता। कई राज्यों में, उनकी सैलरी, जो ₹8,000-₹15,000 महीने के बीच है, अनस्किल्ड वर्कर के मिनिमम वेज के बराबर भी नहीं है।

क्लाइमेट चेंज का असर क्लाइमेट चेंज के मामले में, गांव और शहर के गरीबों के लिए अच्छी क्वालिटी की चाइल्डकेयर सर्विस की ज़रूरत तेज़ी से बढ़ रही है। इस बात के पक्के सबूत हैं कि क्लाइमेट चेंज और खराब मौसम की घटनाओं, जैसे बाढ़ या सूखे का सबसे ज़्यादा असर गरीब महिलाओं और बच्चों पर पड़ता है। उन्हें अलग-अलग तरह के और हेल्दी खाने के साथ-साथ हेल्थ और केयर सर्विस तक कम पहुंच का सामना करना पड़ता है। जबकि सस्टेनेबल डेवलपमेंट गोल्स घरों में महिलाओं और पुरुषों के बीच देखभाल की ज़िम्मेदारियों को बराबर बांटने की ज़रूरत बताते हैं,

क्लाइमेट चेंज कई पुरुषों को काम की तलाश में अपने गांव के घरों से शहरी सेंटरों में जाने के लिए मजबूर कर रहा है।

अपनी खराब परिस्थितियों के अलावा, भारत में COVID-19 महामारी के दौरान जैसा देखा गया, उनकी फिजिकल गैर-मौजूदगी ऐसी शेयरिंग को नामुमकिन बना देती है। जब परिवार शहरी इलाकों में चले जाते हैं, तो रहने का ज़्यादा खर्च – खासकर किराया – महिलाओं के लिए भी काम ढूंढना ज़रूरी बना देता है, जो अक्सर मिडिल क्लास के घरों में घरेलू और देखभाल का काम होता है। हालांकि, उनके अपने बच्चों की देखभाल का इंतज़ाम बहुत कम है, शहरी इलाकों में अभी सिर्फ़ 10% आंगनवाड़ी सेंटर ही चल रहे हैं।

भारत में भारत सरकार का समय उपयोग 2024 के सर्वे से पता चलता है कि केयर-वर्क में महिलाओं की हिस्सेदारी बढ़ रही है, जिसमें महिलाएं बिना पैसे के घरेलू और केयर के काम में औसतन 426 मिनट (सात घंटे से ज़्यादा) बिताती हैं, जबकि पुरुष 163 मिनट (दो घंटे से ज़्यादा) बिताते हैं (मिनिस्ट्री ऑफ़ स्टैटिस्टिक्स एंड प्रोग्राम इम्प्लीमेंटेशन)। कुल मिलाकर, यह GDP का 15%-17% होगा। छोटे लेवल की स्टडीज़ से पता चलता है कि मां के पास देखभाल और दूध पिलाने के लिए समय की कमी और बच्चों में कुपोषण के बीच साफ संबंध हैं, जैसा कि 35% से ज़्यादा बच्चों में लगातार बढ़ते स्टंटिंग लेवल में दिखता है। छह महीने से 23 महीने के सिर्फ़ 11% बच्चों को ही कम से कम ठीक-ठाक डाइट मिल पाती थी (नेशनल फ़ैमिली हेल्थ सर्वे 5, 2019-21), जिससे सोचने-समझने और विकास से जुड़ी चिंताएं बढ़ जाती हैं।

इस संदर्भ में, मोबाइल क्रेच और फोरम क्रेच और चाइल्डकेयर सर्विसेज़ (FORCES) ने 28 अक्टूबर, 2025 को नई दिल्ली में इंडिया चाइल्डकेयर चैंपियन अवार्ड्स का आयोजन किया। ये अवार्ड्स सात कैटेगरी में दिए गए, जिसमें चाइल्डकेयर के क्षेत्र में बेहतरीन काम और लगन को सम्मानित किया गया — मीना स्वामीनाथन स्पेशल जूरी अवार्ड बेस्ट क्रेच वर्कर, बेस्ट क्रेच वर्कर, बेस्ट क्रेच सुपरवाइज़र, बेस्ट लोकल लीडर, बेस्ट NGO, चाइल्डकेयर चैंपियन, और

चाइल्डकेयर में CSR फंडर्स का आभार। इन अवॉर्ड्स का मकसद फ्रंटलाइन चाइल्डकेयर वर्कर्स और सुपरवाइज़र्स के साथ-साथ लोकल पंचायत लीडर्स, एम्प्लॉयर्स और सिविल सोसाइटी ऑर्गनाइज़ेशन्स को पहचान देना था। यह ज़मीन पर, कम्युनिटीज़ के अंदर और पॉलिसी लेवल पर क्वालिटी चाइल्डकेयर को सभी के लिए आसान और बराबर बनाने के लिए उनके बिना थके काम करने की कोशिशों को सेलिब्रेट करने के लिए था।

इस इवेंट ने चाइल्डकेयर वर्कर्स को आवाज़ दी, जिससे न सिर्फ़ यह साफ़ हुआ कि ये वर्कर्स स्किल्ड प्रोफ़ेशनल हैं, बल्कि वे बदलाव लाने वाले भी हैं, जो समाज के नियमों और स्ट्रक्चर को चुनौती देते हैं। वर्कर्स ने जाति और वर्ग की रुकावटों को तोड़ने, समाज में बदनामी से उबरने के लिए आत्मविश्वास बनाने और 'गंदे' बच्चों के साथ काम करने के लिए अपने परिवारों और समुदायों द्वारा की जाने वाली बुराईयों से निपटने के बारे में बात की।

धीरे-धीरे, लेकिन पक्का, उन्होंने माता-पिता के साथ भरोसा और बच्चों के साथ इमोशनल रिश्ते बनाए हैं, इस उम्मीद में कि वे उन्हें ज़िंदगी में एक ऐसा मौका दे सकें जो उन्हें वरना नहीं मिलता। माइग्रेंट वर्कर्स के बच्चों की देखभाल करना और भी ज़्यादा मुश्किल होता है क्योंकि माता-पिता फुल-टाइम काम करते हैं, और अक्सर खराब हालात में रहते हैं। यहां बच्चों को कई तरह की हेल्थ प्रॉब्लम का सामना करना पड़ता है, इसलिए केयर-वर्कर्स, इसके अलावा, हेल्थ इंश्योरेंस, साफ और सही जगह और केयर इंफ्रास्ट्रक्चर, वगैरह के सपोर्टर बन गए हैं। वे कई रोल निभाते हैं — बच्चों के साथ खेलने वाले बच्चों के तौर पर, उनकी देखभाल करने वाले केयरर के तौर पर, और बड़े फैसले लेने वालों के तौर पर, उनके खास पड़ावों पर नज़र रखने वाले, और ज़रूरत पड़ने पर दखल देने वाले के तौर पर।

स्कैंडिनेविया के मानक का मिलान करें बाल देखभाल कार्यकर्ताओं की मान्यता स्पष्ट रूप से गुणवत्ता प्रदान करने, पोषण संबंधी देखभाल और एक मजबूत और समावेशी राष्ट्र की नींव रखने में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका को उजागर करने की पहली दिशा है। फिर भी, अभी बहुत कुछ किया जाना बाकी है - यह सुनिश्चित करने के अलावा कि उनके पास उचित वेतन और काम करने की स्थिति है, इन देखभाल कार्यकर्ताओं के कौशल निर्माण और देखभाल के बुनियादी ढांचे को मजबूत करने के लिए संसाधनों को पुनर्निर्देशित करने की आवश्यकता है। तीन साल से कम उम्र के बच्चे के लिए अभी भी बहुत कम प्रावधान है, भारत सरकार की पालना योजना के तहत स्वीकृत 10,000 से अधिक क्रेच में से केवल 2,500 ही वर्तमान में चालू हैं। जीडीपी के लगभग 0.4% के वर्तमान सार्वजनिक निवेश की तुलना में, अच्छी गुणवत्ता की देखभाल को सार्वभौमिक बनाने की महत्वाकांक्षाओं के लिए बजटीय आवंटन को जीडीपी के 1% -1.5% के बीच तिगुना करने की आवश्यकता होगी

देखभाल पर ध्यान महिलाओं के अधिकारों पर प्रकाश डालता है और बच्चों के लिए। इसे पाने के लिए व्यक्तिगत और सिस्टम में बदलाव, दोनों की ज़रूरत है। चाइल्डकेयर वर्कर्स के ज्ञान और स्किल्स को पहचान देने के साथ ऐसे नियम और पॉलिसी भी होनी चाहिए जो इस सेक्टर को ज़रूरी रिसोर्स और आवाज़ दें। अगर महिला वर्कर्स और ज़रूरतमंद बच्चों के अधिकार पाने हैं, तो डीसेंट्रलाइज़ेशन, कन्वर्जेंस और कलेक्टिव ओनरशिप बहुत ज़रूरी हैं।

# दुनिया भर में टीबी उन्मूलन की कहानी को फिर से गढ़ना

डॉ. सौम्या स्वामीनाथन

पूर्व प्रमुख हैं वैज्ञानिक, विश्व स्वास्थ्य संगठन

एल तपेदिक के इतिहास पर एक नज़र (टी.बी.) कंट्रोल, एक छोटा लेकिन क्रांतिकारी बदलाव साफ़ दिख रहा है — पॉइंट-ऑफ़-केयर मॉलिक्यूलर डायग्नोस्टिक्स का विकास। पहले, TB की पहचान में या तो कम सेंसिटिव स्पुतम स्मीयर टेस्ट होता था या सेंट्रलाइज़्ड लैब से कल्चर रिज़ल्ट के लिए हफ़्तों इंतज़ार करना पड़ता था। लेकिन, छोटी, बैटरी से चलने वाली पॉलीमरेज़ चेन रिएक्शन (PCR) मशीनों से, अब TB और ड्रग-रेज़िस्टेंस दोनों का पता एक घंटे से भी कम समय में लगाया जा सकता है।

डायग्नोस्टिक्स में गेम चेंजर वर्ल्ड हेल्थ ऑर्गनाइज़ेशन (WHO) से मंज़ूर रैपिड मॉलिक्यूलर डायग्नोस्टिक प्लेटफ़ॉर्म जैसे कि ट्रूनेट अब TB के खिलाफ़ दुनिया भर में लड़ाई का आधार हैं, खासकर कम रिसोर्स वाली जगहों पर। उदाहरण के लिए, इसे नाइजीरियाई नेशनल TB प्रोग्राम के साथ जोड़ने के बाद, रिफैम्पिसिन-रेसिस्टेंट TB के मामलों की पहचान लगभग दोगुनी हो गई, जो इस प्लेटफ़ॉर्म की ड्रग-रेसिस्टेंट स्ट्रेन का पता लगाने की क्षमता का एक संकेत था।

इसके अलावा, नाइजीरिया ने प्राइमरी हेल्थ-केयर सेंटर में बच्चों में TB के डायग्नोसिस के लिए स्टूल-बेस्ड Truenat टेस्टिंग के साथ एक्सपेरिमेंट किया है। इसका मकसद बच्चों में स्प्यूटम कलेक्शन की चुनौती को दूर करना है, जिससे केस डिटेक्शन और बैक्टीरियोलॉजिकल कन्फर्मेशन में सुधार हो सके।

हाल ही में हुई और द लैंसेट में छपी एक स्टडी में अफ्रीका के मोज़ाम्बिक और तंजानिया के प्राइमरी हेल्थ-केयर सेंटर्स में इस प्लेटफॉर्म के इस्तेमाल को देखा गया। ट्रायल से पता चला कि ऑन-साइट मॉलिक्यूलर टेस्टिंग को नतीजों की तेज़ी से जानकारी देने से, मरीज़ों के पहली विज़िट के सात दिनों के अंदर इलाज शुरू करने की दर में काफ़ी सुधार हुआ। इस इंटरवेंशन से न सिर्फ़ डायग्नोस्टिक क्वालिटी में सुधार हुआ, बल्कि इलाज भी बेहतर हुआ, जिससे यह साबित हुआ कि कम रिसोर्स वाले माहौल में बेहतर TB केयर में पॉइंट-ऑफ़-केयर डायग्नोस्टिक्स का अहम रोल है। ऐसे इनोवेशन दुनिया भर में TB खत्म करने के टारगेट को पाने के लिए बहुत ज़रूरी हैं।

डायग्नोस्टिक क्षमता में यह बदलाव न केवल टीबी कंट्रोल की लय बदल दी। यह बन गया

> इस वर्ष का कोचोन पुरस्कार इस बात पर प्रकाश डालता है कि भारत ऐसे स्केलेबल समाधान बना रहा है जो वैश्विक स्वास्थ्य समानता को बदल सकते हैं

एक ऐसी दुनिया का आधार जहां शुरुआती इलाज अब भूगोल या इंफ्रास्ट्रक्चर का काम नहीं रहा।

इसी बदलाव को इस साल दुनिया भर में पहचान मिली, जब गोवा की मोलबायो डायग्नोस्टिक्स को TB डायग्नोस्टिक्स में उसके योगदान के लिए मशहूर कोचोन प्राइज़ दिया गया।

कोरिया गणराज्य के कोचोन फाउंडेशन और स्टॉप TB पार्टनरशिप के सहयोग से शुरू किया गया कोचोन प्राइज़, TB कंट्रोल में योगदान के लिए दुनिया के सबसे जाने-माने अवॉर्ड्स में से एक है। इसने उन साइंटिस्ट, ऑर्गनाइज़ेशन और लोगों को सम्मानित किया है जिनके इनोवेशन ने TB के नतीजों को बहुत बेहतर बनाया है। इस अवॉर्ड की असली कीमत किसी एक कंपनी से कहीं ज़्यादा है। इस साल का अवॉर्ड इस बारे में बहुत कुछ बताता है कि भारत के स्वदेशी टेक्नोलॉजिकल इनोवेशन न सिर्फ़ अपने इलाके में TB से लड़ रहे हैं, बल्कि TB खत्म करने की दुनिया पर भी काफ़ी असर डाल रहे हैं।

यह लेखक WHO के समर्थन को याद करता है, 2020 में, भारत में डेवलप किए गए पोर्टेबल मॉलिक्यूलर प्लेटफॉर्म का। इसके सबूत एशिया और अफ्रीका में हुई अलग-अलग स्टडीज़ से मिले, जिसमें सेंट्रल-लैब सिस्टम के बराबर असर दिखाया गया, लेकिन इसे इस्तेमाल करने की क्षमता काफ़ी ज़्यादा थी। उत्साह साफ़ दिख रहा था — आखिरकार, एक डायग्नोस्टिक टेस्ट जो मरीज़ के पास जा सकता था, न कि मरीज़ के पास। यह एक ऐसा पल था जब इनोवेशन और इनक्लूजन का मेल हुआ। तब से, कई और भारतीय कंपनियों ने TB डायग्नोस्टिक्स इनोवेशन में कदम रखा है, जो आज उपलब्ध बेहतर पॉइंट ऑफ़ केयर टेस्ट की रेंज में दिखाई देता है।

डीसेंट्रलाइज़्ड TB कंट्रोल में भारत की भूमिका भारत के नेशनल TB एलिमिनेशन प्रोग्राम (NTEP) ने इन टेक्नोलॉजी को तेज़ी से अपनाया, और पूरे देश में हज़ारों पॉइंट-ऑफ़-केयर मॉलिक्यूलर टेस्टिंग यूनिट्स लगाईं। आज, हमारे पास इस बात के काफ़ी और ज़्यादा सबूत हैं कि इससे TB का शक होने और इलाज शुरू होने के बीच का समय काफ़ी कम हो गया है, जिससे TB मैनेजमेंट प्रोटोकॉल में काफ़ी सुधार हुआ है।

यह अवॉर्ड TB खत्म करने के लिए भारत के मिलकर काम करने वाले मॉडल को भी दिखाता है। आज, TB से लड़ाई सिर्फ़ जनता की ज़िम्मेदारी नहीं है।

सेक्टर। यह एक शेयर्ड मिशन है, जहाँ प्राइवेट इनोवेटर्स, कम्युनिटी हेल्थ वर्कर्स और सरकारी सिस्टम मिलकर काम करते हैं। एक ऐसे देश के लिए जो दुनिया के लगभग एक चौथाई TB के बोझ को झेलता है, यह पार्टनरशिप न केवल ज़रूरी है, बल्कि ज़रूरी भी है। प्राइवेट सेक्टर तेज़ी, स्केल और टेक्नोलॉजी देता है जबकि पब्लिक सेक्टर पहुँच, डेटा और अकाउंटेबिलिटी देता है। ये सब मिलकर एक मज़बूत पब्लिक हेल्थ रिस्पॉन्स की नींव बनाते हैं।

कोचोन पुरस्कार भारत को दिया गया है दो बार — 2006 में डॉ. एल.एस. चौहान, उप महानिदेशक-क्षय रोग, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय (जाम्बिया से टीबी/एचआईवी कार्यकर्ता विंस्टोन ज़ुलु के साथ संयुक्त विजेता) को, और 2017 में भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद (आईसीएमआर) को।

इस साल की पहचान सिर्फ़ भारत के लिए एक और जीत नहीं है। यह सस्ते स्वदेशी इनोवेशन की ताकत की ग्लोबल पहचान है।

भारत से एल्ड-रेडी मॉलिक्यूलर डायग्नोस्टिक्स को अपनाने से दुनिया भर में इसे इस्तेमाल किया गया है — सब-सहारा अफ्रीका में मोबाइल क्लीनिक से लेकर पूर्वी यूरोप में रिफ्यूजी कैंप तक। इससे यह साबित होता है कि भारत इनोवेशन में सबसे आगे रह सकता है, और ऐसे स्केलेबल सॉल्यूशन बना सकता है जो ग्लोबल हेल्थ इक्विटी को बदल सकते हैं।

लेकिन टीबी के खिलाफ लड़ाई अभी खत्म नहीं हुई है। अगली चुनौती यह पक्का करना है कि ऐसे डायग्नोस्टिक्स के साथ इलाज, न्यूट्रिशन, सोशल प्रोटेक्शन और स्टिग्मा कम करने की सही सुविधा मिले। स्टडीज़ से पता चला है कि भारत में TB के लगभग 40% मामलों के लिए कुपोषण ज़िम्मेदार है। TB के खिलाफ़ लड़ाई में सफल होने के लिए इन सभी बातों पर ध्यान देना होगा।

लगातार इन्वेस्टमेंट और इनोवेशन की अपील हम एक अहम मोड़ पर हैं। पॉइंट-ऑफ़-केयर डायग्नोस्टिक्स जैसे इनोवेशन को पहचान मिलना अच्छी बात है, लेकिन हमें बड़ी तस्वीर को नज़रअंदाज़ नहीं करना चाहिए: TB असमानता की बीमारी है।

हमें ऐसे इनोवेशन में इन्वेस्ट करते रहना चाहिए जो डायग्नोस्टिक्स को न्यूट्रिशन, कॉन्टैक्ट ट्रेसिंग, डिजिटल पालन और वैक्सीन के साथ जोड़ें। तभी हम यह पक्का कर सकते हैं कि TB को खत्म करने की इस ग्लोबल कोशिश में कोई पीछे न छूटे।

## द टर्सटूदएडिटर

**एसआईआर कार्य**

मुझे पक्का यकीन है कि स्पेशल पुलिस का काम करते हुए पूरे तमिल में बेरोज़गार ग्रेजुएट और पोस्टग्रेजुएट लोगों को वोटर लिस्ट में बड़े पैमाने पर बदलाव का काम दिया जा सकता है।

नाडु (तमिलनाडु, "महोदय

"काम हाफ-ईयरली एग्जाम का सिलेबस पूरा होने से रोक रहा है: टीचर्स", 19 नवंबर)। यह दूसरे राज्यों के लिए भी ज़रूरी है। जो लोग काम करते हैं उन्हें सही मेहनताना और सर्टिफिकेट दिया जा सकता है जिससे उनका काम बेहतर होगा।

संभावनाएं। केंद्र और संबंधित राज्य सरकार इस प्लान के फाइनेंशियल असर पर काम कर सकती हैं। देश को 'विकसित' बनाने के लिए लगातार नौकरियां बनाना बहुत ज़रूरी है।

एस. रामकृष्णसायी, चेन्नई

आज के समय में राइटर्स को अपने विचार लिखने में मुश्किलों का सामना करना पड़ता है, क्योंकि बोलने की आज़ादी का सिद्धांत, जो एक बुनियादी अधिकार है, अक्सर राजनीतिक दबाव और सामाजिक विरोध के कारण बाधित होता है। असहिष्णुता का यह माहौल

यह एक डरावना असर डालता है, जिससे लेखक पर्सनल रिस्क से बचने के लिए "सेल्फ-सेंसरिंग" चुनने पर मजबूर हो जाते हैं (ओपन पेज, 16 नवंबर)। डिजिटल मीडिया के बढ़ने से ऑनलाइन अब्यूज़ का रिस्क बढ़ गया है।

महिला पत्रकारों को अक्सर ऑनलाइन जेंडर भेदभाव का सामना करना पड़ता है

खतरे। आज के लेखकों के लिए चुनौती एक मुश्किल माहौल में रास्ता बनाना है।

R. Sivakumar, चेन्नई

letters@thehindu.co.in पर ईमेल किए गए पत्रों में डाक का पता होना चाहिए।

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्
भगवान इस जग के कण-कण में विद्यमान हैं।

# पंजाब केसरी संपादकीय

संस्थापक: शहीद शिरोमणि लाला जगतनारायण जी, अमर शहीद रमेश चन्द्र जी एवं कलम के योद्धा अश्विनी कुमार जी

आदित्य नारायण चोपड़ा
adityachopra@punjabkesari.com

## शाह का प्रण पूरा होगा?

**श्री** अमित शाह स्वतन्त्र भारत के ऐसे पहले गृहमन्त्री हैं जिन्होंने देश से नक्सलवाद और माओवादी हिंसा को समाप्त करने का लक्ष्य रखा और उसे समय से पूरा करने की रणनीति तैयार की। उन्होंने नक्सलवादियों से बातचीत का रास्ता नहीं चुना बल्कि उनके द्वारा आत्मसमर्पण करने को अपना अभीष्ट बनाया। श्री शाह बहुत सख्त गृहमन्त्री माने जाते हैं क्योंकि हिंसा के मामले में उनका दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से नक्सलियों द्वारा आत्मसमर्पण का है। श्री शाह ने देशवासियों को आश्वासन दिया है अगले वर्ष अप्रैल महीने तक नक्सलवाद जड़ से समाप्त हो जायेगा। अपने इसी प्रण को पूरा करने की दिशा में उन्होंने नक्सलवादियों को चुनौती दी कि उनके किसी भी बड़े से बड़े सरगना को छोड़ा नहीं जायेगा। इस सिलसिले में कल ही सुरक्षा बलों ने आन्ध्र प्रदेश के जंगलों में एक करोड़ के इनामी दुर्दान्त माओवादी कमांडर माडवी हिडमा को मार गिराया और उसके साथ अन्य पांच नक्सलियों को भी मौत के घाट उतार दिया। हिडमा को छत्तीसगढ़ का आंतक भी कहा जाता था। उसे मार गिरा कर सुरक्षा बलों ने अपने नक्सली हिंसा को समाप्त करने के अभियान को निर्णायक सफलता की ओर बढ़ा दिया है।

ऐसा माना जा रहा है कि श्री शाह के दृढ़ रुख को देखते हुए देशभर से नक्सलियों व माओवादियों का सफाया निश्चित प्राय: है। श्री शाह को जहां एक तरफ भाजपा का चाणक्य कहा जाता है वहीं दूसरी ओर उन्हें अपना वचन हर कीमत पर रखने वाले नेता के रूप में भी देखा जाता है। श्री शाह ने बहुत पहले ही यह घोषणा कर दी थी कि आगामी वर्ष के अप्रैल महीने तक नक्सली आतंकवाद को जड़ से समाप्त कर दिया जायेगा। इसी क्रम में श्री शाह ने सुरक्षा बलों को लक्ष्य दिया था कि वे 30 नवम्बर तक दुर्दान्त माओवादी माडवी हिडमा को जिन्दा या मुर्दा पकड़ें। सुरक्षा बलों ने 18 नवम्बर को ही हिडमा का खात्मा करके साफ कर दिया है कि आगामी 30 नवम्बर तक वे अन्य नक्सलियों को पकड़ने में सफलता प्राप्त कर सकते हैं। हिडमा इतना खूंखार था कि वह नक्सलियों द्वारा सुरक्षा बलों पर किये गये 26 हमलों में शामिल था। उसकी पत्नी राजे भी उसके कारनामों में शामिल रहती थी। मगर पुलिस व अन्य केन्द्रीय सुरक्षा बलों ने जो माओवादियों व नक्सलियों को समाप्त करने का अभियान छेड़ रखा है उसे देखते हुए कहा जा सकता है श्री शाह का देशवासियों को दिया गया आश्वासन पक्के तौर पर पूरा होगा। हिडमा के मारे जाने से छत्तीसगढ़ के जंगल ज्यादा सुरक्षित हो सकेंगे।

**भारत के लोकतन्त्र में गृह मन्त्रालय को विशेष दर्जा प्राप्त होता है क्योंकि यही मन्त्रालय राज्यों में कानून-व्यवस्था की समीक्षा करता रहता है। मगर नक्सली सबसे पहले कानून व्यवस्था का राज ही समाप्त करते हैं अत: लोकतन्त्र की सफलता के लिए जरूरी है कि इसके चारों खम्भे (विधायिका, कार्य पालिका न्यायपालिका व चुनाव आयोग) स्वाभिमान से भरे रहें और संविधान के अनुसार काम करें। माओवादी हिडमा की मौत से किसी भी सुधारात्मक कदम को वापस लेने का सवाल ही नहीं उठता क्योंकि भारत की विविधता बताती है कि सरकारें लोक कल्याण मूलक हों।**

दरअसल नक्सलवाद भारत के भीतर ऐसी समस्या है जिसका निदान केवल हिंसा के रास्ते को छोड़ देना ही है। दरअसल नक्लवाद एक ऐसी मानसिकता है जो भारतीय संविधान को नहीं मानती और अपना ही शासन चलाये रखने की बात करती है और बखान करती है कि सत्ता बन्दूक की नली से पैदा होती है न कि चुनावों से। पिछली मनमोहन सरकार के दौर में यह समस्या अपने उग्र रूप में थी। छत्तीसगढ़ में नक्सली सबसे ज्यादा प्रभावी थे। अत: इस राज्य के बस्तर व सुकमा जिले घोषित रूप से नक्सली हिंसा के शिकार थे। नक्सलवाद पर संसद में भी गंभीर चर्चा कई बार हुई है। संसद का शीतकालीन सत्र दिसंबर महीने के पहले हफ्ते से ही शुरू हो रहा है। अत: संसद में नक्सलवाद के मुद्दे पर भी गहन चर्चा होनी चाहिए। संसद में हुई बहस का बहुत महत्व होता है। मनमोहन सरकार के कार्यकाल के दौरान नक्सलियों की हिंसा चरम पर थी जिसमें नक्सली पुलिस व सुरक्षा बलों के जवानों की सामूहिक तौर पर हत्याएं किया करते थे। नक्सली हिंसा की वजह से ही छत्तीसगढ़ का विकास बहुत धीमा रहा है। मगर जब से श्री शाह ने गृह मन्त्रालय संभाला है तब से लेकर आज तक नक्सलियों की कार्रवाइयां श्री शाह के निशाने पर रही हैं।

भारत के लोकतन्त्र में गृह मन्त्रालय को विशेष दर्जा प्राप्त होता है क्योंकि यही मन्त्रालय राज्यों में कानून-व्यवस्था की समीक्षा करता रहता है। मगर नक्सली सबसे पहले कानून व्यवस्था का राज ही समाप्त करते हैं अत: लोकतन्त्र की सफलता के लिए जरूरी है कि इसके चारों खम्भे (विधायिका, कार्य पालिका न्यायपालिका व चुनाव आयोग) स्वाभिमान से भरे रहें और संविधान के अनुसार काम करें। माओवादी हिडमा की मौत से किसी भी सुधारात्मक कदम को वापस लेने का सवाल ही नहीं उठता क्योंकि भारत की विविधता बताती है कि सरकारें लोक कल्याण मूलक हों। सरकार की नजर में हर भारतीय नागरिक होता है और उसे संविधान के अनुसार अधिकार व कर्त्तव्य भी मिले होते हैं लेकिन नक्सलपंथियों ने छत्तीसगढ़ के कुछ इलाकों को जिस विकास से दूर रखा है उन्हें अब त्वरित रूप से पूरा करने का समय आ गया है। बेशक अप्रैल आने में अब चार महीने का समय ही बचा है परन्तु हिडमा की मौत से यह तय हो गया है कि भारत में संविधान को चुनौती देने वाली ताकतों को कोई भी सरकार बर्दाश्त नहीं करेगी। हिडमा जब 10 वर्ष का था तभी से नक्सलवाद के विचारों में वह रम गया था। वह हिंसा को ही सामाजिक-राजनीतिक बदलाव का जरिया मानता था। जबकि गृहमन्त्री ने संसद से लेकर सड़क तक देश की जनता को यह बताने की कोशिश की है कि भारत में अहिंसा का मतलब कमजोरी नहीं होता, बल्कि कमजोर को ऊपर उठाने से होता है। हिडमा की पुलिस मुठभेड़ में हुई मौत इस बात की गवाह है कि संविधान को न मानने वाले लोगों को उनकी ही भाषा में जवाब देना भारत की सरकार को आता है।

### बच्चों की सुरक्षा राष्ट्र का आधार...

"हर 8 मिनट में एक मासूम लापता है,
और नन्हें-नन्हें बच्चों का हो रहा व्यापार है,,
सभ्य शिक्षित समाज इस घटना से लाचार है,
मानवता के माथे पर यह अपमान का भार है,,
अब जागो, उठो ! हो जाओ एक नई क्रांति के लिए तैयार है,
क्योंकि बच्चों की सुरक्षा ही राष्ट्र का पहला आधार है...।।"

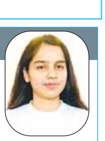

गीता पाढा

मर्यादाएं
चन्द्रमोहन
संपादक : वीर प्रताप
chander_m@ hotmail.com
BLOG: chandermohan.net

## यह पार्ट-टाईम सियासत का टाईम नहीं है

**बिहार** में एनडीए की महाजीत और महागठबंधन की महाहार ने देश की राजनीति को बदल दिया है। पिछले लोकसभा चुनाव में कांग्रेस के बेहतर प्रदर्शन के बाद राहुल गांधी विपक्षी नेता बनने में सफल रहे थे। उसके बाद समझा गया कि विपक्ष के इंडिया गठबंधन में जान पड़ जाएगी, पर पहले महाराष्ट्र, फिर हरियाणा, फिर दिल्ली के बाद अब बिहार के चुनाव बता गए हैं कि भाजपा और एनडीए अपनी स्थिति मज़बूत करने में सफल रहे हैं जबकि कांग्रेस ऐसी जगह पहुंच गई है कि उसकी प्रासंगिकता पर ही सवाल उठने लगे हैं। प्रधानमंत्री मोदी ने तो भविष्यवाणी भी कर दी है कि आगे चल कर कांग्रेस का एक और विभाजन हो सकता है। बिहार में एनडीए को मिली 202 सीटें और महागठबंधन को मिली 35 सीटें सारी कहानी बयान कर रही हैं। कांग्रेस को केवल 6 सीटें मिली जो 2010 के बाद का उनका सबसे ख़राब प्रदर्शन है। कांग्रेस की कमजोरी राजद को भी ले बैठी जैसे पिछले चुनाव में भी हुआ था।

तमिलनाडु के मुख्यमंत्री स्टालिन के अनुसार "स्पष्टता,ज़मीन पर काम और कल्याणकारी योजनाएं" चुनाव जीतती हैं। बिहार में हमने एनडीए के अभियान में यह सब देख लिया। प्रधानमंत्री मोदी के नेतृत्व में स्पष्ट और तीखा अभियान चलाया गया। लोगों को बार-बार 'जंगल राज' याद करवाया गया। हिन्दुत्व के मुद्दे को एक तरफ़ रख बिजली, पानी, सड़क, रोज़गार पर ज़ोर दिया गया। धर्म नहीं विकास का मुद्दा उठाया गया। यह समझ लिया कि नीतीश कुमार की 'पलटू कुमार' की छवि के बावजूद लोकप्रियता क़ायम है इसलिए 'नरेन्द्र-नीतीश' के नाम पर वोट मांगे गए। मोदी-अमित शाह की जोड़ी ने भी ज़बरदस्त अभियान चलाया। यह जोड़ी जब मैदान में उतरती है तो सब कुछ दांव पर लगा देती है। प्रधानमंत्री मोदी ने 20 रैली की थी। जिन 77 सीटों पर उन्होंने प्रचार किया था वहां 97% स्ट्राइक रेट रहा है। राहुल गांधी ने 13 सभाएं की थी। स्ट्राइक रेट 10% रहा। नीतीश कुमार फिर मुख्यमंत्री बन रहे हैं, पर चुनौतियां कम नहीं हैं। देश में बिहार सबसे नीचे है। पलायन रोकने के लिए उद्योग चाहिए, पर अभी उद्योग बिहार में लौटने का अनिच्छुक है। नई सोच चाहिए जो नीतीश कुमार के बस की बात नहीं है। बिहार में महिला वोटर ने पुरुष वोटर से लगभग 9% अधिक वोट डाला है। पोलिंग बूथों पर महिलाओं की लम्बी लाइनें ही बता गईं थी कि इस बार महिला वोटर निर्णायक होगा। एनडीए को जो भारी जीत मिली है इसमें महिला वोटर का बड़ा हाथ है। नीतीश कुमार बहुत समय से महिला वोटर को सफलतापूर्वक प्रभावित करते आ रहे हैं, पर जिस योजना के कारण महिलाओं का ज़ोर-शोर से समर्थन प्राप्त हुआ वह था 1.21 करोड़ महिलाओं के खातों में 10000 रुपए का ट्रांसफ़र। इससे बाज़ी बिल्कुल एनडीए के पक्ष में पलट गई। यह योजना विवाद का विषय भी है क्योंकि चुनाव से पहले इसे शुरू किया गया और चुनाव के दौरान भी खातों में पैसा आता गया। विपक्ष इसे 'चुनावी घूस' कहता है, जो शायद यह है भी। चुनाव आयोग ने भी इसे नियंत्रण करने का कोई प्रयास नहीं किया। अगर इसी तरह चुनाव से पहले क़ानूनी ढंग से पैसा बंटता गया तो लोकतंत्र और चुनावी प्रक्रिया खोखली हो जाएगी। कोई अंत नहीं होगा।

ऐसी 'घूस' सब सरकारें दे रही हैं। रोटी, कपड़ा और मकान के साथ पैसा भी जुड़ गया है। बिहार में उसके प्रभाव को देखते हुए आगे चुनाव के समय सब सत्तारूढ़ सरकारें यह फ़ार्मूला अपनाएंगी, जो प्रदेशों की अर्थव्यवस्था के लिए अच्छा नहीं है। मनी-पावर का खुला इस्तेमाल किया जाएगा। केन्द्र के पास तो और भी अधिक पैसा है। अफ़सोस है कि 'रेवड़ी' के खिलाफ विचार व्यक्त करने के बाद प्रधानमंत्री मोदी ने ऐसी कथित कल्याणकारी योजनाओं को अपना लिया है। इसमें विपक्ष सत्ता पक्ष का मुक़ाबला नहीं कर सकता। बराबर का खेल मैदान नहीं रहेगा जो लोकतंत्र की पहली शर्त है। तेजस्वी यादव ने भी हर परिवार को एक नौकरी देने का वादा किया था पर लोग प्रभावित नहीं हुए। कारण स्पष्ट है। विपक्ष भविष्य में देने का वादा कर रहा था जबकि सत्तापक्ष ने ठीक चुनाव के समय खातों में 10000 रुपए डालना शुरू कर दिया और चुनाव आयोग ने आंखें मूंद लीं लेकिन चुनाव में एनडीए की जीत का यही कारण नहीं है और बड़ा कारण है कि विपक्ष में लोगों का विश्वास नहीं रहा। असली बात तो कांग्रेस के लगातार पतन की है जहां भाजपा में जीत की भूख है वहां कांग्रेस में जीत के लिए तड़प ग़ायब लगती है। राहुल गांधी के नेता बनने के बाद पार्टी 24 चुनाव हार चुकी है। 2024 के बाद हुए 9 चुनावों में से कांग्रेस केवल दो जीत सकी है और वह भी जम्मू-कश्मीर और झारखंड में सहयोगियों के साथ मिल कर। हर हार के बाद अंग्रेज़ी के शब्द 'इंट्रोस्पैकशन' अर्थात मंथन का इस्तेमाल किया जाता है, पर कितना इंट्रोस्पैकशन करना है? जो पिछले हुए थे उनसे क्या परिवर्तन आया? जिस पार्टी ने देश को आज़ादी दिलवाई थी वह अब परिवार के तीन सदस्यों के इर्द-गिर्द जम गई है वहां भी एक व्यक्ति, राहुल गांधी ही सब फ़ैसले ले रहे हैं और बार-बार प्रदर्शित भी कर रहे हैं कि पार्टी की नैया पार लगाने की क्षमता उनमें नहीं है और शायद दिलचस्पी भी नहीं है। एक अख़बार की खबर के अनुसार चुनाव परिणाम के बाद राहुल गांधी मस्कट का अपना दौरा बीच छोड़ लौट आए और चुनाव प्रबंधकों पर अपना ग़ुस्सा निकाला। बिहार प्रभारी कृष्णा अल्लावरू और वेणुगोपाल निशाने पर थे। यह खबर ही बताती है कि कांग्रेस की दुर्गति का कारण क्या है। कांग्रेस को एक पार्ट टाइम नेता चला रहा है जो निर्णायक समय में ग़ायब हो जाता है। जब दिल करता है वह विदेश भाग जाते हैं। यह नहीं है कि वह अपनी निजी ज़िंदगी के हक़दार नहीं हैं, पर यह भारत की राजनीति है जहां मुक़ाबला मोदी-शाह की जोड़ी से है जो 24X7 काम करती है। चुनाव अभियान के ठीक दौरान वह मध्य प्रदेश की पंचमढ़ी में जंगल सफ़ारी के लिए चले गए। बिहार चुनाव की तैयारी करने की जगह वह पिछले महीने दो सप्ताह दक्षिण अमेरिका की यात्रा पर निकल गए। वहां कोलम्बिया में उन्होंने भारत की राजनीति पर नकारात्मक टिप्पणी भी कर दी।

आम भारतीय तो जानता भी नहीं है कि कोलम्बिया है कहां! राहुल गांधी की इस पलायन की प्रवृत्ति का परिणाम है कि पार्टी दिशाहीन बन गई है। उनकी अनुपस्थिति में कोई निर्णय लेने वाला नहीं है। मल्लिकार्जुन खड़गे भले आदमी हैं, पर निर्णय राहुल के हाथ में है। अब तो प्रियंका गांधी भी पीछे हट गईं लगती हैं। बिहार के परिणाम के लिए कृष्णा अल्लावरू और वेणुगोपाल को ज़िम्मेवार ठहराना तो फ़िज़ूल है। इन्हें बिहार के बारे क्या मालूम है? उन्हें यह ज़िम्मेवारी दी ही क्यों गई? जिस बिहार ने राजेन्द्र प्रसाद, जयप्रकाश नारायण और जगजीवन राम जैसे राष्ट्रीय नेता दिए थे वहां राहुल गांधी को कोई स्थानीय नेता नहीं मिले? और कोई राहुल गांधी को समझाने वाला नहीं कि जो मुद्दे वह उठा रहे हैं चाहे वह कितने भी सार्थक क्यों न हों, वह ज़मीन पर नहीं चल रहे? 'वोट चोरी' को लेकर उन्होंने बहुत लम्बा अभियान चलाया। जनता को सावधान करना जायज़ है। पर लोगों की दिलचस्पी स्थानीय मुद्दों में है। संवैधानिक मुद्दों में दिल्ली के बुद्धिजीवी ही दिलचस्पी रखते हैं।

बिहार की जीत से एनडीए राष्ट्रीय स्तर पर और मज़बूत होगी। बंगाल, तमिलनाडु, असम और केरल के चुनावों पर असर पड़ेगा। राहुल गांधी के नेतृत्व पर और इंडिया ब्लॉक के वजूद पर सवाल उठेंगे। नरेन्द्र मोदी के सामने राहुल गांधी फीके पड़ रहे हैं। अंतर्राष्ट्रीय विशेषज्ञ डॉ. माइक हैनरी का कहना है कि "वर्तमान समय में मोदी का कोई विकल्प नहीं दिखता"। शशि थरूर बार-बार कह रहे हैं कि "वंशवादी राजनीति भारतीय लोकतंत्र के लिए ख़तरा है"। पार्टी नेतृत्व के डिसकनैक्ट के दुष्परिणाम हम पंजाब में भी देख रहे हैं। तरनतारन के उपचुनाव में कांग्रेस पार्टी चौथे नम्बर पर रही है और ज़मानत ज़ब्त हो गई। यह वह प्रदेश है जहां कभी कांग्रेस की सरकार थी, पर नवजोत सिंह सिद्धू को अमरेन्द्र सिंह के खिलाफ खुला छोड़ दिया गया। सिद्धू तो अब रियलिटी शो में जज बन गए हैं, पर पंजाब में आप जम गई है लेकिन क्या कांग्रेस की दिल्ली में किसी को पंजाब के लिए फ़ुर्सत है?

बिहार की जीत में नरेंद्र मोदी के नेतृत्व, भाजपा के कुशल प्रबंधन,नीतीश कुमार की बेदाग़ छवि और महिलाओं को 10000 रुपए की गिफ्ट का बड़ा हाथ है, पर बराबर का नैरेटिव कांग्रेस की दयनीय स्थिति का है।

संगठन का हाल एक ऐसी कठपुतली जैसा है जिसका तार दिल्ली से झक्की और सनकी नेतृत्व मनमाने ढंग से खींचता रहता है। संगठनात्मक क्षय, समाजिक क्षेत्र का सिकुड़ना और राजनीतिक सोच का अभाव सब का कारण है कि नेतृत्व हक़ीक़त से कटा हुआ है। इसीलिए कांग्रेस और इंडिया गठबंधन के भविष्य पर सवाल खड़े हो रहे हैं। एक बार फिर कांग्रेस मुक्त भारत की बात उठ रही है, जो बड़ी राष्ट्रीय त्रासदी होगी, पर इस चर्चा के लिए वह खुद के सिवाय किसी को दोषी नहीं ठहरा सकते। जैसे पाकिस्तानी शायर मुनीर नियाज़ी ने कहा है,

*कुज शहर दे लोक वी जालम सन*
*कुज सानूं मरन दा शौक वी सी।*

## विकास के मंत्र से भाजपा की अभूतपूर्व विजय

फिरोज बख्त अहमद

**भाजपा** ने क्या किया जो राहुल, तेजस्वी और प्रशांत नहीं कर पाए! बिहार के चुनाव परिणाम ने देश में एक नई बहस भी छेड़ दी है, लोगों के बीच अब इस मुद्दे पर बहस हो रही है कि क्या प्रधानमंत्री मोदी के सामने किसी का भी चुनाव जीतना अब नामुमकिन है? ज्यादातर लोगों की राय यह बन रही है कि बीजेपी और पीएम मोदी को हराना नामुमकिन नहीं भी है तो यह मुश्किल जरूर है। फिर इसके अलग-अलग कारणों के विश्लेषण भी किए जाते हैं।

इसमें अधिकतर लोगों का मानना है कि बीजेपी अब एक चुनावी मशीन बन गई है जो पूरे समय काम करती रहती है। बीजेपी में नेताओं की भूमिका पहले तय हो जाती है और नेतृत्व के बनाए कार्यक्रम के अनुसार काम होता है। इसका उदाहरण है, बिहार के चुनाव में प्रमुख नेताओं की समय से पहले तैनाती। जब नीतीश कुमार 2022 में बीजेपी को छोड़ कर एक बार फिर आरजेडी के साथ चले गए थे तभी राष्ट्रीय महासचिव तावड़े को बिहार जा कर चुनाव की तैयारी में अभी से जुट जाने का निर्देश दे दिया था। कांग्रेस के नेता राहुल गांधी तब सक्रिय होते हैं, जब चुनाव सिर पर होता है, धरातल पर ना तो उनकी टीम नजर आती है और ना सक्रिय कार्यकर्ता। भाजपा के लिए चुनाव तैयारी कोई पार्ट टाइम गेम नहीं है, बल्कि यह जनता से जुड़े रहने और मुद्दों के आसपास पार्टी को तैयार रखने का सतत् अभियान है।

भाजपा की जिस चुनावी रणनीति का लोग आज लोहा मान रहे हैं उसे विकसित करने और उसकी धार बनाए रखने की जिम्मेदारी स्वयं गृह मंत्री अमित शाह निभाते हैं। अमित शाह ने ही गुजरात में अपने कार्यकाल के दौरान चुनाव तंत्र को विकसित किया था और 2014 के बाद से इसे लगातार देशव्यापी अभियान का इसे हिस्सा बना रहे हैं। बीजेपी नेतृत्व को बिहार की नब्ज का अंदाज था। खास कर अमित शाह ने अपनी तीन महीने के धुआंधार दौरे से यह अंदाज लगा लिया था कि जनता क्या चाहती है और उसी के अनुसार जब केंद्र और राज्य सरकार ने बिहार की जनता की अपेक्षाओं को पूर्ण करने का काम पूरा किया तो जनता गद्गद् हो उठी। फिर जनता ने यह अनुमान भी लगा लिया कि केंद्र में मोदी की डबल इंजन सरकार के साथ बिहार तेज रफ्तार से प्रगति करेगा। वोट चोरी, ईवीएम सेटिंग आदि सब बचकाना बातें हैं। अमित शाह पहले नेता थे जिन्होंने एक चुनावी रैली में ही यह ऐलान कर दिया था कि इस बार एनडीए 160 से ज्यादा सीटें जीतेगा और बिहार में सरकार बनाएगा। फिर अंतिम चरण के मतदान से कुछ ही दिन पहले एक रैली में शाह ने फिर घोषणा की कि 14 नवंबर राजद और कांग्रेस परिवारों के राजनीतिक सफाए का दिन होगा। यदि अमित शाह ने चुनावी सफलता का कोई रिकार्ड बनाया है तो इसके पीछे उनका अनथक परिश्रम है। पार्टी में रणनीति और उस पर क्रियान्वयन के लिए पूरी तरह से समर्पित कार्यकर्ताओं के निर्माण की एक बड़ी प्रक्रिया है।

कांग्रेस का संगठन बिहार में भी गायब है और केवल गाली-गलौच की सुर्खियों तक ही सीमित है। इस बार बिहार में अमित शाह ने पार्टी को एकजुट और अनुशासित रखने में भी अपना भरपूर योगदान किया। चुनाव नजदीक आते-आते बागियों की संख्या नाम मात्र की रह गई। महादलित-पासी-पासवान मतदाताओं को लोजपा और मजबूत स्थानीय उम्मीदवारों के माध्यम से एकजुट करने में कोई कोर कसर नहीं छोड़ी लेकिन आरजेडी अंत तक एमवाई समीकरण के भरोसे रह गए। कांग्रेस के पास उनको जोड़ने का ना कोई नारा था और न कोई नेता। इस मामले में राहुल गांधी केवल तेजस्वी पर निर्भर थे।

नीतीश कुमार अभी भी कोइरी-कुर्मी मतदाताओं के बीच अपना दबदबा सबसे ज्यादा रखते हैं, उसे कम करने का प्रयास भी आरजेडी ने नहीं किया। जदयू और भाजपा के नेतृत्व ने संयुक्त प्रचार अभियानों ने एनडीए के आधार को इन वर्गों में और मजबूत किया। अमित शाह ने उच्च-जाति समूहों में भी लगातार बैठकें की। आरजेडी ने दूरी बनाए रखी। बीजेपी ने अपना पहला फोकस महिलाओं पर रखा, क्योंकि उनको मालूम था कि परिवार की धुरी महिला चुनाव परिणाम में एक बड़ी भूमिका निभा सकती है। बीजेपी ने हर कार्यकर्ता को महिलाओं से जुड़ी एनडीए सरकार की योजनाओं को उन तक पहुंचाने का निर्देश दिया। बिहार में सीता मैया का भव्य मंदिर बने और उसका सीधा जुड़ाव अयोध्या के मंदिर से हो, यह बात बताना अमित शाह किसी भी रैली में नहीं भूले। राहुल और तेजस्वी इस तरह के मुद्दे को इस डर से नहीं उठाते कि मुसलमान नाराज हो जाएंगे। प्रधानमंत्री मोदी ने जोरदार तरीके से विकास का एजेंडा लोगों के सामने रखा और बिहार को एकीकृत विकास पैकेज देने का भी वायदा किया। पीएम मोदी द्वारा जंगलराज और वंशवाद की राजनीति पर भी तीखा प्रहार किया गया, जिस पर राहुल और तेजस्वी का जवाब लोगों के समझ में नहीं आया। आरजेडी और कांग्रेस दोनों नीतीश सरकार के 20 साल के शासन के खिलाफ जनता में आक्रोश की उम्मीद करते रह गए और एनडीए उसी को अपने लिए विश्वास के प्लेटफॉर्म के रूप में बखूबी इस्तेमाल कर लिया। यहां कोई अलाउद्दीन का चिराग नहीं था, बल्कि नीतीश का कम था जो बोल रहा था। उनकी जबान नहीं काम शोर करता है।

## शहीदी शताब्दी पर दिल्ली इतिहास रचने को तैयार

सिख सियासत
सुदीप सिंह
newsreporter.2008@gmail.com

**इतिहास** इस बात की गवाही भरता है कि आज से 350 वर्ष पूर्व सिखों के नौवें गुरु तेग बहादुर जी ने अगर अपना बलिदान न दिया होता तो इस देश का मंजर कुछ और ही होना था। उस समय का बादशाह औरंगजेब इस देश में केवल एक ही धर्म रखने की हिमायत करते हुए सभी को इस्लाम धर्म अपनाने के लिए कह रहा था, जो इससे इन्कार करता उसका कत्ल कर दिया जाता। न जाने कितने हिन्दुओं को उसने मौत के घाट उतार दिया होगा, क्योंकि औरंगजेब रात्रि का भोजन तभी लेता जब उसके सैनिक उसके सामने सवा मण जनेऊ रख देते। जनेऊ भाव हिन्दू धर्म का धार्मिक चिन्ह धागा जिसका वजन मात्र कुछ ग्राम ही रहता है। पण्डित कृपा राम की अगुवाई में कश्मीरी पण्डितों ने गुरु जी से गुहार लगाई और उनकी फरियाद पर गुरु जी ने स्वयं आकर अपनी शहादत दी। गुरु जी से पहले उनके सेवक भाई मतिदास, भाई सतिदास और भाई दयाला जी को भी क्रूरता के साथ शहीद किया गया और उनकी शहादत के बाद औरंगजेब के अत्याचार से देशवासियों को निजात मिली और आज हर देशवासी धार्मिक आजादी के साथ जीवन व्यतीत कर रहा है। आज से पूर्व जितनी भी शताब्दियां आई उसमें पहले तो मुगलों और फिर अंग्रेजों का राज रहा जिसके चलते शताब्दी समारोह का होना असंभव ही था। 1975 में जब शहादत की 300वीं वर्षगांव मनाई गई उस समय देश में आपातकाल लगा हुआ था, बावजूद इसके देश की प्रधानमंत्री इन्दिरा गांधी ने पंजाब से आए नगर कीर्तन का दिल्ली के रामलीला मैदान में भव्य स्वागत तो किया मगर उस अन्दाज में शहीदी पर्व नहीं मनाए गए जिससे समूचे देशवासियों को गुरु जी की शहादत की जानकारी मिल पाती। आज तक स्कूलों की पाठ्य पुस्तकों में भी क्रूरता करने वाले औरंगजेब से लेकर अन्य मुगल शासकों के इतिहास को पढ़ाया जाता रहा मगर गुरु तेग बहादुर जिन्होंने अपना बलिदान देकर धर्म और मानवता की रक्षा की उनके इतिहास का कहीं जिक्र तक नहीं किया। सिखों ने 19 बार दिल्ली को फतेह किया और 1783 में दिल्ली जीतने के पश्चात लाल किले पर केसरिया निशान साहिब भी झुलाया गया शायद उसी की बदौलत ही आज तिरंगा झूल रहा है और सौभाग्यवश आज केन्द्र और दिल्ली में ऐसी सरकारें हैं जो गुरु तेग बहादुर जी की शहादत को नमन करती हैं और मानती हैं कि उनकी बदौलत ही हिन्दू धर्म कायम है, मन्दिरों में पूजा-अर्चना होती है। तिलक और जनेऊ के रक्षक गुरु जी को इसीलिए "हिन्द की चादर" के खिताब से जाना जाता है।

देश के प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के द्वारा गुरु जी के शहीदी शताब्दी पर्व को सरकारी स्तर पर मनाने के ऐलान के बाद से सभी राज्य सरकारों के द्वारा भी बढ़-चढ़कर शहीदी शताब्दी राज्यों में सिख संगतों और कमेटियों के सहयोग से मनाई जा रही है। बिहार की नितिश सरकार ने तख्त पटना साहिब कमेटी के सहयोग से शहीदी जागृति यात्रा निकाली जो कि 42 दिन तक देश के अलग-अलग राज्यों में से होकर श्री आनंदपुर साहिब में समाप्ति हुई, पटना की धरती पर सर्व धर्म सम्मेलन करवाया गया, जिसमें देशभर से धार्मिक शख्सीयतों ने गुरु जी के इतिहास की गाथा का वर्णनन अपने अन्दाज में किया। हरियाणा और पंजाब की सरकारों के द्वारा भी अनेक कार्यक्रम किए जा रहे हैं, वहीं दिल्ली की रेखा गुप्ता सरकार भी इन पलों को ऐतिहासिक बनाने के लिए पिछले कई दिनों से तैयारियां कर रही है। स्वयं मुख्यमंत्री पूरी दिलचस्पी लेकर मंत्री मनजिन्दर सिंह सिरसा के साथ तैयारियों पर नजर बनाए हुए हैं। सरकार के द्वारा लाल किले पर अस्थाई आडीटोरियम बनाया जा रहा है जिसमें समय-समय पर कई तरह के धार्मिक कार्यक्रम, गतका मुकाबले आदि होंगे। 19 तारीख से लाईट एंड साऊड के शौ करवाए जायेंगे। इसी प्रकार एक आडियो वीडीयो म्यूजियम बनाया गया है जिसमें गुरु जी की शहादत की गाथा को चित्रों के रूप में दर्शाया जाएगा। 22 तारीख की शाम को गुरुद्वारा शीश गंज साहिब से लाल किले तक पूरी सड़क की धुलाई की जाएगी। दिल्ली सिख गुरुद्वारा प्रबन्धक कमेटी के द्वारा 23 से 25 तारीख तक लाल किला मैदान में धार्मिक समागम करवाए जा रहे हैं जिसमें देश विदेश से लाखों श्रद्धालुओं के पहुंचने का अनुमान है। देश के प्रधानमंत्री, गृहमंत्री से लेकर सभी राजनीतिक दलों के नुमाईदें कार्यक्रमों का हिस्सा बन सकते हैं। कुल मिलाकर कहा जाए तो दिल्ली इतिहास रचने जा रही है जिसे सदियों तक याद रखा जाएगा।

**गुरु तेग बहादुर जी की स्थाई यादगार :** सिख संगतों द्वारा दिल्ली और केन्द्र की सरकार से मांग की जा रही है कि गुरु तेग बहादुर जी और उनके साथ शहीद हुए सिखों की एक स्थाई यादगार दिल्ली के अन्दर बनाई जानी चाहिए जिससे देश ही नहीं विदेशों से आने वाले सैनानी भी गुरु साहिब की शहादत की जानकारी प्राप्त कर सकें। शीला दीक्षित सरकार के द्वारा हालांकि एक मैमोरियल बीते समय में दिल्ली के सिन्धु बार्डर पर बनाया गया था मगर उसका कोई लाभ तो क्या ही मिलना था वह तो आज की तारीख में युवा प्रमियों के मिलन का स्थल बनकर रह गया है। सिख बुद्धिजीवियों का मानना है कि इसके लिय सही स्थान नहीं चुना गया अगर इसे सैन्टर दिल्ली में कहीं बनाया जाता तो शायद आज यह वाक्य ही एक यादगार के रुप में स्थापित होता मगर उस समय सरकार ने सिखों को खुश करने के लिए इसका निर्माण तो करवा दिया मगर ऐसा स्थान जहां कोई जाकर नहीं देखता यहां तक कि वहां से गुजरने वालों को भी पता ही नही चल पाता कि यहां कोई मैमोरियल भी है। शुरुआत में स्कूलों के बच्चों को यहां लेजाया जाता, लाईट एंड साउंड शौ भी होते मगर धीरे-धीरे सब बंद हो गए। रेखा गुप्ता सरकार ने आते ही ही मैमोरियल के कायाकलप की सोच के साथ मनजिन्दर सिंह सिरसा और कपिल मिश्रा का दौरा भी करवाया, पर शायद इसका कोई लाभ नहीं होने वाला। सरकार को चाहिए कि दिल्ली के सैन्टर में कोई स्थान देखकर एक स्थाई यादगार गुरु तेग बहादुर जी की बनाई जानी चाहिए।

दिल्ली आर.एन.आई. नं. 40474/83
पंजाब केसरी
दिल्ली कार्यालय :
फोन आफिस: 011-30712200, 45212200,
प्रसार विभाग: 011-30712224
विज्ञापन विभाग: 011-30712229
सम्पादकीय विभाग: 011-30712292-93
मैगजीन विभाग: 011-30712330
फैक्स : 91-11-30712290, 30712384, 011-45212383, 84
Email: Editorial@punjabkesari.com

स्वत्वाधिकारी दैनिक समाचार लिमिटेड, 2-प्रिंटिंग प्रैस कॉम्पलैक्स, नजदीक वजीरपुर डीटीसी डिपो, दिल्ली-110035 के लिए मुद्रक, प्रकाशक तथा सम्पादक अनिल शारदा द्वारा पंजाब केसरी प्रिंटिंग प्रैस, 2-प्रिंटिंग प्रैस कॉम्पलैक्स, वजीरपुर, दिल्ली से मुद्रित तथा 2, प्रिंटिंग प्रैस कॉम्पलैक्स, वजीरपुर, दिल्ली से प्रकाशित।

प्रवाह
77 साल बेमिसाल
निर्भीक पत्रकारिता का आठवां दशक
स्थापना : 18 अप्रैल 1948 • आगरा

शरणार्थी आतंकवादी नहीं, बल्कि अक्सर आतंकवाद के पहले शिकार होते हैं। -एंटोनियो गुटेरेस

कुख्यात नक्सली कमांडर माडवी हिडमा का मारा जाना देश में माओवादी आंदोलन के लिए अब तक का सबसे बड़ा झटका है। अमूमन किसी बड़े नक्सली नेता के मारे जाने पर कोई दूसरा उसकी जगह ले लेता है, लेकिन अब स्थिति अलग है।

# बड़ी कामयाबी

छत्तीसगढ़ और तेलंगाना की सीमा पर आंध्र प्रदेश के अल्लूरी सीतारामराजू जिले के घने जंगलों में हुई निर्णायक मुठभेड़ में कुख्यात नक्सली कमांडर माडवी हिडमा का मारा जाना देश में माओवादी आंदोलन के लिए अब तक का सबसे बड़ा झटका सिर्फ इसलिए नहीं है, क्योंकि यह नक्सलवाद के इतिहास में सुरक्षाबलों पर किए गए सबसे क्रूर हमलों का रणनीतिकार था, बल्कि इसलिए भी है कि वह एक थके हुए, अप्रासंगिक व अंत की कगार पर खड़े आंदोलन को प्रेरणा दे सकने वाला आखिरी व्यक्ति हो सकता था। हिडमा कोई साधारण माओवादी नहीं था। करीब तीन दशकों तक उसका नाम बस्तर के जंगलों में एक मिथक की तरह घूमता रहा। छत्तीसगढ़ के सुकमा जिले के पुवर्ती गांव में जन्मा यह आदिवासी युवक 1990 के दशक में संगठन से जुड़ा और तेजी से ऊपर उठा। यह बस्तर क्षेत्र का इकलौता आदिवासी था, जो सेंट्रल कमेटी तक पहुंचा। उसके नाम 26 से अधिक बड़े हमले दर्ज हैं, जिनमें सैकड़ों जवानों और निर्दोषों की जान गई। यह सफलता इसलिए भी ऐतिहासिक है, क्योंकि केंद्रीय गृह मंत्री अमित शाह ने सुरक्षा अधिकारियों को हिडमा को खत्म करने के लिए 30 नवंबर तक का समय दिया था, लेकिन यह कार्य डेडलाइन से 12 दिन पहले ही पूरा कर लिया गया। हाल ही में, सुरक्षाबलों द्वारा एक अन्य बड़े इनामी नक्सली प्रमुख बसवराजू के मारे जाने के अलावा भी पिछले कुछ महीनों में कई नामचीन नक्सली या तो मारे जा चुके हैं या आत्मसमर्पण कर चुके हैं। अब बचे-खुचे नक्सली सीधे टकराव से बचते हुए छोटे-छोटे समूहों में बिखर सकते हैं। इससे पैदा हुई युद्धविराम जैसी स्थितियों में उन पर बातचीत के लिए दबाव बनाया जा सकता है। नक्सलवादी इतिहास बताता है कि किसी बड़े नक्सली नेता के मारे जाने पर कोई दूसरा उसकी जगह ले लेता है, लेकिन अब स्थिति अलग है। देश से नक्सलवाद के खात्मे के लिए गृह मंत्रालय की तरफ से मार्च, 2026 की समयसीमा निर्धारित की गई है, लेकिन जिस तरह से

माडवी हिडमा के खात्मे के अगले ही दिन सात और नक्सली ढेर व करीब 50 गिरफ्तार किए जा चुके हैं, उसे देखते हुए देश में नक्सलवाद का अंत भी समयसीमा से पहले हो जाए, तो हैरत नहीं होनी चाहिए। हालांकि, नक्सलवाद से मुक्ति नजदीक होने के उत्साह में यह नहीं भूला जाना चाहिए कि यह एक सामाजिक-आर्थिक समस्या अधिक थी, जिसे बंदूक की नली से जोड़कर हिंसक बना दिया गया। ऐसे में यह जरूरी है कि देश में नक्सलवाद के खात्मे से उपजे शून्य को स्कूल, सड़कों और अस्पताल जैसी जन कल्याणकारी गतिविधियों से भरा जाए, ताकि भविष्य में ऐसे किसी आंदोलन की जरूरत ही न रह जाए।

# वाम और दक्षिण में उलझा यूरोप

यूरोपीय राजनीति में 'फार राइट' फिर 'सेंटर लेफ्ट' और फिर....का सिलसिला एक पैटर्न बनता दिख रहा है। ऐसे में, प्रश्न उठता है कि आप्रवासियों जैसे मुद्दे वास्तविक हैं या फिर केवल फोबिया। 2015 में शार्ली हेब्दो के दफ्तर में कत्लेआम या विएना के आतंकी हमले सिर्फ फोबिया के उदाहरण पेश नहीं करते।

वैचारिक और तकनीकी विकास के अर्थों में आज के यूरोप को देखने की कोशिश करते समय न जाने वह यूरोप क्यों नहीं दिखता, जो पुनर्जागरण के उस बुद्धिमत्तावाद से निर्मित हुआ था, जिसमें एक 'नए मानव'(न्यू मैन) और एक 'नई दुनिया' (न्यू वर्ल्ड) की खोज की ताकत थी। शायद उसी के दम पर उसने पूरी दुनिया पर कई सदियों तक शासन किया। लेकिन अब वही यूरोप द्वंद्वों का शिकार दिख रहा है। उसमें आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के युग में नई प्रतिस्पर्धा की महत्वाकांक्षा तो दिख रही है, लेकिन वह 'फार राइट' (दक्षिणपंथ) और 'सेंटर लेफ्ट' (मध्य मार्ग) के संघर्ष में उलझ गया है। सच में यह विचार करने का समय है कि उस कालखंड में जब बद्दुओं के (प्राचीन संदर्भों में अरब) देश दुनिया के टैलेंट को आकर्षित करने के लिए 'टैलेंट अट्रैक्शंस एंड रिटेंशन' जैसे मंत्रालयों का गठन कर रहे हैं, तब यूरोप के देश प्रवासन पर लेफ्ट-राइट कर रहे हैं।

रहीस सिंह
वैदेशिक मामलों के जानकार

यूरोप से प्रकाशित एक अखबार को पढ़ते समय एक संदर्भ में आयरिश लेखक डब्ल्यू बी यीट्स की पुस्तक *द सेकंड कमिंग* की उन पंक्तियों का जिक्र मिला, जिनमें आज भी यूरोप के विश्लेषक सूत्र खोजने की कोशिश कर रहे हैं, विशेषकर तब, जब वहां कोई राजनीतिक संकट उभर कर सामने आता है। इसके साथ ही, उनकी कविता की एक पंक्ति और लिखी थी, जिसमें कहा गया है-'सबसे अच्छे लोग अपने विश्वास को खो चुके हैं और सबसे बुरे लोग पूरी ऊर्जा से भरे हुए हैं।' तो क्या सच में आज के यूरोप की राजनीति का यही हाल है? यह बात तब भी खटकी थी, जब पूरे यूरोप में 'फार राइट' यानी दक्षिणपंथ की बयार तेज थी, लेकिन ब्रिटेन के नव उद्योगवादी और नव बाजारवादी कंजर्वेटिव समाजवाद के थपेड़ों को झेल नहीं पाए थे।

यह तो सभी ने देखा ही होगा कि जिस ब्रिटेन के लोग कुछ साल पहले तक सेंटर लेफ्ट लेबर पार्टी के 'क्वासी नेशनलिस्ट' और 'क्वासी लिबरल' एप्रोच को खारिज कर रहे थे, वही आखिर में कंजर्वेटिव्स के

राष्ट्रवाद से मुंह मोड़ लिए, आखिर क्यों? वे ठीक 180 डिग्री कैसे घूम गए? यही सवाल अब नीदरलैंड को देखकर भी किया जा रहा है, जहां मतदाताओं ने, जो मुख्यधारा के दलों से निराश और क्रोधित थे, उन उम्मीदवारों की ओर रुख किया, जो सिस्टम-विरोधी छवि पेश करते हैं, जिसके कारण अतिवादी शक्तियां वोट बटोर ले जाती हैं। लेकिन जब फार राइट्स (दक्षिणपंथी) वाले दल सत्ता में आए, तो जनता कुछ ही दिनों में उनसे दूर होने लगी। इस मोहभंग का असल कारण क्या है? 'सेंटर लेफ्ट' (वाम मार्गी) का लंबा अनुभव और वृहत आधार, अथवा कुछ और? आखिर वे फिर से सेंटर लेफ्ट की ओर क्यों लौटे?

ध्यान रहे कि नीदरलैंड में गीर्ट वाइल्डर्स के नेतृत्व वाली 'फ्रीडम पार्टी' को 2023 में इसलिए अवसर मिला, क्योंकि डच जनता परंपरागत मध्यमार्गी (सेंटर लेफ्ट) राजनीति से थक चुकी थी। लेकिन वाइल्डर्स की पार्टी के पास वास्तविक समस्याओं-जैसे आप्रवासन और आवास संकट, का कोई ठोस समाधान नहीं था। परिणाम यह हुआ कि डच मतदाता रॉब जेटेन जैसे युवा की डेमोक्रेटिक 66 (डी 66) की ओर मुड़ गए। रॉब जेटेन ने गीर्ट वाइल्डर्स की उस राजनीति को भी प्रभावी चुनौती दे दी, जो आप्रवासन और इस्लाम-विरोध पर टिकी थी। ऐसा क्यों हुआ? क्या आप्रवासन यूरोप के लिए कोई प्रभावी या चिंताजनक विषय नहीं है? काफी समय पहले मेनहाइम (जर्मनी) से प्रकाशित होने वाले दैनिक *मेनहाइमर मॉर्गन* ने लिखा था-जर्मनी और यूरोप में बड़े पैमाने पर हो रहा आप्रवासन सिर्फ राष्ट्रीय समस्या नहीं है, बल्कि यूरोप में लोगों की एकजुटता को भी खतरे में डाल रहा है। तो यह प्रश्न भी उठा कि यह संकट वास्तविक है या फिर महज एक फोबिया है?

यूरोप के कुछ उदाहरण बताते हैं कि फोबिया और चिंता के बीच एक बड़ा फासला है। 2015 में शार्ली हेब्दो के दफ्तर में कत्लेआम किसी फोबिया का उदाहरण पेश नहीं करता और न ही सैमुअल पैटी का सिर कलम। विएना के आतंकी हमले और यूरोप के अन्य भागों में हो रही ऐसी घटनाएं, फोबिया नहीं हो सकतीं, बल्कि यूरोपीय मन पर गहरा प्रभाव छोड़ने वाली घटनाएं हैं। संभवतः, यूरोप में 'फार राइट' का उभार इसी की देन है। ध्यान रहे कि पोप बेनेडिक्ट 16वें ने काफी पहले जर्मनी के एक विश्वविद्यालय में भाषण देते हुए कहा था कि यूरोप अपने भविष्य में आस्था खो रहा है, क्योंकि वह खुद को इतिहास से मिटाने के रास्ते पर चल पड़ा है। लेकिन कब से? उससे कुछ पहले से या बहुत पहले से? जिस चिंता से पोप बेनेडिक्ट 16वें ग्रस्त थे, वही चिंता कभी डोनाल्ड ट्रंप व्यक्त करते दिखे, तो कभी इमैनुएल मैक्रों या अन्य यूरोपीय नेता। लेकिन हुआ क्या? आखिर पूरे यूरोप और अमेरिका में 'फार राइट्स' प्रायः व्यक्तिवादी क्यों दिखाई देते हैं? पर्सनालिटी कल्ट उनके लिए प्रमुख क्यों है? यह उनकी ताकत है या उनकी कमजोरी का प्रतीक? क्या अभी तक वे उस विचार का विकल्प तलाश पाए हैं, जिसने यूरोप से लेकर यूरोपीय यूनियन तक का निर्माण किया?

हालांकि, यह बात हंगरी के ओर्बन, पोलैंड के डूडा, इटली की मेलोनी और नीदरलैंड के वाइल्डर्स के विषय में अलग तरह से कह सकते हैं, क्योंकि ये सभी चाहते हैं कि यूरोप अपने मूल में ईसाई बने, लेकिन उसके मानदंड और नियम सभी के लिए एकसमान हों। परंतु कैथोलिक, प्रोटेस्टेंट, कैल्विनवादी, लूथेरियन, ऑर्थोडॉक्स आदि के अंदर मौजूद द्वंद्व उन्हें सभ्यतागत एकता से दूर ले जाते हैं। मतदाताओं द्वारा उन्हें चुनने और कुछ समय बाद ठुकराने का कारण शायद यही है। इसका एक कारण शायद यह भी है कि एक संस्थान के रूप में यूरोपीय संघ पर अभी 'सेंटर लेफ्ट' का प्रभाव बना हुआ है और वह एक ऐसे संविधानेत्तर संगठन के रूप में काम कर रहा है, जो किसी के प्रति उत्तरदायी नहीं है।

फिलहाल यूरोपीय राजनीति में 'फार राइट' फिर 'सेंटर लेफ्ट' और फिर....का सिलसिला एक पैटर्न बनता दिख रहा है, कारण कुछ भी हों। नीदरलैंड, ऑस्ट्रिया, पोलैंड, इटली, हंगरी और स्लोवाकिया जैसे देश इन्हीं लहरों के सहारे आगे बढ़ रहे हैं। लेकिन वहां अभी किसी 'अपराजेय संयोजन' की संभावना पूरी होती नहीं दिखी।

edit@amarujala.com

## जीवन धारा

हेनरी थॉमस हैम्बलिन

सफलता व असफलता का मूल इन्सान के चरित्र में छिपा होता है। जीवन की यात्रा में असली विजेता वही है, जो किसी भी परीक्षा के लिए तैयार रहे और सफलता की चमक में भी अपनी मानवता को जीवित रखे।

# विजेता वही, जो हर परीक्षा के लिए तैयार रहे

*यह दुनिया सफलता को तभी स्वीकार करती है, जब वह किसी सार्थक उद्देश्य को पूरा करे, यानी जब वह समाज को बेहतर बनाए, लोगों के जीवन में समृद्धि लाए और जनहित में अपना योगदान दे। चाहे हमारे कर्मक्षेत्र का दायरा छोटा ही क्यों न हो, यदि हम अपनी कमजोरियों पर विजय पाएं, सही राह पर चलते हुए दूसरों के जीवन में रोशनी भरें, और अपने रोजमर्रा के कार्यों को आवश्यकता से बेहतर करने का प्रयास करें, तो निस्संदेह हमारा जीवन सफल माना जाएगा। और यदि जीवन के अंत में हम कृतज्ञता से भरकर यह महसूस कर सकें कि हमने अपने समय, अवसरों और जीवन का सर्वोत्तम इस्तेमाल किया, तो यही सच्ची सफलता है।*

*लेकिन कुछ लोग सफलता को केवल धन और शोहरत तक सीमित कर देते हैं। ऐसे लोग भले ही बाहरी रूप से सफल दिखते हों, लेकिन वे अंततः एक असफल इन्सान ही साबित होते हैं, क्योंकि ऐसे लोग धन तो कमा लेते हैं, पर एक समय के बाद उन्हें एहसास होता है कि पैसे से कभी भी असली शांति या संतुष्टि नहीं खरीदी जा सकती। उनकी कामयाबी बाहर से तो सुनहरी दिखती है, लेकिन भीतर से खोखली और महंगी होती है, जिसके बदले वे जीवन का असली रस खो देते हैं। एक महान विद्वान ने कहा था कि यदि मनुष्य संपूर्ण संसार भी जीत ले, पर अपनी आत्मा खो दे, तो उसे क्या लाभ? यदि वह धन की लालसा में अपने सुख, अपने स्वास्थ्य, अपनी संवेदनशीलता, परिवार की मधुरता, प्रकृति की सुंदरता और जीवन का आनंद खो दे, तो उसकी जीत भी पराजय बन जाती है।*

*जो व्यक्ति जीवन में बिना दिशा के भटकता रहता है, और बेहतर बनने का प्रयास ही नहीं करता, वह नागरिक कहलाने के योग्य नहीं है। यदि इन्सान को इस उपाधि के योग्य बनना है, तो उसे निरंतर प्रयास करते हुए उन्नति पाने को अपना सिद्धांत बनाना होगा। दरअसल, सफलता व असफलता का मूल इन्सान के चरित्र में छिपा होता है। केवल वही व्यक्ति जीवन की कठोर चुनौतियों का सामना कर सकता है, जिसकी आत्मा पवित्र हो, संकल्प मजबूत हो और चरित्र अडिग हो। ऐसे व्यक्ति को जीवन के हर मोड़ पर कठिनाइयों की परीक्षा देनी पड़ती है। यह जरूरी भी है, क्योंकि कठिनाइयां कमजोर इच्छाशक्ति वाले लोगों को अलग कर देती हैं, और वही लोग आगे बढ़ते हैं, जिनमें विश्वास, साहस, धैर्य, दृढ़ता, प्रसन्नता और चरित्रबल का प्रकाश प्रबल होता है।*

*याद रखें, जीवन की यात्रा में विजेता वही है, जो हर परीक्षा के लिए तैयार रहे और सफलता की चमक में भी अपनी मानवता को जीवित रखे, क्योंकि यदि मनुष्य स्वयं पर इतना केंद्रित हो जाए कि उसका हृदय कठोर और निर्दयी बन जाए, तो यह असफलता से ज्यादा भयानक पतन है। सच्ची सफलता वही है, जो आत्मा के साथ संसार को भी समृद्ध करे।*

## अपने मूल्यों पर अडिग रहें

सूत्र

*अक्सर हम कामयाबी को केवल धन-संपत्ति या शोहरत से जोड़कर देखते हैं, लेकिन असली सफलता तो उससे कहीं ऊपर है। यह जीवन के हर मोड़ पर उठ खड़े होने की क्षमता है, चुनौतियों को अवसर में बदलने की हिम्मत है, और अंतिम सांस तक अपने उद्देश्य, चरित्र और मूल्यों पर अडिग रहने का नाम है।*

## दूसरा पहलू

शेन्जेन स्थित लॉनवी बायोसाइंसेज के अनुसार, 150 साल तक जीना ख्वाब नहीं, बल्कि हकीकत भी हो सकता है।

# अंगूर के बीज में छिपा है 150 साल जीने का राज

**कुछ** समय पहले, चीन के सरकारी टेलीविजन पर एक बातचीत में राष्ट्रपति शी जिनपिंग और उनके रूसी समकक्ष को यह चर्चा करते सुना गया कि इन्सान 150 वर्ष या उससे अधिक समय तक जीवित रह सकता है। इस बातचीत को सुनकर भले ही कई लोगों को हैरत हो, लेकिन चीन के शेन्जेन स्थित लॉनवी बायोसाइंसेज की प्रयोगशाला के लिए यह कोई आश्चर्य की बात नहीं थी। कंपनी के सीटीओ ल्यू किंगहुआ का मानना है कि 150 साल तक जीना अब ख्वाब नहीं, भविष्य की हकीकत है। उन्होंने यह भी कहा कि अगले पांच से दस वर्षों में किसी को भी कैंसर नहीं होगा।

एंड्रयू हिंगिस

लॉनवी का दावा है कि उसने अंगूर के बीजों से पीसीसी1 नामक ऐसी गोलियां बनाई हैं, जो इन्सानों की उम्र 100-120 साल बढ़ा सकती हैं।

लॉनवी ने अंगूर के बीजों के अर्क में पाए जाने वाले तत्व प्रोस्यानिडिन सी1 (पीसीसी1) पर आधारित एंटी-एजिंग गोलियां विकसित की हैं, जो कोशिकाओं को स्वस्थ रखती हैं। उनका दावा है कि ये गोलियां इन्सान की उम्र 100 से 120 वर्ष तक बढ़ा सकती हैं। कंपनी के सीईओ जिको का कहना है कि यह सिर्फ एक गोली नहीं, बल्कि जीवन का अमृत है। 2021 में *नेचर मेटाबोलिज्म* में प्रकाशित एक अध्ययन में पाया गया कि पीसीसी1 का जिन चूहों पर प्रयोग किया गया, उनकी उम्र 9.4 फीसदी और उपचार शुरू होने के बाद उनका जीवनकाल 64.2 प्रतिशत तक बढ़ गया। हालांकि, बाद में डाटा में कुछ त्रुटियों की बात सामने आई, पर कई अन्य अध्ययनों ने इस खोज का समर्थन किया।

*नेचर मेटाबोलिज्म* में प्रकाशित एक अध्ययन में पाया गया कि पीसीसी1 का जिन चूहों पर प्रयोग किया गया, उनकी उम्र 9.4 फीसदी और उपचार शुरू होने के बाद उनका जीवनकाल 64.2 प्रतिशत तक बढ़ गया।

अमेरिकी विशेषज्ञ डेविड बार्जिलाई के अनुसार, 'जो चूहों पर काम करता है, जरूरी नहीं कि वह हमेशा इन्सानों पर भी असर करे'। चीन अब दीर्घायु शोध को संस्थागत और नीतिगत स्तर पर गंभीरता से ले रहा है। हार्वर्ड मेडिकल स्कूल के प्रोफेसर वदीम ग्लैडिशेव के अनुसार, 'कुछ वर्ष पहले तक चीन इस क्षेत्र में बहुत पीछे था, पर अब उसने जबर्दस्त प्रगति की है।'

चीन की सरकार ने भी इस क्षेत्र को राष्ट्रीय प्राथमिकता दी है। *पीपुल्स डेली* के मुताबिक, चीन की औसत आयु अब 79 वर्ष हो गई है, जो वैश्विक औसत से पांच वर्ष अधिक है, हालांकि यह अभी भी जापान से पीछे है। टाइम पाई के सह-संस्थापक गान यू कहते हैं कि पहले दीर्घायु की चर्चा सिर्फ अमीर अमेरिकियों में होती थी, लेकिन अब चीनी भी इसमें निवेश कर रहे हैं। जीवन के अमृत की खोज, जिसे आज पीटर थील जैसे अमेरिकी अरबपति आगे बढ़ा रहे हैं, चीन में दो हजार साल पुरानी परंपरा है, जिसकी शुरुआत सम्राट किन शी हुआंग ने की थी। चीन अब इस क्षेत्र में तेजी से प्रगति कर रहा है।

©The New York Times 2025

## आंकड़े

### भारत और तपेदिक

दुनिया भर में तपेदिक (टीबी) के मामलों में सबसे तेज गिरावट के बावजूद भारत कुल वैश्विक मामलों के 25 फीसदी बोझ के साथ शीर्ष पर है।

| | |
|---|---|
| इंडोनेशिया | 10.0 |
| फिलीपींस | 6.8 |
| चीन | 6.5 |
| पाकिस्तान | 6.3 |
| नाइजीरिया | 4.8 |

आंकड़े टीबी के वैश्विक मामलों में देशों की हिस्सेदारी के, प्रतिशत में। स्रोत : ग्लोबल टीबी रिपोर्ट 2025 (डब्ल्यूएचओ)

रामकृष्ण परमहंस के विरुद्ध शिकायतों का अंबार लग चुका था, लेकिन उनके शब्दों ने शिकायतकर्ताओं को मौन कर दिया। वे समझ गए कि यह सच्चा भक्त है।

# मां का सच्चा भक्त

**एक** समय की बात है। दक्षिणेश्वर के काली मंदिर में रामकृष्ण परमहंस को पुजारी नियुक्त किया गया। उनका वेतन बीस रुपये मासिक तय हुआ। अभी पंद्रह दिन भी नहीं बीते थे कि उनके विरुद्ध शिकायतों का अंबार लग गया। कोई बोला, 'यह कैसा पुजारी है, जो पहले स्वयं भोग चखता है, फिर मां को लगाता है।' किसी ने आरोप लगाया कि वह फूल सूंघकर देवी के चरणों में चढ़ाते हैं।

वह मंदिर कमेटी के सामने पेश हुए। कमेटी के एक सदस्य ने पूछा, 'क्या यह सच है कि तुम फूल सूंघकर मां को चढ़ाते हो?' रामकृष्ण जी सहज भाव से मुस्कराए और बोले, 'बिना सूंघे मैं फूल मां को क्यों चढ़ाऊं? पहले देखता हूं कि उसमें सुगंध है भी या नहीं। अगर बदबूदार फूल चढ़ा दिया, तो मां को अच्छा नहीं लगेगा?' फिर दूसरी शिकायत आई, 'तुम भोग चखकर देवी को चढ़ाते हो?'

अंतर्यात्रा
संकलित

रामकृष्ण जी ने जवाब दिया, जी, मेरी मां भी ऐसा ही किया करती थीं। जब कोई चीज बनाती थीं, तो पहले खुद चखकर देख लेती थीं कि वह ठीक है या नहीं और उसके बाद ही मुझे खाने को देती थीं। मैं भी तो मां का बच्चा हूं। भक्त जो भोग लाते हैं या जो मैंने बनाया है, पहले मैं खाकर देखता हूं कि वह मां को देने लायक है या नहीं। अगर खराब निकला, तो मां को कैसे खिलाऊं? उनके इन सीधे-सादे और प्रेमपूर्ण शब्दों ने सबको मौन कर दिया। कमेटी के सदस्य और बाकी लोग निरुत्तर हो गए और समझ गए कि वह मां के सच्चे भक्त हैं।

## अमर उजाला

पुराने पन्नों से — 20 नवंबर, 1951

### राज्य की खाद्य स्थिति चिंताजनक

यू॰पी॰ की खाद्यस्थिति चिंता जनक

उत्तर प्रदेश के पूर्वी जिलों की खाद्य स्थिति काफी नाजुक हो गई है। राज्य के जो उच्च अधिकारी पीड़ित क्षेत्र का दौरा करने आए हैं, उनका कहना है कि हालात अति दयनीय है। बताया जाता है कि गोरखपुर के एक भाग की हालत काफी चिंताजनक है।

# ताकि दूध की पौष्टिक प्रतिष्ठा बनी रहे

एफएसएसएआई द्वारा जारी डेयरी उत्पादों के नमूनों से जुड़े आंकड़े चौंकाने वाले हैं। नीति-नियंताओं को इस ओर ध्यान देना चाहिए।

मुहम्मद खालिद जीलानी

स्वास्थ्य

भारत में श्वेत क्रांति के जनक अर्थात फादर ऑफ द व्हाइट रिवॉल्यूशन पद्म विभूषण डॉ. वर्गीज कुरियन की जयंती हम इसी महीने 26 नवंबर को 'राष्ट्रीय दुग्ध दिवस' के रूप में मनाएंगे। विश्व खाद्य पुरस्कार व मैग्सेसे से सम्मानित वह दुनिया के सबसे बड़े दुग्ध विकास कार्यक्रम बिलियन लीटर आईडिया (ऑपरेशन फ्लड) के लिए मशहूर हैं।

भारत में दूध का इस्तेमाल बहुत अधिक मात्रा में किया जाता है। हालांकि, इसकी पौष्टिक प्रतिष्ठा के पीछे एक बड़ा सवाल भी छिपा है, जो जनस्वास्थ्य और उपभोक्ताओं के विश्वास के लिए खतरा है। दूध की मात्रा बढ़ाने, पहचान बदलने या गुणवत्ता परीक्षणों को धोखा देने के लिए उसमें पानी, स्टार्च, डिटर्जेंट, यूरिया, कास्टिक सोडा, माल्ट्रोडेक्सट्रिन और यहां तक कि बेहद खतरनाक रासायनिक पदार्थ मिलाए जाते हैं। दूध में वसा की मात्रा बढ़ाने के लिए इस्तेमाल होने वाले कुछ रसायन, जैसे फॉर्मेलिन और हाइड्रोजन

पेरोक्साइड कैंसरकारी माने जाते हैं या लीवर व किडनी जैसे अंगों पर जहरीला प्रभाव डालते हैं। मिलावट का यह अनैतिक व्यवहार, मुनाफे के लिए न केवल दूध के प्राकृतिक पोषण मूल्यों से समझौता करता है, बल्कि उपभोक्ताओं के स्वास्थ्य और जीवन के लिए भी गंभीर खतरा पैदा करता है।

भारतीय खाद्य सुरक्षा और मानक प्राधिकरण (एफएसएसएआई) ने राज्यसभा में तीन वर्षों में लिए गए डेयरी उत्पादों के नमूनों से जुड़े आंकड़े जारी किए थे। एक रिपोर्ट के अनुसार, मिलावटी दूध के मामले में उत्तर प्रदेश अव्वल है। दूसरे नंबर पर राजस्थान, तीसरे पर तमिलनाडु और चौथे पर केरल का नाम है। रिपोर्ट में सामने आए ये आंकड़े चौंकाने वाले हैं। उत्तर प्रदेश में मिलावटी दूध बेचने वालों पर कार्रवाई भी हुई। यहां मिलावटखोरी के 1,928 मामले, जबकि तमिलनाडु में 944, केरल में 737, महाराष्ट्र में 191, बिहार में 174 केस दर्ज किए गए। पिछले पांच सालों में उत्तर प्रदेश के कई शहरों में दूध में मिलावट के बड़े मामले पकड़े गए हैं। अमोनिया और यूरिया के कारण खराब हुए स्वाद को बदलने करने के लिए अब स्टार्च मिलाया जाने लगा है, जिससे दूध में मिलावट का स्वाद पता नहीं चलता है। हैरान करने वाली बात यह है कि बिना मशीनों और लैब जांच के मिलावटी दूध की पहचान करना काफी मुश्किल हो गया है।

राष्ट्रीय दूध सुरक्षा और गुणवत्ता सर्वेक्षण, 2018 ने हाइड्रोजन पेरोक्साइड, यूरिया और डिटर्जेंट मिले हुए दूध को मानव स्वास्थ्य के लिए असुरक्षित बताया है। आंकड़ों के मुताबिक, भारत में दूध का जितना उत्पादन नहीं होता, उससे ज्यादा खपत होती है। भारत में वर्ष 2013-14 में 14.63 करोड़ टन दुग्ध उत्पादन होता था, जो आज बढ़कर 23.06 करोड़ टन हो गया है। इसमें छह प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से वृद्धि हो रही है, जबकि वैश्विक औसत वार्षिक वृद्धि दो प्रतिशत है। देश में दुग्ध उत्पादन क्षेत्र 68 फीसदी असंगठित है, जिसे सरकारी स्तर पर संगठित बनाने और उत्पादन बढ़ाने के प्रयास जारी हैं। वर्तमान में देश में डेयरी उत्पादन मूल्य 11.16 लाख करोड़ रुपये का है।

केंद्रीय पशुपालन एवं डेयरी मंत्रालय के आंकड़ों के मुताबिक, देश में मवेशियों की संख्या भी बढ़ी है, खासकर गायों की संख्या, 19.09 करोड़ से बढ़कर 19.30 करोड़ हो गई है। इसी तरह भैंसों की संख्या 10.8 करोड़ से बढ़कर 11 करोड़ हो गई है।

पशुपालन एवं डेयरी उद्योग से 12 करोड़ से अधिक लोगों को रोजगार मिला हुआ है। भारत सहित अमेरिका और यूरोप जैसे कई देशों में दूध में मिलावट करने के लिए सख्त कानून हैं। चीन में तो फांसी की सजा का प्रावधान है। यहां खाद्य पदार्थों में, विशेषकर दूध और डेयरी उत्पादों, मिलावट एक गंभीर अपराध माना जाता है। चीन में वर्ष 2008 में मेलामाइन स्कैंडल के बाद सरकार ने कड़े कदम उठाए। इस घोटाले में मिलावटी दूध और पाउडर से हजारों बच्चे बीमार हुए थे, मौतें भी हुई थीं और दोषी पाए गए लोगों को उम्रकैद और फांसी की सजा दी गई थी।

दुग्ध उत्पादकों को नैतिक मानकों का पालन करना चाहिए और मोटे मुनाफे के बजाय गुणवत्ता व स्वास्थ्य सुरक्षा को प्राथमिकता देनी चाहिए। इस समस्या के समाधान के लिए नीति-निर्माताओं, नियामकों, डेयरी उद्योग और उपभोक्ताओं के साझा प्रयासों की जरूरत है। मिलावट की विस्तृत श्रृंखला की सटीक पहचान करने वाली उन्नत परीक्षण तकनीकों का विकास करने पर जोर देना चाहिए। सरकार को खाद्य सुरक्षा के कठोर नियम-कानून लागू करने चाहिए। इसमें फांसी की सजा, उम्रकैद और जुर्माने का प्रावधान शामिल हो। उपभोक्ता जागरूकता व नैतिक व्यवहार को बढ़ावा देकर हम जनस्वास्थ्य की रक्षा करके यह सुनिश्चित कर सकते हैं कि दूध हमारे आहार का एक सुरक्षित व पौष्टिक हिस्सा बना रहे।

हिन्दुस्तान
1936
सत्य • सार्थक • सदैव

# आतंक केवल अपराध

मजहब का गलत इस्तेमाल शर्मनाक ही नहीं, भयंकर अपराध भी है। इसी दिशा में, लोकसभा सांसद असदुद्दीन ओवैसी के इस बयान का इस्तकबाल होना चाहिए कि आत्मघाती विस्फोट कतई शहादत नहीं है। गौरतलब है कि दिल्ली विस्फोट के एक आरोपी डॉक्टर उमर उन नबी ने अपने एक वीडियो में आत्मघाती विस्फोट को शहादत बताया है। यह भूल या भ्रांति अक्सर मजहब के नाम पर फैलाई जाती है कि मजहब की राह में फिदायीन हमले जायज हैं। इस भ्रांति को दूर करते हुए ओवैसी ने ऐसी घटना को साफ तौर पर आतंकवाद बताते हुए कहा है कि इस्लाम में आत्महत्या हराम है और मासूमों की हत्या घोर पाप। यह देश के कानून के भी खिलाफ हैं। ऑल इंडिया मजलिस-ए-इत्तेहादुल मुस्लिमीन (एआईएमआईएम) के प्रमुख ओवैसी का यह बयान हर आदमी तक पहुंचना चाहिए। वाकई, दुनिया में कोई ऐसा मजहब नहीं है, जो आत्महत्या को सही बताता हो। माना जाता है कि मनुष्य जीवन ईश्वर या प्रकृति की बड़ी कृपा से ही संभव होता है। प्राकृतिक मृत्यु ही उचित है, किंतु इधर आतंक की घृणित विचारधारा ने आत्मघाती हमलों का जो आपराधिक चलन शुरू किया है, उसकी सिर्फ निंदा होनी चाहिए।

दिल्ली विस्फोट की जांच जैसे-जैसे आगे बढ़ रही है, सच्चाई परत-दर-परत सामने आ रही है। दरअसल, डॉक्टर उमर कोई अकेला ऐसा आतंकी नहीं है, जिसने फिदायीन हमले को जायज ठहराया है। बड़ी संख्या में ऐसे लोग हैं, जो आत्महत्या ही नहीं, बल्कि मासूम लोगों की हत्या को भी मजहब के नाम पर जायज ठहराने में लगे रहते हैं। डॉक्टर उमर ने भी यह कोशिश की है, लेकिन नई बात यह हुई है कि ओवैसी जैसे जमीनी आधार वाले नेता ने इसकी भर्त्सना की है। आमतौर पर अल्पसंख्यकों के बड़े नेताओं को भी ऐसे मसलों में खामोश ही देखा जाता है, जबकि आज जरूरी है कि आत्मघाती हमलों को हर हाल में रोका जाए। किसी भी युवा को फिदायीन बनने के लिए बरगलाया न जाए। यह ध्यान देने योग्य बात है कि आतंकी विचारधारा जब आमने-सामने की लड़ाई में नाकाम होने लगती है, तब फिदायीन बनाने की साजिश रचती है। फिदायीन होना एक बड़ी नाकामी है। इससे व्यक्ति, परिवार, समाज और देश, सबको नुकसान होता है। इससे धर्म की पवित्रता को भी नुकसान पहुंचता है।

**एआईएमआईएम के प्रमुख असदुद्दीन ओवैसी का यह बयान हर किसी तक पहुंचना चाहिए। वाकई, दुनिया में कोई ऐसा मजहब नहीं है, जो आत्महत्या को सही बताता हो।**

बेशक, वरिष्ठ सांसद ओवैसी ने अपना काम कर दिया है और जांचकर्ताओं को अपना काम करना चाहिए। गौरतलब है कि जो फोन क्षतिग्रस्त हो गया था, उसके डाटा को हासिल कर लिया गया है और तभी आतंकी डॉक्टर उमर का वीडियो सामने आया है। अब यह सिद्ध हो चुका है कि साजिश में शामिल तमाम आतंकियों में सबसे कट्टर यही कथित डॉक्टर था। यह भारत में फिदायीन तैयार करने में लगा था। जांच अंतिम छोर तक पहुंचनी चाहिए। आज यह सवाल जरूरी है कि देश में ऐसे कितने लोग हैं, जो फिदायीन हमले जैसी वाहियात बात पर यकीन करते हैं? ऐसे कितने लोग हैं, जो इसकी तालीम दे रहे हैं? इस देश में किसी फिदायीन की जरूरत नहीं है। भारत एक धर्मनिरपेक्ष देश है, यहां की संस्कृति सत्य, अहिंसा, प्रेम, दया की पक्षधर है। हमारे नागरिकों को आतंकवाद संबंधी किसी मुगालते में नहीं रहना चाहिए। समाज में दहशत फैलाना भी गैर-मजहबी काम है। सच्चा मजहब तो मिलकर रहना सिखाता है। भारतीय कानून की विशेषज्ञता रखने वाले ओवैसी ही नहीं, हम सभी पर सांविधानिक जिम्मेदारी भी है कि हम गलत को गलत और सही को सही कहते रहें।

## हिन्दुस्तान Hindustan | 75 साल पहले

20 नवम्बर, 1950

### सरकार की खाद्य नीति

राष्ट्रपति के भाषण पर भारतीय संसद में जो बहस हुई, उसमें अधिकतर ध्यान देश की खाद्य समस्या पर केन्द्रित किया गया। अनेक वक्ताओं ने, जो अधिकांश में कांग्रेसजन ही थे, इस विषय में सरकार की कटु आलोचना की। इस पर खाद्य मंत्री श्री मुंशी को यह कहना पड़ा कि आप लोगों ने ही इस सरकार को अधिकार की कुर्सी पर बिठाया है, अतः आपको उसका समर्थन करना चाहिए। आप केवल उसकी आलोचना करके निराशा नहीं फैला सकते। निर्माण मंत्री श्री गाडगिल ने भी इसी आशय की बात कही। उन्होंने स्वीकार किया कि आन्तरिक और बाह्य परिस्थितियां विषम हैं, किन्तु जिस स्थान से संकट के समय लोगों को प्रेरणा और पथ-प्रदर्शन मिलना चाहिए, वहां से यदि निराशा की भावनाओं का प्रसार होने लगे, तो देश का भविष्य उज्ज्वल नहीं हो सकता।

हम श्री गाडगिल की इस बात से सहमत हैं कि परिस्थिति का सोच-विचारकर और व्यवस्थित ढंग से मुकाबिला किया जाना चाहिए और हमारी मनोवृत्ति समझने की और सहयोग की होनी चाहिए। किन्तु इसका यह अर्थ भी नहीं कि संसद के सदस्य सरकार की नीति और कार्यों की आलोचना न करें। सरकार को सदस्यों की आलोचनाओं से लाभ उठाना चाहिए। आलोचना केवल आलोचना तक ही सीमित रहती है और सरकार को उसके स्थान से हटा नहीं सकती, यह समझकर आलोचना की उपेक्षा करना उचित नहीं होगा। सरकार की ओर से सदस्यों के रचनात्मक सुझावों पर विचार करने का आश्वासन दिया गया है। एक सदस्य ने चीनी के आयात के संबंध में कथित गोलमाल की ओर ध्यान आकर्षित किया था। उनका कहना था कि एक विदेशी फर्म ने कम कीमत पर चीनी देने का प्रस्ताव किया था, किन्तु उस प्रस्ताव को रद कर दिया गया और बाद में ब्रिटेन से ऊंचे भावों पर चीनी आयात की गई। फलस्वरूप देश को एक करोड़ तीस लाख रुपये के लगभग घाटा उठाना पड़ा। यद्यपि खाद्य मंत्री ने इस मामले की जांच करवाने से इनकार कर दिया था, किन्तु प्रधानमंत्री ने उसकी जांच करना स्वीकार कर के सदस्यों का समाधान कर दिया। संसद के सदस्यों की ओर ने जब कभी कोई गड़बड़ी सरकार के ध्यान में लाई जाये, तो सरकार को इसी प्रकार उसकी जांच-पड़ताल करने के लिए प्रस्तुत रहना चाहिए।

# सीधे नकद बांटने की नीति बुरी नहीं

यहां स्कैन करें

अजीत रानाडे | अर्थशास्त्री

**आज भारत की हर पांच में से एक वयस्क महिला नकद राशि पा रही है। ऐसी योजनाएं यदि सही तरीके से लागू की जाएं, तो विकास होगा और महंगाई भी नहीं बढ़ेगी।**

जब किसी अर्थव्यवस्था में भारी मात्रा में नकद राशि डाली जाती है, तो क्या होता है? क्या वहां का सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) तुरंत बढ़ जाता है? बिल्कुल नहीं। अर्थव्यवस्था का मामूली जानकार भी बता सकता है कि इसका तात्कालिक नतीजा महंगाई के रूप में निकलेगा। आप वस्तुओं की समान मात्रा और सेवाओं के लिए अधिक पैसे खर्च करने लगते हैं। इसीलिए इस तरह के नकदी आर्थिक प्रोत्साहन का उपयोग अत्यधिक आर्थिक संकट (जैसे- गंभीर मंदी या खर्च के बजाय लोगों द्वारा नकदी जमा करना) की स्थिति में अपरंपरागत और अंतिम विकल्प के रूप में किया जाता है। इस तरह के नकदी प्रवाह का मतलब होता है, लोगों को 'मुफ्त' में पैसा मिलना। ऐसा इसलिए किया जाता है, ताकि वे अपना खर्च बढ़ा सकें और मांग में वृद्धि हो सके। लोगों की खरीदारी क्षमता यदि एक सीमा तक बढ़ जाए और अतिरिक्त वस्तुओं व सेवाओं की आपूर्ति आर्थिक विकास व महंगाई को नियंत्रित करते हुए की जाए, तब लोगों के जीवन-स्तर में सुधार होता है।

इस तरह का नकद प्रोत्साहन महंगाई बढ़ाएगा या कल्याण करेगा, यह इस बात पर निर्भर करता है कि मांग की आपूर्ति किस हद तक हो पा रही है। यह आपूर्ति श्रृंखलाओं की दक्षता पर निर्भर करता है, क्योंकि उन्हीं को कीमतें बढ़ाए बिना नई मांग को पूरा करने के लिए अन्य बाजार से वस्तुएं मंगवानी पड़ती हैं। जब रिजर्व बैंक अर्थव्यवस्था में नई 'मुफ्त' नकदी डालता है, तो उसे मौद्रिक नीति कहा जाता है। मगर जब कोई सरकार नकद हस्तांतरण करती है, तो वह एक राजकोषीय उपाय होता है, क्योंकि ऐसा करने के लिए उसे कुछ अन्य मदों के लिए खजाने का खर्च कम करना पड़ता है।

हाल ही में बिहार विधानसभा चुनावों में राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (एनडीए) को भारी जीत का श्रेय चुनावों की औपचारिक घोषणा से ठीक पहले महिलाओं के लिए घोषित नकद हस्तांतरण योजना को दिया जा रहा है। चुनाव की पूर्व संध्या पर घोषित ऐसी योजनाओं के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले पैसे की सांविधानिकता पर हम यहां चर्चा नहीं करेंगे। ऐसा इसलिए, क्योंकि यह मामला सर्वोच्च न्यायलय के अधीन है और वह 2019 में दायर एक जनहित याचिका पर सुनवाई कर रहा है। उसमें संविधान के अनुच्छेद 14, 21, 112 और 202 के उल्लंघन की बात कहते हुए इन रेवड़ियों पर रोक लगाने की मांग की गई है। इस मुकदमे में 2013 के एक फैसले का हवाला दिया गया है, जिसमें चुनाव आयोग को यह निर्देश दिया गया था कि इन रेवड़ियों के समय और दायरे को लेकर वह दिशा-निर्देश तैयार करे।

बहरहाल, हम यहां नकद हस्तांतरण के अन्य पहलुओं, विशेषकर महंगाई, कल्याणकारी योजनाओं और सरकारी खजाने पर पड़ने वाले प्रभाव को लेकर विमर्श कर रहे हैं। बिहार उन राज्यों में शुमार है, जहां महिलाओं के लिए 12 से अधिक नकद योजनाएं चल रही हैं। एक्सिस बैंक के एक शोध के अनुसार, भारत की हर पांच में से एक वयस्क महिला नकद राशि पा रही है। इस वर्ष कुल भुगतान देश के सकल घरेलू उत्पाद का 0.5 प्रतिशत होगा, और कुछ राज्यों में यह सरकारी खर्च का पांच प्रतिशत से भी अधिक हो सकता है। बिहार में जितने पैसे बांटे जाएंगे, वह इस वर्ष के बजट में निर्धारित कुल पूंजीगत खर्च से अधिक होगा। यह स्थिति तब है, जब उसका राजकोषीय घाटा पहले ही राज्य के सकल घरेलू उत्पाद का छह प्रतिशत से अधिक हो चुका है, जबकि इसकी आदर्श स्थिति तीन प्रतिशत मानी जाती है। यही बात महाराष्ट्र और ओडिशा जैसे कई राज्यों के लिए भी सच है। ये सभी या तो राजकोषीय तनाव में होंगे या उन्हें पूंजीगत खर्च या सामाजिक क्षेत्र के अन्य खर्चों में कटौती करनी होगी। आगामी विधानसभा चुनावों को देखते हुए असम और बंगाल ने अपने बजट क्रमशः 31 प्रतिशत और 15 प्रतिशत बढ़ा दिए हैं। अक्तूबर 2024 में झारखंड सरकार ने भी महिलाओं को दिए जाने वाले मासिक भुगतान को दोगुना से ज्यादा (1,000 ले 2,500 रुपये) कर दिया है।

सरकारी खजाने पर भार बढ़ाने के अलावा क्या नकद हस्तांतरण महंगाई भी बढ़ाता है? सिद्धांतों में इसका जवाब खोजने के बजाय हमें हकीकत की जमीन पर इसकी पड़ताल करनी चाहिए। निस्संदेह, नकद प्रवाह क्रय-शक्ति और मांग को बढ़ाता है, लेकिन अब तक भारत में महंगाई पर इसका बहुत ज्यादा असर नहीं दिखा है। इसका खाद्य कीमतों पर असर नहीं पड़ा है, क्योंकि पहले से ही यहां बड़े पैमाने पर मुफ्त खाद्यान्न योजना चल रही है, जो एक तरह का हस्तांतरण ही है। वैसे भी आमतौर पर खाद्य मुद्रास्फीति नकद हस्तांतरण योजनाओं के बजाय आपूर्ति में गड़बड़ी और वैश्विक कारणों से बढ़ती-घटती है। इसीलिए, जिन परिवारों को नकद मिलता है, वे उसे गैर-खाद्य उत्पादों पर खर्च करते हैं। इसका एक बड़ा हिस्सा कर्ज या ईएमआई चुकाने में भी किया जाता है। गौरतलब यह भी है कि बीते कुछ वर्षों में परिवार पर विभिन्न मदों का कर्ज बढ़ा है।

नकद हस्तांतरण के कल्याणकारी प्रभावों की बात करें, तो यह गरीबी उन्मूलन का साधन है, लेकिन सशर्त हस्तातंरण (यानी, केवल महिलाओं के लिए) ने भी कल्याणकारी मानकों में सुधार किए हैं, जैसे- स्कूल में उपस्थिति और बच्चों की सेहत से जुड़े मानकों में। झारखंड के आय हस्तांतरण पर हुए एक अध्ययन में अर्थशास्त्री कार्तिक मुरलीधरन ने पाया है कि इससे घरों में खान-पान पर खर्च बढ़ा है और उनकी गुणवत्ता सुधरी है। इससे परिवारों के भीतर लैंगिक समानता भी बढ़ी है, जो महिला सशक्तीकरण की ओर इशारा करती है। मेक्सिको, ब्राजील और केन्या में मिले नकद हस्तांतरण के लाभ भी इसकी पुष्टि करते हैं।

बेशक, महिलाओं को नकदी देने को एक सफल चुनावी रणनीति के रूप में आज देखा जा रहा है, लेकिन साल 2017 के आर्थिक सर्वे को याद कीजिए, तो उसमें सार्वभौमिक बुनियादी आय (यूबीआई) की बात कही गई थी। अगर नकद हस्तांतरण के बजाय हम यूबीआई अपनाते हैं, तो राजनीतिक विभेद भी खत्म हो सकता है। सार्वभौमिक बुनियादी आय को यदि सही तरीके से लागू किया जाए, तो यह देश में कल्याणकारी सुधार एजेंडे का आधार बन सकता है, जिससे महंगाई भी नहीं बढ़ेगी। हालांकि, सच यह भी है कि सभी राजनीतिक दल इस पर राजी हो जाएंगे, तो यह चुनावी सफलता की गारंटी नहीं रह जाएगी।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

# संबंधों को नए सिरे से संवार रहे भारत और भूटान

यहां स्कैन करें

हर्ष वी पंत | प्रोफेसर, किंग्स कॉलेज लंदन

पिछले दिनों प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी दो दिवसीय यात्रा पर भूटान में थे। दक्षिण एशिया की तेजी से बदलती भू-रणनीतिक स्थिति के बीच इस पड़ोसी देश के प्रति भारत की प्रतिबद्धता की ओर इस दौरे ने सबका ध्यान आकर्षित किया है। इस यात्रा का मकसद भूटान के हालात को समझना तो था ही, वहां की लोकप्रिय राजशाही के प्रति जुड़ाव को भी रेखांकित करना था।

आज भूटान दोराहे पर खड़ा है। दशकों से अनसुलझे आर्थिक-सामाजिक समस्याओं के साथ आर्थिक विविधता के अभाव के कारण वहां पर बेरोजगारी दर 17.8 प्रतिशत तक पहुंच गई है। हाल के वर्षों में भूटान की नौ प्रतिशत से अधिक आबादी पलायन कर चुकी है, जिससे देश की कार्यशील आबादी और नौकरशाही कमजोर पड़ गई है। साल 2027 तक वहां बुजुर्गों की संख्या सर्वाधिक हो जाएगी। उधर चीन की ओर से घुसपैठ जारी है, जिससे उस पर दबाव बढ़ रहा है। इन तमाम चुनौतियों से निपटने के लिए भूटान अपने पांचवें राजा जिग्मे खेसर नामग्याल वांगचुक के नेतृत्व में प्रयास कर रहा है। अपनी अर्थव्यवस्था, शासन और दक्षता में सुधार के लिए वह प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भारी निवेश कर रहा है। राष्ट्रवाद को नया रूप देने के लिए भूटान ने 18 वर्ष की आयु वाले नागरिकों के लिए अनिवार्य राष्ट्रीय सेवा की नीति (ग्यालसुंग) शुरू की है। साथ ही, असम से सटे इलाके में 'गेलेफू माइंडफुलनेस सिटी' नाम से एक विशेष प्रशासनिक क्षेत्र परियोजना शुरू की है, जिसका उद्देश्य अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देना है।

**भूटान से रिश्ता कितना अहम है, इसे इसी बात से समझा जा सकता है कि दिल्ली विस्फोट के बाद भी हमारे एनएसए ने अपनी यात्रा रद्द नहीं की।**

इधर, भारत भी भूटान के साथ अपने संबंधों को नया रूप दे रहा है। भूटानी प्रधानमंत्री शेरिंग तोबगे जनवरी 2024 से छह बार और नरेश नामग्याल वांगचुक चार बार भारत दौरे पर आ चुके हैं। प्रधानमंत्री मोदी भी दो बार भूटान की यात्रा कर चुके हैं। प्रधानमंत्री मोदी की यात्रा के दौरान 1,020 मेगावाट की पुनात्सांगचु-2 परियोजना का उद्घाटन हुआ, जिससे भूटान की कुल उत्पादन क्षमता में 40 प्रतिशत की वृद्धि हो जाएगी। भारत ने भूटान को ऊर्जा क्षेत्र में 4,000 करोड़ रुपये की ऋण सहायता प्रदान की है। यह भूटान की वर्तमान पंचवर्षीय योजना और आर्थिक प्रोत्साहन पैकेज के लिए 10,000 करोड़ रुपये की सहायता के अतिरिक्त है।

भूटान के चौथे नरेश की 70वीं जयंती के अवसर पर प्रधानमंत्री की हालिया यात्रा मजबूत और दीर्घकालिक द्विपक्षीय संबंधों का प्रतीक है। इस दौरान विश्व-शांति प्रार्थना महोत्सव का आयोजन किया गया और भारत से भगवान बुद्ध के पवित्र पिपरहवा अस्थि कलश को वहां ले जाया गया। भारत ने वाराणसी में बौद्ध मंदिर के निर्माण के लिए भूमि देने की घोषणा की है। नालंदा में एक भूटानी मंदिर पहले से ही है। गौरतलब है, भारत-भूटान के बीच आज जो इतना गहरा संबंध है, उसमें साल 1972 से 2006 तक सिंहासन पर रहे चौथे नरेश का बड़ा योगदान है। उनके नेतृत्व में ही भूटान और भारत ने पनबिजली साझेदारी शुरू की थी। सन् 1984 में चीन के साथ सीमा-वार्ता शुरू करने के बाद भी भूटान नरेश भारतीय चिंताओं व हितों के प्रति सचेत रहे और चीन के 'पैकेज डील' को नकार दिया था। साल 2003 में उन्होंने भूटान में छिपे भारतीय उग्रवादियों के खिलाफ 'ऑपरेशन ऑल-क्लियर' का व्यक्तिगत रूप से नेतृत्व किया।

अब तक चीन और भूटान के बीच 25 दौर की वार्ता हो चुकी है। हाल के वर्षों में इसमें प्रगति हुई है और थिंपू ने जटिल डोकलाम त्रि-जंक्शन मुद्दे को छोड़ दिया है और इस क्षेत्र पर त्रिपक्षीय वार्ता की वकालत की है। भारत और चीन सिक्किम क्षेत्र में सीमांकन के लिए इसे मुख्य बिंदु के रूप में देख रहे हैं। भूटान ने चीनी घुसपैठ को रोकने के लिए भारतीय रक्षा सहयोग और प्रौद्योगिकी की मांग की है। भूटान से रिश्ता कितना अहम है, इसे इसी से समझा जा सकता है कि इस यात्रा में प्रधानमंत्री मोदी के साथ राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार अजीत डोभाल भी मौजूद थे। उन्होंने दिल्ली में बम विस्फोट के बाद यात्रा रद्द नहीं की।

संक्षेप में, कनेक्टिविटी, विकास सहयोग, संस्कृति, ऊर्जा, रक्षा एवं सुरक्षा जैसे कई मुद्दों पर द्विपक्षीय चर्चा करके भारत ने यह दर्शाया है कि वह अपने इस पड़ोसी देश का एक अटूट साझेदार बना रहेगा, भले ही उसे घरेलू स्तर पर नए बदलावों का सामना करना पड़ रहा हो।

(साथ में आदित्य गोदारा शिवमूर्ति)

## मनसा वाचा कर्मणा

# दर्शन सबका आधार

चाणक्य अर्थशास्त्र की भूमिका में लिखते हैं- दर्शनशास्त्र वह दीपक है, जो सभी विज्ञानों को प्रकाशित करता है; सभी प्रकार्यों के लिए प्रविधि प्रदान करता है; और वह स्तंभ है, जो धर्म को सहारा प्रदान करता है।

व्यावहारिक जीवन में देखें, तो ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में दी जाने वाली उच्चतम उपाधि- पीएचडी या डीफिल में 'फिलॉसफी' शब्द का होना इसके गंभीर महत्व का परिचायक है। दर्शनशास्त्र की सबसे बड़ी विशेषता है कि वह हमें बौद्धिक या तार्किक से आगे विवेकशील बनाता है। बौद्धिकता या तर्क का दुरुपयोग हो सकता है, पर विवेकशीलता का नहीं। हम सभी जानते हैं कि कैसे ग्रीक दर्शन में कुछ बेहद तार्किक न्यायाधीशों ने सुकरात जैसे विवेकशील दार्शनिक को मृत्युदंड दिया था। सुकरात को दिया गया दंड विवेक पर आधारित नहीं था। यहां यह समझने की जरूरत है कि दर्शन केवल तर्क नहीं है, यह आगे बढ़कर विवेक व विद्वता है। केवल तर्क के आधार पर अन्याय संभव है, किंतु तार्किक विवेक के आधार पर न्याय होता है। सुकरात ने अपने ही दौर को नहीं, बल्कि पूरी दुनिया को सदा के लिए प्रभावित कर दिया था।

एक दार्शनिक बाहरी परिवेश से ज्यादा हमारे अंतर्मन को प्रभावित करता है, इसलिए सुकरात ने दार्शनिक को आत्मा का डॉक्टर कहा था। शिक्षा के क्षेत्र में यदि देखें, तो डॉ भीमराव आंबेडकर के शिक्षक रहे प्रसिद्ध दार्शनिक जॉन डीवी का यह विचार उल्लेखनीय है कि शिक्षा जीवन की तैयारी नहीं, अपितु शिक्षा ही जीवन है। शिक्षा के महत्व को भला कौन नजरअंदाज कर सकता है?

इसमें कोई संदेह नहीं कि शिक्षा हमें अंततः दर्शन की ओर ले जाती है। इसे सही दिशा देकर संसार को सुखी बनाना दर्शन के सामने सदा से चुनौती रही है। कृत्रिम बौद्धिकता और चैट जीपीटी के इस जमाने में गौतम बुद्ध के विचार 'अप्प दीपो भव' या फिर स्वामी विवेकानंद के आह्वान- शक्ति जीवन है, दुर्बलता मृत्यु है, जैसे संदेश हमारे जीवन के आधार-मूल्य हैं। शायद ही कोई समाज या राष्ट्र इनकी उपेक्षा कर सकता है।

भारत में दर्शनशास्त्र की सर्वोच्च संस्था है- भारतीय दार्शनिक कांग्रेस। इसकी स्थापना सौ साल पहले 1925 में दो महान दार्शनिकों- रबींद्रनाथ टैगोर और सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने की थी। इस संस्था का ध्येय-वाक्य राधाकृष्णन का यह कथन है- जब हम यह सोचते हैं कि हम जानते हैं, तब हम सीखना बंद कर देते हैं। अर्थात हमें निरंतर चिंतन करते रहना चाहिए। अच्छा सोचने के लिए अच्छा सीखते रहना चाहिए। तभी हम जीवन का सही अर्थ समझ पाएंगे व उसका आनंद ले पाएंगे। दर्शनशास्त्र अपनी विशिष्ट शैली के कारण आधुनिक अकादमिक जगत में भी विशेष स्थान रखता है। दर्शनशास्त्र सारे अकादमिक विषयों की जननी भी है और चरमोत्कर्ष भी।

**दर्शनशास्त्र की सबसे बड़ी विशेषता है कि यह हमें बौद्धिक या तार्किक से आगे विवेकशील बनाता है। बौद्धिकता या तर्क का दुरुपयोग हो सकता है, लेकिन विवेकशीलता का नहीं।**

सत्येन्द्र श्रीवास्तव

कैलाश सत्यार्थी | नोबेल विजेता

**बाल दिवस केवल उत्सव मनाने का नहीं, बल्कि नैतिक जिम्मेदारी और जवाबदेही का दिन भी है। यह बच्चों के अधिकारों की रक्षा के मामले में अपनी उपलब्धियों पर गर्व करने के साथ आत्ममंथन का मौका भी है।**

## अनुलोम-विलोम

### विश्व बाल दिवस

# प्रशासन की सुस्ती से बच्चों पर संकट

'भारत में औसतन हर आठ मिनट में एक बच्चा लापता हो जाता है'। सुप्रीम कोर्ट की यह टिप्पणी देश में बाल संरक्षण व्यवस्था की गंभीर कमजोरियों को रेखांकित करती है। न्यायमूर्ति बीवी नागरत्ना और न्यायमूर्ति आर महादेवन द्वारा व्यक्त चिंता केवल न्यायिक अवलोकन नहीं, बल्कि सामाजिक चेतावनी भी है, जो बताती है कि देश में बच्चों की सुरक्षा से संबंधित तंत्र अपनी मूलभूत जिम्मेदारियों को निभाने में किस हद तक विफल है। इस समस्या का पैमाना अत्यंत व्यापक है और इसके प्रभाव सामाजिक, आर्थिक, प्रशासनिक एवं नैतिक, सभी स्तरों पर दिखाई देते हैं।

राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो के आंकड़े इस संकट की गहराई का स्पष्ट प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। वर्ष 2023 में देश में लगभग 1.4 लाख बच्चे लापता हुए, जिनमें से लगभग 49,000 अब तक नहीं मिल सके हैं। वर्ष 2022 के आंकड़े बताते हैं कि लगभग 47,000 से अधिक लापता बच्चों में 72 प्रतिशत लड़कियां थीं। उसी वर्ष मानव तस्करी के 424 मामले दर्ज किए गए। पश्चिम बंगाल और मध्य प्रदेश जैसे राज्यों में गायब हुई लड़कियों की संख्या 10,000 से अधिक है, जो स्थानीय प्रशासन की प्राथमिकताओंऔर सुरक्षा तंत्र पर प्रश्नचिह्न लगाती है। 2020 और 2021 के बीच लापता बच्चों के मामलों में 30 प्रतिशत से अधिक की वृद्धि हुई।

सुप्रीम कोर्ट ने 'गुड़िया' नामक स्वयंसेवी संस्था की याचिका पर सुनवाई करते हुए केंद्र सरकार को नोडल अधिकारी नियुक्त करने का निर्देश दिया है और 'खोया-पाया' पोर्टल की कार्यक्षमता पर भी सवाल उठाए हैं। न्यायमूर्ति नागरत्ना ने गोद लेने की प्रक्रिया की अत्यधिक जटिलता पर गंभीर टिप्पणी करते हुए कहा कि जब औपचारिक गोद लेने की प्रक्रिया कठिन और लंबी होती है, तो अवैध नेटवर्क को प्रोत्साहन मिलता है, जिसके माध्यम से बच्चे तस्करी का शिकार बनते हैं। यह समस्या दर्शाती है कि कानूनी ढांचा तब तक प्रभावी नहीं हो सकता, जब तक कि वह व्यावहारिक और सुलभ न हो।

प्रशासनिक तंत्र में कई स्तरों पर गंभीर कमियां हैं। परिवारों द्वारा दर्ज कराई जाने वाली शिकायतों पर समय पर कार्यवाही नहीं होती। कई मामलों में पुलिस प्रारंभिक प्रतिक्रिया के रूप में यह मान लेती है कि बच्चा स्वयं लौट आएगा, जिससे खोज के शुरुआती महत्वपूर्ण घंटे व्यर्थ चले जाते हैं। राज्यों के बीच समन्वय का अभाव लापता बच्चों की तलाश को और चुनौतीपूर्ण बना देता है। मिशन वात्सल्य जैसी योजनाएं व विभिन्न पोर्टल मौजूद होने के बावजूद उनका प्रभाव जमीन पर नहीं दिखता। यह समस्या दर्शाती है कि केवल नीतियां बना देना पर्याप्त नहीं है।

देवेंद्रराज सुथार, टिप्पणीकार

# पहले के मुकाबले बहुत सुधरे हालात

देश में बच्चों का गायब होना चिंताजनक है। बच्चों के लापता होने के कई कारण हैं, जिनमें अपराध, तस्करी, हत्या और देह व्यापार आदि की आशंकाएं प्रबल हैं। इसमें प्रशासनिक लापरवाही एक बड़ा कारण हो सकती है, जिसमें सुधार की आवश्यकता हमेशा देखी जाएगी। हालांकि, किसी भी समाधान को केवल प्रशासनिक सुधारों तक सीमित नहीं रखा जा सकता। बच्चों के लापता होने के पीछे कई सामाजिक और मनोवैज्ञानिक कारण भी होते हैं, जो परिवार, स्कूल और समुदाय की भूमिका को महत्वपूर्ण बनाते हैं। परिवारों में संवाद की कमी, तनावपूर्ण सामाजिक वातावरण, मानसिक स्वास्थ्य से जुड़ी समस्याएं और जागरूकता का अभाव इस समस्या को और जटिल बना देते हैं। स्कूलों में परामर्श से जुड़ी सेवाएं सीमित और औपचारिकता भर होती हैं। समुदाय स्तर पर भी बच्चों की सुरक्षा और अधिकारों के प्रति संवेदनशीलता का अभाव देखने को मिलता है। कई घटनाओं में बच्चे पारिवारिक कलह, घरेलू हिंसा, परीक्षा के भय, भावनात्मक तनाव या प्रेम संबंधों के कारण घर छोड़ देते हैं। कुछ मामलों में रोजगार या बेहतर भविष्य के नाम पर बच्चे ऐसे जाल में फंस जाते हैं, जहां से लौटना लगभग असंभव हो जाता है। यह स्पष्ट करता है कि यह संकट केवल अपराध नियंत्रण से संबंधित नहीं, बल्कि सामाजिक, मनोवैज्ञानिक और आर्थिक कारकों से भी गहराई से जुड़ा हुआ है।

सरकार और स्वयंसेवी संस्थाओं की ओर से इस तरह के अपराधों पर अंकुश लगाने के लिए कई तरह के प्रयास किए जाते हैं। चाइल्डलाइन 1098 फोन नंबर प्रबंधन और निगरानी के लिए केंद्रीय महिला एवं बाल विकास मंत्रालय की नोडल एजेंसी है। यह भारत भर के लाखों बच्चों के लिए उम्मीद की किरण है। यह जरूरतमंद बच्चों के लिए 24 घंटे, साल के 365 दिन, मुफ्त आपातकालीन फोन सेवा प्रदान करता है। यह न केवल बच्चों की आपातकालीन जरूरतों का ध्यान रखता है, बल्कि उनकी दीर्घकालिक देखभाल और पुनर्वास के लिए उन्हें जरूरी सेवाओं से भी जोड़ता है। इस नंबर के तहत देश भर में 30 लाख बच्चों को देखभाल और सुरक्षा प्रदान किया जा चुका है। चाइल्ड लाइन इंडिया फाउंडेशन (सीआईएफ) सेवा की स्थापना सेवा वितरण और वित्त की निगरानी, प्रशिक्षण, अनुसंधान व जागरूकता पैदा करने, वकालत करने और सेवा के लिए संसाधन जुटाने हेतु जिम्मेदार एकमात्र सार्वजनिक एजेंसी/संस्था है। इस तरह की अनेक पहल देश भर में चल रही हैं और मामलों का समाधान किया जा रहा है। जरूरत इसे और प्रभावी बनाने की है।

रीना कुमारी, गृहिणी

https://t.me/AllNewsPaperPaid1

दैनिक जागरण
विचार व्यक्तित्व को आकार देते हैं

## बचने न पाएं माओवादी

कुख्यात माओवादी सरगना हिड़मा के अपने कई साथियों संग मारे जाने के दूसरे दिन जिस तरह कुछ और माओवादी मार गिराए गए, उससे माओवाद अंतिम सांसें गिनते हुए दिखने लगा है। अब यह उम्मीद बढ़ गई है कि अगले वर्ष मार्च तक माओवाद के खात्मे का लक्ष्य आसानी से पूरा हो जाएगा। ऐसा होता हुआ इसलिए दिख रहा है, क्योंकि अब तीन-चार माओवादी सरगना ही ऐसे रह गए हैं, जो पस्त पड़े अपने साथियों का नेतृत्व कर सकने में समर्थ हैं। यदि वे हथियार नहीं डालते तो उनका सफाया करने के अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं। बचे-खुचे माओवादियों को मुख्यधारा में आने के लिए अवश्य कहा जाना चाहिए, लेकिन उनके खिलाफ जो अभियान जारी है, उसमें कोई नरमी इसलिए नहीं आने दी जानी चाहिए, क्योंकि अतीत में उन्होंने निष्क्रिय रहकर अपने को फिर से संगठित करने के साथ ही ताकतवर भी बना लिया था। इस बार उन्हें कोई मौका नहीं दिया जाना चाहिए। इसलिए और भी नहीं, क्योंकि उनके हथियार डालने की शर्तें अत्यधिक उदार हैं। जो इन उदार शर्तों का लाभ उठाने को तैयार नहीं, उन्हें यह संदेश देने में संकोच नहीं किया जाना चाहिए कि उनका बचना संभव नहीं। मुख्यधारा में शामिल होने से इन्कार करने और अपनी लड़ाई जारी रखने वाले माओवादी किसी नरमी के हकदार नहीं हो सकते।

जितना जरूरी यह है कि हथियारबंद माओवादियों के खिलाफ दबाव और बढ़ाया जाए, उतना ही यह भी कि उन्हें वैचारिक खुराक देने वाले उनके दबे-छिपे समर्थकों पर शिंकजा कसा जाए। माओवाद सभ्य समाज विरोधी एक विषैली विचारधारा है। इस खतरनाक विचारधारा के लिए भारत में कोई स्थान नहीं हो सकता। यह सही समय है कि उन नकली मानवाधिकारवादियों पर भी निगाह रखी जाए, जो माओवादियों को गरीबों की लड़ाई लड़ने वाला बताते हैं। कुछ तो ऐसे हैं, जो खूंखार माओवादियों को बंदूकधारी गांधीवादी तक बता चुके हैं। तथ्य यह भी है कि वाम दलों को माओवादियों के खिलाफ जारी अभियान रास नहीं आ रहा है। ये दल इस अभियान को तो कठोर बताते हैं, लेकिन माओवादियों की बर्बरता के खिलाफ कभी मुंह नहीं खोलते। उन्हें यह भी नहीं दिखता कि माओवादी विकास के बैरी बन चुके हैं और वे सबसे अधिक नुकसान उन आदिवासियों को ही पहुंचा रहे हैं, जिनके हितैषी होने का फर्जी दावा करते हैं। एक समय माओवाद नक्सलवाद के रूप में था। बंगाल में अपनी कमर टूटने पर नक्सलियों ने ही आंध्र में माओवादियों का चोला धारण किया। अब वे किसी तरह का अन्य कोई चोला धारण न करने पाएं, इसके लिए विचारधारा के स्तर पर भी उनका सामना किया जाना चाहिए। यह भी आवश्यक है कि पिछड़े और विशेष रूप से आदिवासी इलाकों में विकास के कामों को समय रहते पूरे करने पर जोर दिया जाए।

## त्वरित न्याय

विधि आयोग की रिपोर्ट में इस बात का जिक्र हो चुका है कि न्याय मिलने में अत्यधिक देरी से लोगों में कानून के प्रति भय और विश्वास कम होने लगता है। लोग न्यायेतर समाधान की तलाश करने लगते हैं। इन सबके बीच त्वरित न्याय मिलने से लोकमन का विश्वास न्याय प्रणाली के प्रति गाढ़ा हो जाता है। ताजा मामला उत्तर प्रदेश के वाराणसी के रामनगर में आठ साल की एक बच्ची की दुष्कर्म के बाद हत्या में फांसी की सजा का है। बच्ची मच्छर मारने वाली अगरबत्ती खरीदने शाम के समय दुकान पर गई थी और घर लौटते समय हत्यारे युवक ने उसका मुंह दबाकर उसे खींच लिया था। दुष्कर्म के बाद उसकी स्कार्फ से गला दबाकर हत्या की गई और बोरी में भरकर सिर कुंचकर लाश एक स्कूल कैंपस में फेंक दी गई थी। इसके बाद अच्छी बात यह हुई कि पुलिस ने न केवल हत्यारे को मुठभेड़ के बाद दबोच लिया, बल्कि सीसीटीवी फुटेज जैसे मजबूत साक्ष्य जुटाकर न्यायालय में पैरवी की। केवल 11 माह में उसे फांसी की सजा दिलवाई। कोर्ट की यह टिप्पणी उचित ही है कि दोषसिद्ध अपराधी द्वारा मानवता को शर्मसार करने वाली घटना किसी मनुष्य द्वारा नहीं की जा सकती। 11 माह के अंदर फांसी की सजा होने से पुलिस और न्याय तंत्र के प्रति जनमानस का भरोसा बढ़ेगा। उम्मीद की जानी चाहिए कि इस त्वरित न्याय से उत्तर प्रदेश समेत देश के अन्य राज्यों में भी न्याय व्यवस्था को तेज किया जाएगा और पीड़ितों को समय रहत न्याय मिल सकेगा। न्याय के ऐसे उदारहण हमें जल्द ही और भी देखने को मिलने चाहिए।

> यह सर्वमान्य सत्य है कि न्याय में देरी न्याय से वंचित करने के समान है, फांसी के ऐसे फैसले उम्मीद जगाते हैं

# भारत को चिंतित करता बांग्लादेश

ऋषि गुप्ता

**पाकिस्तान में वे कट्टरपंथी ताकतें मजबूत हो रही हैं, जो उस पाकिस्तान की हमदर्द हैं, जिसने यहां के लोगों का दमन किया था**

अवधेश राजपूत

बांग्लादेश की अपदस्थ प्रधानमंत्री शेख हसीना ने 2010 में अंतरराष्ट्रीय क्राइम्स ट्रिब्यूनल की स्थापना के समय यह कल्पना भी नहीं की होगी कि 15 साल बाद यही अदालत उन्हें मौत की सजा सुनाएगी। प्रधानमंत्री हसीना ने इस ट्रिब्यूनल की स्थापना 1971 मुक्ति संग्राम के दोषियों को सजा दिलाने के लिए की थी ताकि मानवता के खिलाफ हुए जघन्य अपराधों के दोषियों को उनकी करतूतों की सजा दिलाई जा सके। हाल में इसी ट्रिब्यूनल ने शेख हसीना को मृत्युदंड की सजा सुनाई। उनके खिलाफ बांग्लादेश में कई मामले दर्ज हैं। इनमें से अधिकांश मामले जुलाई 2024 में हुए विरोध-प्रदर्शनों से जुड़े हैं। संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार उच्चायुक्त कार्यालय ने हसीना को सुनाई गई मृत्यु की सजा को गलत ठहराया है। हालांकि उसने यह भी कहा है कि पूर्व प्रधानमंत्री शेख हसीना को दोषी करार दिया जाना पिछले साल विरोध-प्रदर्शनों के दमन के दौरान हुए गंभीर उल्लंघनों के पीड़ितों के लिए एक महत्वपूर्ण पड़ाव है। उल्लेखनीय है कि उच्चायुक्त कार्यालय ने इस वर्ष फरवरी में अपनी फैक्ट फाइंडिंग रिपोर्ट में पूर्व प्रधानमंत्री हसीना की जुलाई-अगस्त 2024 में की गई पुलिस कार्रवाई में संलिप्तता भी पाई थी।

चूंकि पूर्व प्रधानमंत्री शेख हसीना इस समय भारत में हैं और ट्रिब्यूनल में चली कार्यवाही मौजूदा सरकार की मनमर्जी से हुई है, इसलिए उनकी गैरमौजूदगी में इस तरह के निर्णय का आना ट्रिब्यूनल की स्वतंत्रता पर सवाल उठाता है और राजनीति से प्रेरित जान पड़ता है। इस निर्णय से यह भी करीब-करीब साफ हो गया कि अब शेख हसीना की बांग्लादेश वापसी असंभव है। अंतरिम शासन के मुख्य सलाहकार मोहम्मद यूनुस की सरकार ने पहले ही शेख हसीना की अवामी लीग पार्टी पर प्रतिबंध लगा दिया है और अब हसीना को मृत्युदंड का निर्णय उनकी वापसी की बची-खुची उम्मीदों को भी खत्म करने वाला है। इसके साथ ही बांग्लादेश के भविष्य को लेकर अब नई बहस शुरू हो गई है। एक तो यह कि ऐसा निर्णय कितना न्यायसंगत है और दूसरी यह कि हसीना के प्रत्यर्पण से जुड़ी बांग्लादेश की मांग पर भारत को क्या रुख-रवैया अपनाना चाहिए? इसके कहीं कोई आसार नहीं कि भारत शेख हसीना को बांग्लादेश को सौंपेगा। बांग्लादेश को इसकी अपेक्षा भी नहीं करनी चाहिए, लेकिन यह भी तय है कि वह उन्हें अपने हवाले करने की मांग करता रहेगा। इस सिलसिले में इसकी अनदेखी नहीं की जा सकती कि शेख हसीना को आनन-फानन ढाका से दिल्ली उसी सेना ने रवाना किया था, जिसके समर्थन से मोहम्मद यूनुस के नेतृत्व वाली अंतरिम सरकार कायम हुई।

आज बांग्लादेश के माहौल पर गौर करें तो यह इस देश के इतिहास का एक दूसरा अध्याय है। पहला अध्याय 1971 के स्वतंत्रता आंदोलन, उसके पाकिस्तान से अलग होने और भारत के अथक सहयोग से उपजे परिदृश्य का है। दूसरा अध्याय जुलाई 2024 के आंदोलन से उपजा, जिसका उद्देश्य बांग्लादेश की राजनीतिक दशा-दिशा को बदलना था। बिना अवामी लीग और शेख हसीना के बांग्लादेश की परिकल्पना करना अभी मुश्किल है, लेकिन इतिहास गवाह है कि उनकी अनुपस्थिति या कमजोर होने की स्थिति में बांग्लादेश में कुछ खास ताकतें मजबूत होती गईं। इन दिनों भी ऐसी ही कट्टरपंथी ताकतें मजबूत हो रही हैं और इनमें से अधिकांश पाकिस्तान की हमदर्द हैं। उसी पाकिस्तान की, जिसने बांग्लादेश निर्माण से पहले यहां के लोगों को भयंकर यातनाएं दीं। अब जब बांग्लादेश की जनता का एक बड़ा हिस्सा अपने इतिहास को नए सिरे से लिखने पर आमादा हो और अंतरिम सरकार भी उसका साथ दे रही हो तो फिर इस पहलू को भी अनदेखा नहीं किया जा सकता कि 1971 के इतिहास को शेख हसीना द्वारा जिस प्रकार पेश किया किया, वह भी कहीं न कहीं उनके खिलाफ गया। बांग्लादेश में एक नई पीढ़ी 1971 के इतिहास से अपनी पुरानी पीढ़ी की तरह नहीं जुड़ पाती तो वहां विदेश नीति का बदलना भी स्वाभाविक है। चूंकि बांग्लादेश में भारत के खिलाफ माहौल बन रहा है, इसलिए शायद यह नई दिल्ली के लिए भी एक अवसर है कि वह भी उस इतिहास से परे मौजूदा परिप्रेक्ष्य में ढाका के साथ बातचीत की संभावनाएं तलाशे। हालांकि यह इतना आसान नहीं है, क्योंकि बांग्लादेश की भू-सामरिक स्थिति और वहां सक्रिय तमाम आक्रामक अतिवादी समूह भारत की सुरक्षा पर एक बड़ा सवालिया निशान लगाते हैं। हाल के दिल्ली धमाकों के भी कुछ तार बांग्लादेश से जुड़ते दिखाई दे रहे हैं। इसके अलावा भारत चीन की तरह बांग्लादेश के मामलों को केवल आंतरिक मुद्दा नहीं कह सकता, क्योंकि वहां से आने वाले घुसपैठिये लगातार भारत की संप्रभुता और अखंडता के लिए खतरा बने हुए हैं। अगर भारत बांग्लादेश की तरफ फिर से एक नए सोच के साथ हाथ बढ़ाए तब भी यह पूरी तरह निश्चित नहीं है कि उसका जवाब सकारात्मक मिले, क्योंकि भारत विरोध इस समय बांग्लादेश का एक अभिन्न अंग बन गया है और शेख हसीना के प्रत्यर्पण का मुद्दा बार-बार उठाया जाता रहेगा।

मोहम्मद यूनुस अंतरिम सरकार के एक अनिर्वाचित मुख्य सलाहकार ही हैं। उन्हें एक खास तबके और सोच वाले समूह ने ही सत्ता के शीर्ष पर बिठाया है। ऐसे में संभव है कि वे उसी तबके के निर्देश पर अपनी भारत नीति बनाएं। हालांकि यह जरूरी नहीं कि एक चुनी हुई सरकार भी भारत के प्रति ऐसा ही रवैया अपनाएगी, क्योंकि उसके सामने जनता के प्रति जवाबदेही का पहलू भी होगा। यह मानना भी ठीक नहीं होगा कि बांग्लादेश को लेकर भारत के सोच में यथास्थिति बनी रहेगी। यदि बांग्लादेश के राजनीतिक माहौल को देखा जाए तो बांग्लादेश नेशनलिस्ट पार्टी के लिए सहयोगी दलों के साथ सरकार बनाने का एक अवसर बन सकता है, जो भारत के प्रति शेख हसीना से लगाव के चलते उनका विरोधी रहा है। फिर भी यह स्मरण रहे कि विदेश नीति वैचारिक रुख के बजाय वास्तविक राजनीति पर आधारित होती है और ऐसा रुख भारत-बांग्लादेश के नीति निर्धारण में भविष्य में एक बड़ी भूमिका निभाएगा।

(लेखक एशिया सोसाइटी पालिसी इंस्टीट्यूट, नई दिल्ली में सहायक निदेशक हैं)

response@jagran.com

# बिहार की जरूरत बने नीतीश कुमार

केसी त्यागी

**नीतीश 20 साल मुख्यमंत्री रहने के बाद भी सत्ता विरोधी प्रभाव को उलटने वाले दुर्लभ नेता हैं**

सफलता में सहायक बनी स्वच्छ छवि। एएनआइ

नीतीश कुमार एक बार फिर बिहार के मुख्यमंत्री पद की शपथ लेने जा रहे हैं तो एक समय उनसे भी बड़े कद के नेता समझे जाने और राष्ट्रीय राजनीति को प्रभावित करने वाले लालू प्रसाद यादव पूरी तरह निस्तेज हो चुके हैं और उनका राष्ट्रीय जनता दल संकट में है। नीतीश कुमार लगभग 20 साल से मुख्यमंत्री पद पर हैं। वे केंद्र में मंत्री भी रहे हैं। इतने लंबे समय तक सत्ता में रहने के बाद भी उन पर न तो किसी तरह के घपले-घोटाले के आरोप हैं और न ही परिवादवाद या भाई-भतीजावाद के। उनकी यही छवि उन्हें औरों से अलग बनाती है। वे एक ऐसे नेता के रुप में सामने आए, जिसे इस बार के विधानसभा चुनावों में लोगों ने फिर से सत्ता में लाने के लिए मतदान किया। 20 साल बाद भी सत्ता विरोधी के बजाय सत्ता अनुकूल प्रभाव की मिसाल देने वाले वे विरले नेता हैं।

कभी जनता दल में लालू यादव, नीतीश कुमार, रामविलास पासवान जैसे नेता एक साथ थे। बिहार में 1989 का लोकसभा चुनाव और 1990 का विधानसभा चुनाव लालू-नीतीश के संयुक्त नेतृत्व में ही लड़ा गया था। लालू प्रसाद मुख्यमंत्री बनने के बाद अलग राह पर चलने लगे। 1994 में जार्ज फर्नांडिस के नेतृत्व में समता पार्टी का गठन हुआ, लेकिन तब बिहार में सामाजिक परिवर्तन की चाह इतनी तीव्र थी कि लालू यादव का करिश्मा कम होने का नाम नहीं ले रहा था। लोकसभा और विधानसभा चुनावों में समता पार्टी बुरी तरह पराजित हुई, लेकिन नीतीश कुमार के हौसले में कमी नहीं आई। उसी समय अटल-आडवाणी और जार्ज-नीतीश ने मिलकर राष्ट्रीय स्तर पर राजग की घोषणा की और राष्ट्रीय स्तर पर एक बड़ा जमावड़ा उसके इर्दगिर्द कायम होने लगा। बिहार की राजनीति में भाजपा का साथ मिलने से नीतीश कुमार की स्वीकार्यता बढ़ी। उधर लालू यादव की राजनीति के चलते राजद का जनाधार घटता गया। उनकी छवि को आघात तब पहुंचा, जब उन्होंने चारा घोटाले में फंसने के बाद पत्नी राबड़ी देवी को मुख्यमंत्री पद सौंपने का फैसला लिया-और वह भी तब जब उनका राजनीतिक अनुभव शून्य था। इस पर गौर करें कि जहां लालू यादव जेल जाने की नौबत आने पर राजनीतिक अनुभव से शून्य पत्नी को सत्ता सौंपने का निर्णय लेते हैं वहीं 2014 के लोकसभा चुनाव में पराजय के बाद नीतीश कुमार ने उसकी जिम्मेदारी लेते हुए जीतनराम मांझी को मुख्यमंत्री बनाया। इससे पता चलता है कि एक साथ राजनीति शुरू करने वाले नेता अपनी राजनीति को किस तरह अलग दिशा देते हैं। 2000 आते-आते लालू यादव पिछड़ों के एक खास तबके के ही नेता बनकर रह गए और उधर नीतीश कुमार अपनी स्वीकार्यता बढ़ाने में कामयाब रहे। हालांकि उनके सामने कई चुनौतियां कायम रहीं।

2000 के विधानसभा चुनाव के बाद नीतीश कुमार को राज्य के मुख्यमंत्री की शपथ दिलाई गई, लेकिन राजग सरकार को बहुमत का विश्वास प्राप्त न होने कारण उन्हें त्यागपत्र देना पड़ा। इसके बाद उन्हें अटल सरकार में केंद्रीय मंत्री बनने का अवसर मिला। उन्होंने कृषि, रेलवे, जहाजरानी आदि मंत्रालय संभाले। उनके मंत्रालयों के संचालन में आई पारदर्शिता और कार्यकुशलता ने उन्हें लालू यादव के सामने एक बड़ी लकीर के रूप में लाकर खड़ा कर दिया। बिहार में खास तौर पर गांव, गली में दोनों के कार्य करने के तरीकों की चर्चा होने लगी। ऐसे ही माहौल में 2005 का विधानसभा चुनाव प्रारंभ हुआ। चुनावों में राजग ने मुख्यमंत्री पद का दावेदार घोषित करने में हिचकिचाहट दिखाई। जदयू में भी नीतीश कुमार के नाम पर सभी एकमत नहीं थे। पहले चरण के चुनाव का आकलन राजग के पक्ष में नहीं दिख रहा था। ऐसे ही माहौल में एक दिन चुनाव प्रचार के सिलसिले में जब नीतीश कुमार एक सभास्थल की ओर बढ़ रहे थे कि एक पत्रकार मित्र ने समाचार दिया कि लालकृष्ण आडवाणी ने रांची में मुख्यमंत्री के रूप में नीतीश कुमार के नाम की घोषणा की है। इसके बाद नीतीश की सभाओं में भीड़ उमड़ने लगी।

2005 में नतीजे राजग के पक्ष में आए, लेकिन बहुमत का आंकड़ा फिर भी कुछ छिटक गया। तब रामविलास पासवान ने दोनों गठबंधनों से दूरी बनाकर अलग चुनाव लड़ा था और वे अपनी 29 सीटों के साथ किसी मुसलमान को मुख्यमंत्री बनाने पर जोर दे रहे थे। उनके किसी पाले में न जाने के कारण विधानसभा त्रिशंकु हो चली थी। विधायकों में विधानसभा भंग होने की आशंका के कारण असुरक्षा का भाव बढ़ रहा था। इसी दौरान पार्टी अध्यक्ष जार्ज फर्नांडिस के आवास पर एक आवश्यक बैठक आहूत की गई। बैठक में नीतीश कुमार, शरद यादव, दिग्विजय सिंह, प्रभुनाथ सिंह के साथ मैं भी मौजूद था। काफी विचार-विमर्श के बाद एक नेता का सुझाव आया कि विधायकों से बात करके कुछ धनराशि का प्रबंध किया जाना चाहिए, ताकि सरकार बनाने का सिलसिला आगे बढ़े। यह बात सुनकर नीतीश कुमार हाथ जोड़कर बोले कि यदि इस तरीके से मुख्यमंत्री पद प्राप्त होना है तो वह मुझे नहीं चाहिए। इस घटनाक्रम के बाद शुचिता और सिद्धांतों की राजनीति करने वालों की निगाह में उनका कद मुख्यमंत्री पद से बड़ा दिखने लगा। अक्टूबर 2005 में पुनः चुनाव होते हैं और जनता दल-यू 88 सीटें जीतकर सबसे बड़े दल के रूप में उभरता है और नीतीश कुमार बिहार के मुख्यमंत्री बनते हैं और यहीं से एक नए बिहार के निर्माण की प्रक्रिया प्रारंभ होती है।

(लेखक पूर्व सांसद हैं)

response@jagran.com

## ऊर्जा

### जीवन के लिए जीवंतता

हमारा जीवन समय की पटरी पर चलने वाली एक ऐसी गाड़ी है, जिसमें मंजिल तक पहुंचने का आनंद भी है तो कहीं गत्यावरोधकों का त्रास भी है। जीवन में सुख की चाहे कितनी ही सामग्री क्यों न हो, किंतु छोटी सी प्रतिकूल घटना भी गहरा जख्म दे जाती है। थोड़ी सी निंदा मन को क्लांत कर देती है। किसी का बिछोह अथवा विश्वासघात हमारी शांति छिन्न-भिन्न कर देता है।

जीवन तो इतना अनमोल है कि किसी भी भौतिक वस्तु से उसका मूल्य नहीं आंका जा सकता, लेकिन हम सभी अपने-अपने अतीत के सायों में घिरे वर्तमान को मानसिक द्वंद्वों से घसीटते हुए वक्त गुजार कर जीवन को जीते कम है और ढोते ज्यादा हैं। नित्यप्रति बहुत कुछ प्रिय-अप्रिय, अनदेखा-अनचाहा और अनहोना होता रहता है। इस सबको चाहे-अनचाहे, गाहे-बगाहे मन से या मजबूर होकर झेलना ही पड़ता है। इन सारी परिस्थितियों में स्वीकार भाव से जीना ही जीवंतता है। यह जीवंतता बनी रहे, इसका एकमात्र सूत्र है कि जितना भी और जो भी कुछ अच्छा-बुरा, शुभ-अशुभ, अनुकूल-प्रतिकूल मिला है, उसे समग्रता से स्वीकार कर लें।

जीवन के समस्त क्षणों का सदुपयोग करने की कला ही जीवंतता से जीना है। हम जितना स्वीकार भाव बढ़ाएंगे, उतने ही प्रसन्न रहेंगे। तब प्रतिकूलता का प्रभाव स्वयं ओझल हो जाएगा। न दुख अपना है, न सुख अपना और इनमें से किसी एक के चुनाव का विकल्प भी नहीं है। दोनों को ही स्वीकार करना होगा। दुख हमें कमजोर बनाता है तो सुख हमें बंधन में डाल देता है। प्रतिकार में दुख की पीड़ा नहीं और स्वीकार में सुख की उमंग नहीं, यही सोच जीवन में समरसता लाता है। जिस दिन अप्रिय वस्तु, अनचाहा व्यक्ति और प्रतिकूल परिस्थिति का सहयोग और प्रिय व्यक्ति एवं अनुकूल परिस्थितियों का वियोग इन दोनों को प्रसन्नता से स्वीकार करना आ गया, उस दिन वास्तव में जीना सीख लिया।

डा. निर्मल जैन

# बच्चों का लापता होना चिंताजनक

सुनीता मिश्रा

> **सरकार और समाज की यह जिम्मेदारी है कि वह बच्चों के लापता होने के मामले को नियंत्रित करे**

सुप्रीम कोर्ट ने भारत में बच्चों के लापता होने के मामलों पर चिंता व्यक्त की है। अदालत ने इसे गंभीर मुद्दा बताते हुए कहा कि देश में बच्चा गोद लेने की प्रक्रिया बेहद जटिल है, इसलिए इसका उल्लंघन होना स्वाभाविक है। लोग बच्चों को पाने के लिए अवैध साधनों का सहारा लेते हैं। शीर्ष न्यायालय ने केंद्र सरकार से इस प्रणाली को सरल बनाने का आग्रह किया।

राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो के आंकड़े बताते हैं कि वर्ष 2022 में 83,350 बच्चे लापता हुए थे, जिसमें सबसे अधिक 62,946 लड़कियां, 20,380 लड़के और 24 ट्रांसजेंडर शामिल थे। वहीं वर्ष 2022 की तुलना में 2023 में बच्चों के खिलाफ अपराधों में 9.2 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। वर्ष 2023 में बच्चों के खिलाफ अपराध के 1.77 लाख मामले दर्ज हुए।

किसी भी परिवार के लिए अपने बच्चे से दूर होने से बड़ी पीड़ा और कोई नहीं हो सकती। जब कोई बच्चा लापता हो जाता है, तो उसके माता-पिता पर क्या बीतती होगी, उसकी कल्पना करना भी मुश्किल है। लापता हुए कई बच्चों को दुर्भाग्यवश तस्करी, बाल श्रम, देह व्यापार या अन्य प्रकार के दुर्व्यवहार का शिकार होना पड़ता है। इन्हें बंधक बनाकर इनके साथ अमानवीय व्यवहार किया जाता है। भीख मंगवाई जाती है। शरीर के अंग निकालकर बेच दिए जाते हैं।

यह सच है कि भारत में बच्चा गोद लेने की प्रक्रिया जटिल और लंबी है, जिससे कई इच्छुक माता-पिता हतोत्साहित हो जाते हैं। इस प्रक्रिया को सरल बनाने के लिए आनलाइन पोर्टल बनाया जाना चाहिए। इससे अनावश्यक दस्तावेजों की संख्या कम करने और सत्यापन प्रक्रिया को गति देकर भी इस प्रणाली को सुव्यवस्थित बनाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त वर्तमान कानूनों की समीक्षा और उनमें आवश्यक संशोधन करके भी प्रक्रिया को अधिक सरल बनाया जा सकता है। इसके माध्यम से अधिक से अधिक बच्चों को अपनों का प्यार, घर मिल सकेगा और इच्छुक माता-पिता के लिए यह तनावपूर्ण नहीं होगा।

बच्चे के लापता होने से परिवार पर सामाजिक और आर्थिक दबाव पड़ता है, जिससे उनकी पीड़ा और जटिल हो जाती है। इसलिए हम सभी को अपने आस-पड़ोस के बच्चों का ध्यान रखना होगा। आसपास संदिग्ध गतिविधियों, अपरिचित वाहनों और घूमते अजनबियों को पहचानें और तुरंत उनकी सूचना पुलिस को दें। जागरूकता अभियानों में हिस्सा लें और स्थानीय पुलिस व प्रशासन के साथ मिलकर काम करें। लापता बच्चों के परिवारों को अकेला महसूस नहीं होने दें। इस बात को ध्यान में रखना होगा कि जब सरकार और समाज मिलकर काम करते हैं, तो वे एक मजबूत सुरक्षा जाल बनाते हैं, जो बच्चों को सुरक्षित रखने में मदद करता है और प्रभावित परिवारों को इस मुश्किल समय से उबरने में पूरी सहायता करता है।

(लेखिका स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं)

## मेलबाक्स

### साझा प्रयासों से ही समाधान संभव

'जलवायु संकट बढ़ाते विकसित देश' शीर्षक से लिखे आलेख में आदित्य सिन्हा ने दुनिया की सबसे बड़ी समस्या जलवायु परिवर्तन के संदर्भ में सभी देशों के एकजुट होने को जरूरी बताया। इन्होंने बिल्कुल सही कहा कि विकसित देशों को इसके प्रति अपना लचर रवैया छोड़ना चाहिए। अगर अभी भी दुनिया के सभी देश जलवायु परिवर्तन के लिए गंभीर नहीं हुए तो वह दिन दूर नहीं है जब जलवायु की यह चुनौती वैश्विक महामारी कोविड और आतंकवाद से भी बड़ी समस्या बन जाएगी। पर्यावरण को बचाने के लिए भारत को ही नहीं, बल्कि सभी देश गंभीरता दिखाएं। प्रदूषण के बढ़ते स्तर को रोकने के लिए सरकारों का मुंह ताकना और इसके लिए सरकारों को ही दोषी ठहराना भी समझदारी नहीं है, क्योंकि प्रदूषण बढ़ाने के लिए आम लोग भी कम जिम्मेदार नहीं हैं। बढ़ते प्रदूषण को लेकर सरकारों के साथ ही आमजन को भी एकजुट होकर प्रयास करने होंगे। साझा प्रयासों से ही इस समस्या का समाधान संभव हो सकेगा।

राजेश कुमार चौहान, जालंधर

### आतंकवाद के खिलाफ लड़ाई

बुधवार को प्रकाशित ''आतंक की पैरवी'' संपादकीय में आपने भारत में हर बड़ी आतंकवादी घटना के बाद देश के कुछ राजनीतिक दलों के नेताओं द्वारा आतंकवादी घटना के अपराधियों के पक्ष में दिए जाने वाले बयानों को लेकर सटीक तथ्य प्रस्तुत किए हैं। फरीदाबाद माड्यूल में मौलवियों की सहभागिता और दिल्ली में लाल किले के पास हुए भयावह विस्फोट जैसे घटनाक्रम इस कठोर सच्चाई को सामने रखते हैं कि आतंकवाद के खिलाफ लड़ाई केवल बंदूक और बम की नहीं, बल्कि विचारों, भ्रमों और राजनीतिक पाखंड के खिलाफ भी है। जब दीन-ईमान की शिक्षा देने वाले ही कट्टरपंथ का जहर घोलने लगें, तब यह साफ हो जाता है कि आतंकवाद की जड़ें महज सीमापार नहीं, बल्कि समाज और धार्मिक संस्थानों की भीतरी कमजोरियों में भी पनपती हैं। इस लड़ाई को और कठिन बनाने का काम वे राजनीतिक बयान करते हैं, जो हर घटना पर ''समूचे समुदाय को शक की नजर से न देखें'' जैसी दो-धारी बातें कहकर माहौल को उलझा देते हैं। यह बात अपने आप में सही है कि बेगुनाह को सजा नहीं मिलनी चाहिए, परंतु जब यह संदेश लगातार बिना आतंक की खुली, स्पष्ट और कठोर निंदा के साथ दिया जाए, तो इसका परिणाम दोहरा अर्थ निकालने के रूप में सामने आता है- आतंकी इसे सुरक्षा कवच समझते हैं और सुरक्षा एजेंसियां असहज हो जाती हैं। दूसरी ओर, भारत जैसे जीवंत लोकतंत्र में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के नाम पर कई बार ऐसी बातें कही जाती हैं, जो अनजाने में ही आतंकी मानसिकता को वैचारिक सहारा दे देती हैं। इसकी आड़ में पाकिस्तान जैसे देश यह दिखाने का प्रयास करते हैं कि भारत में ही उसके नेता ''मुसलमानों पर शक किए जाने'' की बात स्वीकार कर रहे हैं, जबकि सुरक्षा अभियान किसी धर्म के खिलाफ नहीं, बल्कि आतंकवाद के खिलाफ होता है।

सुभाष बुड़ावन वाला, रतलाम, मध्य प्रदेश

### जलवायु संकट

आदित्य सिन्हा द्वारा लिखित आलेख जलवायु संकट बढ़ाते विकसित देश पढ़ा। आज पूरी दुनिया जलवायु संकट का सामना कर रही है। जलवायु संकट के लिए विकसित देशों का अंधाधुंध औद्योगिकीकरण और उपभोगवादी जीवनशैली का सबसे अधिक योगदान रहा है। औद्योगिक क्रांति के उपरांत अमेरिका, यूरोप और अन्य विकसित देशों ने आर्थिक प्रगति के नाम पर प्रकृति का अत्यधिक दोहन किया। विश्व के कुल कार्बन उत्सर्जन में आज भी इनका ऐतिहासिक योगदान सबसे अधिक है। तापमान में हुई वृद्धि का बड़ा हिस्सा इसी 'कार्बन उत्सर्जन' का परिणाम है, जिसे आज गरीब राष्ट्र बिना किसी गलती के झेल रहे हैं। वर्षों से विकसित देश 100 अरब डालर वार्षिक जलवायु वित्त उपलब्ध कराने की बात दोहराते रहे, लेकिन वास्तविकता में यह राशि न पूरी आई, न पारदर्शी ढंग से खर्च हुई एवं नुकसान और क्षति कोष के तहत भी उनका योगदान न्यूनतम रहा है।

हिमांशु शेखर, केसपा, गयाजी

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।
अपने पत्र इस पते पर भेजें :
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल : response@jagran.com

https://t.me/AllNewsPapersPaid1

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त. पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन. नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन-महेन्द्र मोहन गुप्त. प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 *इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई/रेल शुल्क ₹-2 अतिरिक्त।
********

संपादकीय जागरण

(8) गुरुवार, 20 नवंबर, 2025 : मार्गशीर्ष कृष्ण अमावस्या वि. 2082

विचार व्यक्तित्व को आकार देते हैं

# बचने न पाएं माओवादी

कुख्यात माओवादी सरगना हिड़मा के अपने कई साथियों संग मारे जाने के दूसरे दिन जिस तरह कुछ और माओवादी मार गिराए गए, उससे माओवाद अंतिम सांसें गिनते हुए दिखने लगा है। अब यह उम्मीद बढ़ गई है कि अगले वर्ष मार्च तक माओवाद के खात्मे का लक्ष्य आसानी से पूरा हो जाएगा। ऐसा होता हुआ इसलिए दिख रहा है, क्योंकि अब तीन-चार माओवादी सरगना ही ऐसे रह गए हैं, जो पस्त पड़े अपने साथियों का नेतृत्व कर सकने में समर्थ हैं। यदि वे हथियार नहीं डालते तो उनका सफाया करने के अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं। बचे-खुचे माओवादियों को मुख्यधारा में आने के लिए अवश्य कहा जाना चाहिए, लेकिन उनके खिलाफ जो अभियान जारी है, उसमें कोई नरमी इसलिए नहीं आने दी जानी चाहिए, क्योंकि अतीत में उन्होंने निष्क्रिय रहकर अपने को फिर से संगठित करने के साथ ही ताकतवर भी बना लिया था। इस बार उन्हें कोई मौका नहीं दिया जाना चाहिए। इसलिए और भी नहीं, क्योंकि उनके हथियार डालने की शर्तें अत्यधिक उदार हैं। जो इन उदार शर्तों का लाभ उठाने को तैयार नहीं, उन्हें यह संदेश देने में संकोच नहीं किया जाना चाहिए कि उनका बचना संभव नहीं। मुख्यधारा में शामिल होने से इन्कार करने और अपनी लड़ाई जारी रखने वाले माओवादी किसी नरमी के हकदार नहीं हो सकते। जितना जरूरी यह है कि हथियारबंद माओवादियों के खिलाफ दबाव और बढ़ाया जाए, उतना ही यह भी कि उन्हें वैचारिक खुराक देने वाले उनके दबे-छिपे समर्थकों पर शिंकजा कसा जाए। माओवाद सभ्य समाज विरोधी एक विषैली विचारधारा है। इस खतरनाक विचारधारा के लिए भारत में कोई स्थान नहीं हो सकता। यह सही समय है कि उन नकली मानवाधिकारवादियों पर भी निगाह रखी जाए, जो माओवादियों को गरीबों की लड़ाई लड़ने वाला बताते हैं। कुछ तो ऐसे हैं, जो खूंखार माओवादियों को बंदूकधारी गांधीवादी तक बता चुके हैं। तथ्य यह भी है कि वाम दलों को माओवादियों के खिलाफ जारी अभियान रास नहीं आ रहा है। ये दल इस अभियान को तो कठोर बताते हैं, लेकिन माओवादियों की बर्बरता के खिलाफ कभी मुंह नहीं खोलते। उन्हें यह भी नहीं दिखता कि माओवादी विकास के बैरी बन चुके हैं और वे सबसे अधिक नुकसान उन आदिवासियों को ही पहुंचा रहे हैं, जिनके हितैषी होने का फर्जी दावा करते हैं। एक समय माओवाद नक्सलवाद के रूप में था। बंगाल में अपनी कमर टूटने पर नक्सलियों ने ही आंध्र में माओवादियों का चोला धारण किया। अब वे किसी तरह का अन्य कोई चोला धारण न करने पाएं, इसके लिए विचारधारा के स्तर पर भी उनका सामना किया जाना चाहिए। यह भी आवश्यक है कि पिछड़े और विशेष रूप से आदिवासी इलाकों में विकास के कामों को समय रहते पूरे करने पर जोर दिया जाए।

# रोजगार की उम्मीद

इस बार बिहार सरकार से लोगों की उम्मीदें अधिक हैं। ऐसा इसलिए क्योंकि एनडीए ने चुनाव के समय जो वादे किए, अपने संकल्प पत्र में जिन बिंदुओं का जिक्र किया है, उसे पूरा करने के लिए ईमानदार कोशिश करनी होगी। यह बहुत मुश्किल भी नहीं है। इसके लिए सही नीति के साथ मजबूत इच्छाशक्ति दिखानी होगी। इसकी बानगी हम, बीते 20 वर्षों में देख चुके हैं। नीतीश कुमार ने जिस तरह राज्य को अंधेरे से निकाल उजाले की ओर ले जाने का काम किया है, अब उसे और चमकाना है। नई सरकार के सामने सबसे बड़ी चुनौती एक करोड़ लोगों को नौकरी और रोजगार देना है। सरकार को सबसे पहले इसके लिए रोडमैप पर काम करना होगा। खाली पदों की पहचान, समय से निष्पक्ष भर्ती, रोजगार के लिए बड़े उद्योगों की स्थापना के साथ स्थानीय उत्पादों को बढ़ावा देने का काम करना होगा। राज्य में श्रमशक्ति की कमी नहीं है। यह श्रमशक्ति जब दूसरे राज्यों के विकास में योगदान दे सकती है तो यहां क्यों नहीं। बेरोजगारों की योग्यता निखारने के साथ उसके अनुसार काम की व्यवस्था करनी होगी। सरकार पहले ही सड़क और बिजली सहित अन्य बुनियादी आधारभूत संरचना उद्योगों के लिए खड़ी कर चुकी है। थोड़ी-बहुत जो कमी है, उसे दूर करना होगा। केंद्र में भी एनडीए की सरकार है, इस कारण इसमें कोई दिक्कत नहीं होगी।

**नौकरी और रोजगार देने के चुनावी वादे को पूरा करने के लिए नई सरकार को प्राथमिकता के साथ काम करना होगा।**

## कह के रहेंगे

माधव जोशी

## जागरण जनमत

कल का परिणाम

**क्या प्रशांत किशोर को राजनीति से किनारा कर लेना चाहिए?**

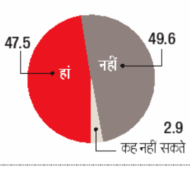


**आज का सवाल**

क्या अनमोल बिश्नोई के प्रत्यर्पण से लारेंस बिश्नोई गैंग की गतिविधियों पर लगाम लगाने में सफलता मिलेगी?

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है। सभी आंकड़े प्रतिशत में।

# भारत को चिंतित करता बांग्लादेश

ऋषि गुप्त

**पाकिस्तान में वे कट्टरपंथी ताकतें मजबूत हो रही हैं, जो उस पाकिस्तान की हमदर्द हैं, जिसने यहां के लोगों का दमन किया था**

बांग्लादेश की अपदस्थ प्रधानमंत्री शेख हसीना ने 2010 में अंतरराष्ट्रीय क्राइम्स ट्रिब्यूनल की स्थापना के समय यह कल्पना भी नहीं की होगी कि 15 साल बाद यही अदालत उन्हें मौत की सजा सुनाएगी। प्रधानमंत्री हसीना ने इस ट्रिब्यूनल की स्थापना 1971 मुक्ति संग्राम के दोषियों को सजा दिलाने के लिए की थी ताकि मानवता के खिलाफ हुए जघन्य अपराधों के दोषियों को उनकी करतूतों की सजा दिलाई जा सके। हाल में इसी ट्रिब्यूनल ने शेख हसीना को मृत्युदंड की सजा सुनाई। उनके खिलाफ बांग्लादेश में कई मामले दर्ज हैं। इनमें से अधिकांश मामले जुलाई 2024 में हुए विरोध-प्रदर्शनों से जुड़े हैं। संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार उच्चायुक्त कार्यालय ने हसीना को सुनाई गई मृत्यु की सजा को गलत ठहराया है। हालांकि उसने यह भी कहा है कि पूर्व प्रधानमंत्री शेख हसीना को दोषी करार दिया जाना पिछले साल विरोध-प्रदर्शनों के दमन के दौरान हुए गंभीर उल्लंघनों के पीड़ितों के लिए एक महत्वपूर्ण पड़ाव है। उल्लेखनीय है कि उच्चायुक्त कार्यालय ने इस वर्ष फरवरी में अपनी फैक्ट फाइंडिंग रिपोर्ट में पूर्व प्रधानमंत्री हसीना की जुलाई-अगस्त 2024 में की गई पुलिस कार्रवाई में संलिप्तता भी पाई थी।

चूंकि पूर्व प्रधानमंत्री शेख हसीना इस समय भारत में हैं और ट्रिब्यूनल में चली कार्यवाही मौजूदा सरकार की मनमर्जी से हुई है, इसलिए उनकी गैरमौजूदगी में इस तरह के निर्णय का आना ट्रिब्यूनल की स्वतंत्रता पर सवाल उठाता है और राजनीति से प्रेरित जान पड़ता है। इस निर्णय से यह भी करीब-करीब साफ हो गया कि अब शेख हसीना की बांग्लादेश वापसी असंभव है। अंतरिम शासन के मुख्य सलाहकार मोहम्मद यूनुस की सरकार ने पहले ही शेख हसीना की अवामी लीग पार्टी पर प्रतिबंध लगा दिया है और अब हसीना को मृत्युदंड का निर्णय उनकी वापसी की बची-खुची उम्मीदों को भी खत्म करने वाला है। इसके साथ ही बांग्लादेश के भविष्य को लेकर अब नई बहस शुरू हो गई है। एक तो यह कि ऐसा निर्णय कितना न्यायसंगत है और दूसरी यह कि हसीना के प्रत्यर्पण से जुड़ी बांग्लादेश की मांग पर भारत को क्या रुख-रवैया अपनाना चाहिए? इसके कहीं कोई आसार नहीं कि भारत शेख हसीना को बांग्लादेश को सौंपेगा। बांग्लादेश को इसकी अपेक्षा भी नहीं करनी चाहिए, लेकिन यह भी तय है कि वह उन्हें अपने हवाले करने की मांग करता रहेगा। इस सिलसिले में इसकी अनदेखी नहीं की जा सकती कि शेख हसीना को आनन-फानन ढाका से दिल्ली उसी सेना ने रवाना किया था, जिसके समर्थन से मोहम्मद यूनुस के नेतृत्व वाली अंतरिम सरकार कायम हुई।

अवधेश राजपूत

आज बांग्लादेश के माहौल पर गौर करें तो यह इस देश के इतिहास का एक दूसरा अध्याय है। पहला अध्याय 1971 के स्वतंत्रता आंदोलन, उसके पाकिस्तान से अलग होने और भारत के अथक सहयोग से उपजे परिदृश्य का है। दूसरा अध्याय जुलाई 2024 के आंदोलन से उपजा, जिसका उद्देश्य बांग्लादेश की राजनीतिक दशा-दिशा को बदलना था। बिना अवामी लीग और शेख हसीना के बांग्लादेश की परिकल्पना करना अभी मुश्किल है, लेकिन इतिहास गवाह है कि उनकी अनुपस्थिति या कमजोर होने की स्थिति में बांग्लादेश में कुछ खास ताकतें मजबूत होती गईं। इन दिनों भी ऐसी ही कट्टरपंथी ताकतें मजबूत हो रही हैं और इनमें से अधिकांश पाकिस्तान की हमदर्द हैं। उसी पाकिस्तान की, जिसने बांग्लादेश निर्माण से पहले यहां के लोगों को भयंकर यातनाएं दीं। अब जब बांग्लादेश की जनता का एक बड़ा हिस्सा अपने इतिहास को नए सिरे से लिखने पर आमादा हो और अंतरिम सरकार भी उसका साथ दे रही हो तो फिर इस पहलू को भी अनदेखा नहीं किया जा सकता कि 1971 के इतिहास को शेख हसीना द्वारा जिस प्रकार पेश किया किया, वह भी कहीं न कहीं उनके खिलाफ गया। बांग्लादेश में एक नई पीढ़ी 1971 के इतिहास से अपनी पुरानी पीढ़ी की तरह नहीं जुड़ पाती तो वहां विदेश नीति का बदलना भी स्वाभाविक है। चूंकि बांग्लादेश में भारत के खिलाफ माहौल बन रहा है, इसलिए शायद यह नई दिल्ली के लिए भी एक अवसर है कि वह भी उस इतिहास से परे मौजूदा परिप्रेक्ष्य में ढाका के साथ बातचीत की संभावनाएं तलाशे। हालांकि यह इतना आसान नहीं है, क्योंकि बांग्लादेश की भू-सामरिक स्थिति और वहां सक्रिय तमाम आक्रामक अतिवादी समूह भारत की सुरक्षा पर एक बड़ा सवालिया निशान लगाते हैं। हाल के दिल्ली धमाकों के भी कुछ तार बांग्लादेश से जुड़ते दिखाई दे रहे हैं। इसके अलावा भारत चीन की तरह बांग्लादेश के मामलों को केवल आंतरिक मुद्दा नहीं कह सकता, क्योंकि वहां से आने वाले घुसपैठिये लगातार भारत की संप्रभुता और अखंडता के लिए खतरा बने हुए हैं। अगर भारत बांग्लादेश की तरफ फिर से एक नए सोच के साथ हाथ बढ़ाए तब भी यह पूरी तरह निश्चित नहीं है कि उसका जवाब सकारात्मक मिले, क्योंकि भारत विरोध इस समय बांग्लादेश का एक अभिन्न अंग बन गया है और शेख हसीना के प्रत्यर्पण का मुद्दा बार-बार उठाया जाता रहेगा।

मोहम्मद यूनुस अंतरिम सरकार के एक अनिर्वाचित मुख्य सलाहकार ही हैं। उन्हें एक खास तबके और सोच वाले समूह ने ही सत्ता के शीर्ष पर बिठाया है। ऐसे में संभव है कि वे उसी तबके के निर्देश पर अपनी भारत नीति बनाएं। हालांकि यह जरूरी नहीं कि एक चुनी हुई सरकार भी भारत के प्रति ऐसा ही रवैया अपनाएगी, क्योंकि उसके सामने जनता के प्रति जवाबदेही का पहलू भी होगा। यह मानना भी ठीक नहीं होगा कि बांग्लादेश को लेकर भारत के सोच में यथास्थिति बनी रहेगी। यदि इस समय बांग्लादेश के राजनीतिक माहौल को देखा जाए तो बांग्लादेश नेशनलिस्ट पार्टी के लिए सहयोगी दलों के साथ मिलकर सरकार बनाने का एक अवसर बन सकता है, जो भारत के प्रति शेख हसीना से लगाव के चलते उनका विरोधी रहा है। फिर भी यह स्मरण रहे कि विदेश नीति वैचारिक रुख के बजाय वास्तविक राजनीति पर आधारित होती है और ऐसा रुख भारत-बांग्लादेश के नीति निर्धारण में आने वाले दिनों में एक बड़ी भूमिका निभाएगा।

(लेखक एशिया सोसाइटी पालिसी इंस्टीट्यूट, नई दिल्ली में सहायक निदेशक हैं)

response@jagran.com

# बिहार की जरूरत बने नीतीश कुमार

केसी त्यागी

**नीतीश 20 साल मुख्यमंत्री रहने के बाद भी सत्ता विरोधी प्रभाव को उलटने वाले दुर्लभ नेता हैं**

नीतीश कुमार एक बार फिर बिहार के मुख्यमंत्री पद की शपथ लेने जा रहे हैं तो एक समय उनसे भी बड़े कद के नेता समझे जाने और राष्ट्रीय राजनीति को प्रभावित करने वाले लालू प्रसाद यादव पूरी तरह निस्तेज हो चुके हैं और उनका राष्ट्रीय जनता दल संकट में है। नीतीश कुमार लगभग 20 साल से मुख्यमंत्री पद पर हैं। वे केंद्र में मंत्री भी रहे हैं। इतने लंबे समय तक सत्ता में रहने के बाद भी उन पर न तो किसी तरह के घपले-घोटाले के आरोप हैं और न ही परिवादवाद या भाई-भतीजावाद के। उनकी यही छवि उन्हें औरों से अलग बनाती है। वे एक ऐसे नेता के रुप में सामने आए, जिसे इस बार के विधानसभा चुनावों में लोगों ने फिर से सत्ता में लाने के लिए मतदान किया। 20 साल बाद भी सत्ता विरोधी के बजाय सत्ता अनुकूल प्रभाव की मिसाल देने वाले वे विरले नेता हैं।

कभी जनता दल में लालू यादव, नीतीश कुमार, रामविलास पासवान जैसे नेता एक साथ थे। बिहार में 1989 का लोकसभा चुनाव और 1990 का विधानसभा चुनाव लालू-नीतीश के संयुक्त नेतृत्व में ही लड़ा गया था। लालू प्रसाद मुख्यमंत्री बनने के बाद अलग राह पर चलने लगे। 1994 में जार्ज फर्नांडिस के नेतृत्व में समता पार्टी का गठन हुआ, लेकिन तब बिहार में सामाजिक परिवर्तन की चाह इतनी तीव्र थी कि लालू यादव का करिश्मा कम होने का नाम नहीं ले रहा था। लोकसभा और विधानसभा चुनावों में समता पार्टी बुरी तरह पराजित हुई, लेकिन नीतीश कुमार के हौसले में कमी नहीं आई। उसी समय अटल-आडवाणी और जार्ज-नीतीश ने मिलकर राष्ट्रीय स्तर पर राजग की घोषणा की और राष्ट्रीय स्तर पर एक बड़ा जमावड़ा उसके इर्दगिर्द कायम होने लगा। बिहार की राजनीति में भाजपा का साथ मिलने से नीतीश कुमार की स्वीकार्यता बढ़ी। उधर लालू यादव की राजनीति के चलते राजद का जनाधार घटता गया। उनकी छवि को आघात तब पहुंचा, जब उन्होंने चारा घोटाले में फंसने के बाद पत्नी राबड़ी देवी को मुख्यमंत्री पद सौंपने का फैसला लिया-और वह भी तब जब उनका राजनीतिक अनुभव शून्य था। इस पर गौर करें कि जहां लालू यादव जेल जाने की नौबत आने पर राजनीतिक अनुभव से शून्य पत्नी को सत्ता सौंपने का निर्णय लेते हैं वहीं 2014 के लोकसभा चुनाव में पराजय के बाद नीतीश कुमार ने उसकी जिम्मेदारी लेते हुए जीतनराम मांझी को मुख्यमंत्री बनाया। इससे पता चलता है कि एक साथ राजनीति शुरू करने वाले नेता अपनी राजनीति को किस तरह अलग दिशा देते हैं। 2000 आते-आते लालू यादव पिछड़ों के एक खास तबके के ही नेता बनकर रह गए और उधर नीतीश कुमार अपनी स्वीकार्यता बढ़ाने में कामयाब रहे। हालांकि उनके सामने कई चुनौतियां कायम रहीं।

सफलता में सहायक बनी स्वच्छ छवि ● एएनआइ

2000 के विधानसभा चुनाव के बाद नीतीश कुमार को राज्य के मुख्यमंत्री की शपथ दिलाई गई, लेकिन राजग सरकार को बहुमत का विश्वास प्राप्त न होने कारण उन्हें त्यागपत्र देना पड़ा। इसके बाद उन्हें अटल सरकार में केंद्रीय मंत्री बनने का अवसर मिला। उन्होंने कृषि, रेलवे, जहाजरानी आदि मंत्रालय संभाले। उनके मंत्रालयों के संचालन में आई पारदर्शिता और कार्यकुशलता ने उन्हें लालू यादव के सामने एक बड़ी लकीर के रूप में लाकर खड़ा कर दिया। बिहार में खास तौर पर गांव, गली में दोनों के कार्य करने के तरीकों की चर्चा होने लगी। ऐसे ही माहौल में 2005 का विधानसभा चुनाव प्रारंभ हुआ। चुनावों में राजग ने मुख्यमंत्री पद का दावेदार घोषित करने में हिचकिचाहट दिखाई। जदयू में भी नीतीश कुमार के नाम पर सभी एकमत नहीं थे। पहले चरण के चुनाव का आकलन राजग के पक्ष में नहीं दिख रहा था। ऐसे ही माहौल में एक दिन चुनाव प्रचार के सिलसिले में जब नीतीश कुमार एक सभास्थल की ओर बढ़ रहे थे कि एक पत्रकार मित्र ने समाचार दिया कि लालकृष्ण आडवाणी ने रांची में मुख्यमंत्री के रूप में नीतीश कुमार के नाम की घोषणा की है। इसके बाद नीतीश की सभाओं में अचानक अधिक भीड़ उमड़ने लगी।

2005 में नतीजे राजग के पक्ष में आए, लेकिन बहुमत का आंकड़ा फिर भी कुछ छिटक गया। तब रामविलास पासवान ने दोनों गठबंधनों से दूरी बनाकर अलग चुनाव लड़ा था और वे अपनी 29 सीटों के साथ किसी मुसलमान को मुख्यमंत्री बनाने पर जोर दे रहे थे। उनके किसी पाले में न जाने के कारण विधानसभा त्रिशंकु हो चली थी। विधायकों में विधानसभा भंग होने की आशंका के कारण असुरक्षा का भाव बढ़ रहा था। इसी दौरान पार्टी अध्यक्ष जार्ज फर्नांडिस के आवास पर एक आवश्यक बैठक आहूत की गई। बैठक में नीतीश कुमार, शरद यादव, राजीव रंजन उर्फ ललन सिंह, दिग्विजय सिंह, प्रभुनाथ सिंह के साथ मैं भी मौजूद था। काफी विचार-विमर्श के बाद एक नेता का सुझाव आया कि विधायकों से बात करके कुछ धनराशि का प्रबंध किया जाना चाहिए, ताकि सरकार बनाने का सिलसिला आगे बढ़े। यह बात सुनकर नीतीश कुमार हाथ जोड़कर बोले कि यदि इस तरीके से मुख्यमंत्री पद प्राप्त होना है तो वह मुझे नहीं चाहिए। इस घटनाक्रम के बाद शुचिता और सिद्धांतों की राजनीति करने वालों की निगाह में उनका कद मुख्यमंत्री पद से बड़ा दिखने लगा। अक्टूबर 2005 में पुनः चुनाव होते हैं और जनता दल-यू 88 सीटें जीतकर सबसे बड़े दल के रूप में उभरता है और नीतीश कुमार बिहार के मुख्यमंत्री बनते हैं और यहीं से एक नए बिहार के निर्माण की प्रक्रिया प्रारंभ होती है।

(लेखक पूर्व सांसद हैं)

response@jagran.com

## ऊर्जा

### जीवन के लिए जीवंतता

हमारा जीवन समय की पटरी पर चलने वाली एक ऐसी गाड़ी है, जिसमें मंजिल तक पहुंचने का आनंद भी है तो कहीं गत्यावरोधकों का त्रास भी है। जीवन में सुख की चाहे कितनी ही सामग्री क्यों न हो, किंतु छोटी सी प्रतिकूल घटना भी गहरा जख्म दे जाती है। थोड़ी सी निंदा मन को क्लांत कर देती है। किसी का बिछोह अथवा विश्वासघात हमारी शांति छिन्न-भिन्न कर देता है।

जीवन तो इतना अनमोल है कि किसी भी भौतिक वस्तु से उसका मूल्य नहीं आंका जा सकता, लेकिन हम सभी अपने-अपने अतीत के सायों में घिरे वर्तमान को मानसिक द्वंद्वों से घसीटते हुए वक्त गुजार कर जीवन को जीते कम है और ढोते ज्यादा हैं। नित्यप्रति बहुत कुछ प्रिय-अप्रिय, अनदेखा-अनचाहा और अनहोना होता रहता है। इस सबको चाहे-अनचाहे, गाहे-बगाहे मन से या मजबूर होकर झेलना ही पड़ता है। इन सारी परिस्थितियों में स्वीकार भाव से जीना ही जीवंतता है। यह जीवंतता बनी रहे, इसका एकमात्र सूत्र है कि जितना भी और जो भी कुछ अच्छा-बुरा, शुभ-अशुभ, अनुकूल-प्रतिकूल मिला है, उसे समग्रता से स्वीकार कर लें।

जीवन के समस्त क्षणों का सदुपयोग करने की कला ही जीवंतता से जीना है। हम जितना स्वीकार भाव बढ़ाएंगे, उतने ही प्रसन्न रहेंगे। तब प्रतिकूलता का प्रभाव स्वयं ओझल हो जाएगा। न दुख अपना है, न सुख अपना और इनमें से किसी एक के चुनाव का विकल्प भी नहीं है। दोनों को ही स्वीकार करना होगा। दुख हमें कमजोर बनाता है तो सुख हमें बंधन में डाल देता है। प्रतिकार में दुख की पीड़ा नहीं और स्वीकार में सुख की उमंग नहीं, यही सोच जीवन में समरसता लाता है। जिस दिन अप्रिय वस्तु, अनचाहा व्यक्ति और प्रतिकूल परिस्थिति का सहयोग और प्रिय वस्तु, व्यक्ति एवं अनुकूल परिस्थितियों का वियोग इन दोनों को प्रसन्नता से स्वीकार करना आ गया, उस दिन वास्तव में जीना सीख लिया।

डा. निर्मल जैन

## पाठकनामा

pathaknama@pat .jagran.com

### साझा प्रयासों से ही समाधान संभव

'जलवायु संकट बढ़ाते विकसित देश' शीर्षक से लिखे आलेख में आदित्य सिन्हा ने दुनिया की सबसे बड़ी समस्या जलवायु परिवर्तन के संदर्भ में सभी देशों के एकजुट होने को जरूरी बताया। इन्होंने बिल्कुल सही कहा कि विकसित देशों को इसके प्रति अपना लचर रवैया छोड़ना चाहिए। अगर अभी भी दुनिया के सभी देश जलवायु परिवर्तन के लिए गंभीर नहीं हुए तो वह दिन दूर नहीं है जब जलवायु की यह चुनौती वैश्विक महामारी कोविड और आतंकवाद से भी बड़ी समस्या बन जाएगी। पर्यावरण को बचाने के लिए भारत को ही नहीं, बल्कि सभी देश गंभीरता दिखाएं। प्रदूषण के बढ़ते स्तर को रोकने के लिए सरकारों का मुंह ताकना और इसके लिए सरकारों को ही दोषी ठहराना भी समझदारी नहीं है, क्योंकि प्रदूषण बढ़ाने के लिए आम लोग भी कम जिम्मेदार नहीं हैं। बढ़ते प्रदूषण को लेकर सरकारों के साथ ही आमजन को भी एकजुट होकर प्रयास करने होंगे। साझा प्रयासों से ही इस समस्या का समाधान संभव हो सकेगा।

राजेश कुमार चौहान, जालंधर

### आतंक का बदलता स्वरूप

राजीव सचान द्वारा लिखित आलेख 'आतंक के खिलाफ कठिन हुई लड़ाई' पढ़ा। आज आतंकवाद वैश्विक शांति, लोकतांत्रिक मूल्यों और मानवीय संवेदनशीलता के लिए सबसे बड़ा खतरा बना हुआ है। तकनीकी विकास, राजनीतिक अस्थिरता और बदलते अंतरराष्ट्रीय समीकरणों के बीच आतंक के खिलाफ लड़ाई पहले से कहीं अधिक जटिल और कठिन होती जा रही है। सबसे बड़ी चुनौती आतंकवाद के बदलते स्वरूप से है। एक समय था जब आतंकी संगठन सीमित भूगोल, हथियार और चेहरों के साथ पहचाने जाते थे। आज वही संगठन साइबर स्पेस, ड्रोन तकनीक, क्रिप्टो करेंसी और इंटरनेट मीडिया के माध्यम से अपनी गतिविधियों को संचालित कर रहे हैं। ये नए उपकरण उन्हें न केवल अधिक खतरनाक बनाते हैं, बल्कि सरकारों के लिए उन्हें ट्रैक करना भी कठिन कर देते हैं। अब डाक्टर और इंजीनियर जैसे प्रबुद्ध लोग भी आतंकी गिरोह में शामिल हो रहे हैं, यूनिवर्सिटी को आतंक का अड्डा बनाया जा रहा है। भारत जैसे विशाल और विविधतापूर्ण देश के लिए चुनौती और भी गंभीर है। सीमापार आतंकवाद, ड्रोन के माध्यम से हथियार और नशीले पदार्थों की तस्करी, घुसपैठ, कट्टरपंथी विचारधारा का प्रसार तथा आंतरिक सुरक्षा से जुड़े नए खतरे लगातार जटिल होते जा रहे हैं। सुरक्षा एजेंसियों के अथक प्रयासों और कई सफल अभियानों के बावजूद आतंक की यह लड़ाई लंबी और बहुआयामी बनी हुई है। आतंकवाद मानवता का शत्रु है, इसलिए आतंक के खिलाफ विश्व को एकजुट होना होगा। चाहे आतंकवाद ग्रस्त देश हों या इसके पोषक, आतंकवाद यह किसी के हित में नहीं। आज जो देश इसके पोषक बने हैं, वहां भी आतंकी अपने नापाक मंसूबों को अंजाम दे आम लोगों को मारते हैं। आतंक की विषबेल को ही काटना होगा।

ई हिमांशु शेखर, केसपा, गयाजी।

### आत्मरक्षा का अधिकार

''लड़के हैं, गलती हो जाती है'' कहकर इसी देश में एक बार युवा पीढ़ी को पथभ्रष्ट करने की कोशिश की गई थी। उसी तर्ज पर ''भटके हुए युवा'' कहकर उनके द्वारा देश के विरुद्ध की जाने वाली साजिश पर कुटिल पर्दा डाला जा रहा है। एक तरफ 32 कारों के माध्यम से 2,900 किलो विस्फोटक से हजारों भारतीयों को बारूद से नहला देने का इरादा था तो दूसरी तरफ राइसिन नामक जहर से लाखों भारतीयों का कत्लेआम करने की साजिश थी। जो साइनाइड से कई गुना ज्यादा खतरनाक होता है। उनका इरादा साफ है, भयंकर तबाही मचाना। जिससे डरकर गजवा-ए-हिंद का कुत्सित प्रयास सफल हो सके। लखनऊ में एक हकीम के घर से से भारी संख्या में कट्टे एवं कारतूस बरामद हुए हैं। फरीदाबाद में विश्वविद्यालय तक में आपत्तिजनक गतिविधियां हो रही हैं। स्पष्ट इरादा गजवा-ए-हिंद का है। इससे सतर्क रहना होगा। अपने अस्तित्व को बचाना है। आत्मरक्षा का अधिकार नीति एवं कानून दोनों देते हैं। अधिकांश राजनैतिक दल तुष्टीकरण के कारण उन्हीं का पक्ष लेते हैं। दिल्ली में लाल किले पर हुए फिदायीन हमले में बेगुनाह 15 लोग मारे गए, तब भी विपक्ष ने खुलकर आतंकवादियों की निंदा नहीं की। राजनीति और आतंकवाद दोनों को अलग-अलग दृष्टि से देखना होगा, क्योंकि आतंकी सरकार किसकी है, यह नहीं देखते।

धर्मेन्द्र नाथ रस्तोगी, दुर्गादेवी मंदिर मार्ग, चौक, पटना

## पोस्ट

समाज भी एक बहुत अजीब प्रयोगशाला है। यहां हर कोई दूसरे की जांच करने में व्यस्त है, बस खुद की रिपोर्ट कभी नहीं देखता।

अर्चना अनिरुद्ध@archana_anirudh

दिल्ली हमले से जुड़े आतंकी उमर का वीडियो साफ बता रहा है कि आतंक का असली कारण गरीबी-अशिक्षा नहीं, दिमाग में भरा जहर है। डिग्री चाहे डाक्टर की हो या इंजीनियर की, सोच अगर बिगड़ जाए तो इंसान भी हथियार बन जाता है।

विशाल@Vslkharwar

विवाह के बाद भी बेटियों का मायके पर पूरा अधिकार होता है। वे जब चाहे वहां आ सकती हैं और जब तक रहना चाहें, रह सकती हैं। वह उनका ही घर है। इस पर कोई बहस ही नहीं होनी चाहिए।

आरके विज@ipsvijrk

कुछ लोग चाह रहे थे कि भारत में भी नेपाल की तरह जेन-जी हिंसक आंदोलन करके सत्ता को उखाड़ फेंकें। उनके ऐसे मंसूबे पूरे नहीं हो पाए तो वे अब बांग्लादेश में शेख हसीना जैसे फैसले की कल्पनाओं में रमे हैं।

पद्मजा जोशी@PadmajaJoshi

## जनपथ

पटना देखेगा बड़ा शक्ति प्रदर्शन आज,
दसवीं बार नितीश के आज सजेगा ताज।
आज सजेगा ताज देख लें राहुल भाई,
जनता जिसके साथ उसी को मिले बधाई।
देखें आंखें फाड़ विरोधी सब यह घटना,
गढ़ने को इतिहास आज आतुर है पटना।

– ओमप्रकाश तिवारी

संस्थापक-स्व.पूर्णचन्द्र गुप्त, पूर्व प्रधान सम्पादक- स्व. नरेन्द्र मोहन, नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन- महेन्द्र मोहन गुप्त, प्रधान सम्पादक -संजय गुप्त
जागरण प्रकाशन लिमिटेड के लिये आनन्द त्रिपाठी द्वारा दैनिक जागरण प्रेस C-5, C-6 & 15 इंडस्ट्रियल एरिया, पाटलिपुत्रा, पटना - 800013 से प्रकाशित एवं मुद्रित, सम्पादक (बिहार/प.बंगाल)-विष्णु प्रकाश त्रिपाठी, स्थानीय सम्पादक - आलोक मिश्रा * दूरभाष :0612-2277071, 2277072, 2277073
E.mail : patna@pat.jagran.com, R.N.I. NO. BIHHIN/2000/03097* इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं सम्पादन हेतु पी.आर.बी.एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी पटना जीपीओ रजि.नं. R-10/NP-18/14-16 समस्त विवाद पटना न्यायालय के अधीन ही होंगे। वर्ष 26 अंक 216

********

https://t.me/AllNewsPapersPaid

6 | संपादकीय
जनसत्ता | 20 नवंबर, 2025

कल्पमेधा

*जो सत्य है, उसे साहसपूर्वक निर्भीक होकर कहो, उससे व्यक्ति विशेष को कष्ट हुआ या नहीं, इस पर ध्यान मत दो।*
*- स्वामी विवेकानंद*

# अंगदान का संकट

अंगदान से किसी को भी नया जीवन दिया जा सकता है, इसलिए इसे महादान कहा जाता है। यह मानवता की सबसे बड़ी सेवा है। मगर भारत में अंगदान और प्रत्यारोपण की प्रक्रिया में चुनौतियां भी कम नहीं हैं। दानदाताओं की कमी और बुनियादी व्यवस्था का अभाव सबसे बड़ा संकट है। समाज में अंगदान के प्रति जागरूकता फैलाने के लिए सरकारी प्रयास नाकाफी साबित हो रहे हैं। दूसरी ओर, अंगदान की वैधता और गैर वैधता को लेकर कानून बनाया गया है, लेकिन यह देश के तमाम राज्यों में न तो समान रूप से लागू हो पाया है और न ही इस पर कड़ाई से अमल हो पा रहा है। यही वजह है कि अब सर्वोच्च न्यायालय ने अंगदान और इसके आबंटन एवं प्रत्यारोपण के लिए एक पारदर्शी और सक्षम प्रणाली बनाने के लिए केंद्र सरकार को राज्यों के परामर्श से एक राष्ट्रीय नीति तथा समान नियम बनाने के निर्देश दिए हैं। शीर्ष अदालत ने अंगदान करने वालों को शोषण और उत्पीड़न से बचाने के वास्ते हर स्तर पर पुख्ता बंदोबस्त करने के लिए भी कहा है।

देश में मानव अंग प्रत्यारोपण अधिनियम, 1994 में मौजूदा समय के हिसाब से संशोधन किए गए हैं। मगर कुछ राज्यों ने इन संशोधनों पर अभी तक अमल नहीं किया है। इनमें आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु और मणिपुर जैसे कई राज्य शामिल हैं। इससे स्पष्ट है कि अंगदान और प्रत्यारोपण को लेकर विभिन्न राज्यों के नियमों में समानता नहीं है। इसका खमियाजा न केवल अंगदाताओं, बल्कि प्रत्यारोपण का इंतजार करने वाले मरीजों को भी भुगतना पड़ता है। यही वजह है कि देश में इस संबंध में राष्ट्रीय नीति की जरूरत महसूस की जा रही है। शीर्ष अदालत ने नई नीति में अंग प्रत्यारोपण के लिए आदर्श आबंटन मानदंड निर्धारित करने को कहा है। साथ ही इस बात को भी रेखांकित किया है कि इसमें लिंग और जातिगत पूर्वाग्रह के मुद्दों पर ध्यान दिया जाना चाहिए और राज्यवार विसंगतियों को समाप्त करने के लिए अंगदाताओं के वास्ते एक समान नियम तय किए जाएं।

अंगदान में कमी और प्रत्यारोपण से जुड़ी समस्याओं के लिए कई कारक जिम्मेदार हैं। इनमें जागरूकता की कमी, पारिवारिक सहमति का अभाव, नैतिक एवं सांस्कृतिक बाधाएं, विशेष चिकित्सा पेशेवरों की कम उपलब्धता, सीमित बुनियादी व्यवस्थाएं और अंगों की कालाबाजारी शामिल हैं। केंद्र सरकार की एक रपट के मुताबिक, देश में अंग प्रत्यारोपण की संख्या वर्ष 2013 में 4,990 से बढ़ कर 2023 में 18,378 हो गई, फिर भी अंगदान की दर प्रति दस लाख जनसंख्या पर एक से भी कम है। इससे साफ है कि लोगों को अंगदान के लिए प्रेरित करने के वास्ते व्यापक स्तर पर जागरूकता अभियान चलाने की जरूरत है। साथ ही अंगों की कालाबाजारी कर मुनाफा कमाने की गतिविधियों पर भी पूरी तरह रोक लगानी होगी। यह सुनिश्चित करना भी जरूरी है कि जरूरतमंद का वैध तरीके से ही अंग प्रत्यारोपण हो। किसी अंगदाता के साथ धोखाधड़ी या उसका उत्पीड़न न हो। इसके अलावा अंगों को निकालने, संग्रहीत करने और उन्हें समय पर विभिन्न क्षेत्रों में प्रत्यारोपण के लिए पहुंचाना भी एक बड़ी चुनौती है। देश में अंग प्रत्यारोपण की प्रक्रिया के लिए बहुत कम अस्पताल पंजीकृत हैं। साथ ही अंगों को दूसरी जगह पहुंचाने के लिए परिवहन व्यवस्था और पेशेवर कर्मियों का भी खासा अभाव है। ऐसे में राष्ट्रीय नीति के जरिए ही इन समस्याओं का समाधान किया जा सकता है।

# गिरफ्त में गिरोहबाज

देश में गिरोहबाजों का तंत्र सुरक्षा एवं जांच एजंसियों के लिए एक बड़ी चुनौती बन गया है। अपराध की दुनिया के ये कुख्यात सरगना कई बड़ी वारदातों को अंजाम देने के बाद आसानी से विदेश भाग जाते हैं और वहीं से अपने गिरोह को संचालित करते हैं। पिछले कुछ वर्षों में तमाम सख्ती के बावजूद ऐसे कई गिरोह पनपे, जो समाज के लिए बड़ा खतरा बन गए। लारेंस बिश्नोई गिरोह भी इनमें से एक है। लारेंस के सुरक्षा एजंसियों की गिरफ्त में आने के बाद उसका भाई अनमोल अमेरिका से इस गिरोह को संचालित कर रहा था। मगर, राष्ट्रीय जांच एजंसी ने अब उसे अमेरिका से प्रत्यर्पित कर गिरफ्तार कर लिया है। वह राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी के नेता बाबा सिद्दीकी की हत्या, अभिनेता सलमान खान के घर पर गोलीबारी और पंजाबी गायक सिद्धू मूसेवाला की हत्या सहित कई अन्य अपराधों में वांछित था। अनमोल की गिरफ्तारी को भले ही जांच एजंसी की बड़ी उपलब्धि माना जा रहा है, लेकिन सवाल है कि इस तरह के अपराधी सुरक्षा एजंसियों को चकमा देकर विदेश कैसे फरार हो जाते हैं?

इसे सुरक्षा एजंसियों की विफलता नहीं तो और क्या कहा जाएगा कि लारेंस बिश्नोई गिरोह ने दिल्ली, पंजाब और गुजरात सहित तेरह राज्यों में अपना तंत्र खड़ा कर लिया था। यही नहीं इस गिरोह ने अमेरिका, ब्रिटेन, कनाडा, दुबई और पुर्तगाल जैसे देशों में भी अपनी जड़ें जमा लीं। क्या कारण है कि तमाम संसाधनों और तकनीकी दक्षता के बावजूद राज्यों की पुलिस एवं अन्य सुरक्षा एजंसियां इस तरह के गिरोहों पर लगाम कसने में उतनी सतर्क एवं सजग नजर नहीं आतीं, जितनी उनसे अपेक्षा की जाती है। लारेंस और अनमोल के अलावा और भी कई गिरोहबाज विदेश से देश के भीतर आपराधिक वारदातों को अंजाम देने की साजिश रचते रहते हैं। हालांकि, केंद्र सरकार ने ऐसे गिरोहबाजों की धरपकड़ के लिए पिछले कुछ समय से अपने कूटनीतिक प्रयासों को तेज किया है और मुंबई हमले के साजिशकर्ताओं में शामिल तहव्वुर हुसैन राणा को अमेरिका से भारत लाना इन्हीं प्रयासों का नतीजा है। उम्मीद है कि सरकार और सुरक्षा एजंसियां विदेश में बैठे आर्थिक अपराधियों सहित अन्य गिरोहबाजों को भी न्याय के कठघरे में लाएगी।

# फसल बीमा की जमीनी हकीकत

**फसलों को नुकसान के बाद किसान राहत की उम्मीद में भटकता रहता है, राज्य सरकारें केंद्र से वित्तीय सहायता की गुंजाइश तलाशती हैं। मगर बीमा कंपनियां निश्चिंत रहती हैं कि तय शर्तों के कारण प्रारंभिक या आंशिक नुकसान पर उन्हें भुगतान नहीं करना है।**

### विनोद के शाह

फसल बीमा योजना का उद्देश्य किसानों को प्राकृतिक आपदाओं से हुए नुकसान की संपूर्ण भरपाई करना है, मगर जमीनी हकीकत इससे उलट दिखाई देती है। फसल बर्बादी के बाद किसान राहत की उम्मीद में भटकता है, राज्य सरकारें केंद्र से वित्तीय सहायता की गुंजाइश तलाशती हैं, जबकि बीमा कंपनियां निश्चिंत रहती हैं कि 'बीमा शर्तों' के कारण प्रारंभिक या आंशिक नुकसान पर उन्हें भुगतान नहीं करना है। अतिवृष्टि और बाढ़ से इस बार पंजाब, महाराष्ट्र, हरियाणा, मध्यप्रदेश, हिमाचल प्रदेश, उत्तर प्रदेश, बिहार, उत्तराखंड और जम्मू-कश्मीर के अनेक जिलों में खरीफ की फसलें बुरी तरह प्रभावित हुईं। ऐसी स्थिति में फसल बीमा किसानों के लिए सहारा होना चाहिए था, मगर यह राहत के बजाय चिंता का कारण बन रहा है। बीमा कंपनियों को प्रीमियम के तौर पर किस्तों में पूरा भुगतान करने के बावजूद सरकार को किसानों के लिए राहत राशि बांटने को मजबूर होना पड रहा है।

वर्ष 2016 में शुरू हुई 'प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना' में हर वर्ष किसान हितग्राहियों की संख्या बढ़ी है। इसका एक कारण यह है कि बैंक ऋण लेने पर बीमा अनिवार्य है। दूसरा, इस बीमा के प्रचार में मात्र दो फीसद प्रीमियम पर किसानों को संपूर्ण फसल सुरक्षा का वादा! वित्तीय वर्ष 2024-25 में देश में लगभग 4.19 करोड़ ऋणी किसान और 5.22 करोड़ गैर-ऋणी किसान फसल बीमा योजना से जुड़े हैं। योजना के अनुसार, किसान केवल दो फीसद तक प्रीमियम देता है, जबकि शेष 98 फीसद हिस्सा केंद्र और राज्य सरकार समान रूप से वहन करती हैं। इस वर्ष केंद्र सरकार ने 14,600 करोड़ रुपए का प्रावधान किया और लगभग इतनी ही राशि राज्यों ने भी बीमा कंपनियों को दी है। मगर आश्चर्य यह है कि इतने भारी सरकारी निवेश के बावजूद प्रभावित किसानों को उनकी पिछली फसलों में वास्तविक नुकसान का दस फीसद से भी कम मुआवजा मिला है।

पूर्व में फसल नुकसान का मूल्यांकन 'फसल कटाई प्रयोग' के माध्यम से तहसील स्तर पर किया जाता था। तीन वर्ष के औसत उत्पादन के आधार पर क्षतिपूर्ति तय होती थी। लेकिन इस पद्धति में राजस्व अमले और बीमा कंपनियों के बीच सांठगांठ से आंकड़े अक्सर किसानों के खिलाफ जाते थे- औसत उत्पादन जानबूझकर कम दर्शाया जाता, जिससे मुआवजा घट जाता था। कृषि मंत्रालय ने इस व्यवस्था को सुधारने के लिए उपग्रह आधारित फसल आकलन प्रणाली लागू की है। उपग्रह से ली गई तस्वीरों से प्रत्येक किसान के खेत का विश्लेषण कर फसल क्षति का निर्धारण किया जाता है। इसी प्रणाली के आधार पर अगस्त 2025 में गत फसल के लिए देशभर के लगभग तीस लाख प्रभावित किसानों को 3,200 करोड़ रुपए का भुगतान किया गया। इसमें राजस्थान के किसानों को 1,120 करोड़, मध्यप्रदेश को 1,156 करोड़, छत्तीसगढ़ को 150 करोड़ और शेष अन्य राज्यों को 778 करोड़ रुपए दिए गए।

मगर यह राहत किसानों के लिए मरहम के बजाए उनके घावों पर नमक छिड़कने का काम कर रही है। अनेकों पीड़ित किसानों को सिर्फ सौ रुपए से लेकर दो हजार रुपए तक की बीमा राहत राशि उनके बैंक खातों में

पहुंचाई गई है। कुछ किसानों को दी गई बीमा राशि उनके द्वारा अदा की गई प्रीमियम की दो फीसद रकम से भी कम है। मध्यप्रदेश के जबलपुर जिले के कुंवरहटा गांव में तो सभी प्रभावित किसानों के खातो में कुल सत्रह रुपए का ही भुगतान हुआ है। जबकि महाराष्ट्र के शिलोत्तर गांव के एक

> **बीमा योजना में कुछ सुधारों की दरकार है। व्यक्तिगत खेत स्तर पर वास्तविक आकलन में फसल नुकसान का निर्धारण केवल उपग्रह से ली गई तस्वीरों से नहीं, बल्कि भौतिक सत्यापन और उपज परीक्षण से भी होना चाहिए। बीमा कंपनियों की जवाबदेही तय करने के लिए भुगतान में अनुचित कटौती पर आर्थिक दंड की व्यवस्था होनी चाहिए। फसल बीमा का उद्देश्य किसानों को संकट से उबारना है, न कि उन्हें बीमा कंपनियों के जाल में फंसाना। करोड़ों रुपए का प्रीमियम देने के बाद भी जब किसान को न राहत मिलती है, न भरोसा, तो यह नीति सुधार की मांग बन जाती है।**

किसान के खाते में बीमा कंपनी ने ग्यारह एकड़ धान की फसल की क्षतिपूर्ति राशि सिर्फ दो रुपए तीस पैसे जमा कराई है। उपग्रह प्रणाली से ली गई तस्वीरों में खेतों की हरी-भरी फसलें दिख जाती हैं, लेकिन यह अंतिम उत्पादन का आकलन नहीं कर पाती। असल नुकसान का तब पता चलता है, जब फसल से दाने और भूसे को अलग किया जाता है। जब दाना कम और भूसा ज्यादा निकलता है, तो किसानों की मेहनत पर पानी फिर जाता है। यह समस्या ही फसल क्षति का बड़ा कारण होता है, जिसका आकलन उपग्रह प्रणाली से करना संभव नहीं हो पाता है। यही वजह है कि आकलन में कई तरह की विसंगतियां सामने आती हैं और किसानों को वास्तविक नुकसान के अनुपात में बीमा राशि का भुगतान नहीं मिल पाता।

हाल के दिनों में अतिवृष्टि और बाढ से हुए फसल नुकसान के बीमा कंपनियों की परिधि में न आने की निराशाजनक शर्तों के अध्ययन के बाद कई राज्य सरकारें अपने स्तर पर किसानों को राहत दे रही हैं या केंद्र सरकार से वित्तीय राहत पैकेज की मांग रही हैं। फसल बीमा कंपनियां सिर्फ अंतिम उत्पादन पर नुकसान की सामूहिक भरपाई उत्पादन में गिरावट के आकलन से करती हैं। लेकिन हाल में फसलों को हुआ नुकसान प्रारंभिक अवस्था का है, इसलिए बीमा कंपनियां राहत देने से साफ बच रही हैं। पंजाब सरकार ने 23.81 लाख प्रभावित किसानों को नुकसान की भरपाई के लिए 1,623.51 करोड़ रुपए की राहत राशि वितरित की, जबकि महाराष्ट्र सरकार ने साठ लाख हेक्टेयर क्षेत्र में फसल को हुए नुकसान के लिए 1,356.30 करोड़ रुपए की राहत राशि किसानों के लिए जारी की है। अन्य राज्य सरकारें नुकसान का आकलन करने की प्रक्रिया में हैं।

देखा जाए तो यह बेहद चिंताजनक है कि जब सरकारें प्रीमियम के रूप में अरबों रुपए बीमा कंपनियों को दे रही हैं और बीमा कंपनियां भी संपूर्ण सुरक्षा कवच देने का दावा करती हैं, इसके बावजूद सरकार किसानों को अलग से राहत राशि प्रदान करने को बाध्य हो रही है। ऐसे में फसल बीमा योजना का वास्तविक औचित्य क्या रह जाता है? क्या यह योजना किसानों से अधिक बीमा कंपनियों को लाभ पहुंचाने का माध्यम बन गई है? शुरुआत से लेकर अभी तक के आंकडे बताते हैं कि बडी से बडी प्राकृतिक आपदाओं में किसानों की फसलें नष्ट होने के बाद भी संबंधित बीमा कंपनियां कभी भी लाभ से वंचित नही रही हैं।

ऐसे में फसल बीमा योजना में कुछ आवश्यक सुधारों की दरकार है। व्यक्तिगत खेत स्तर पर वास्तविक आकलन में फसल नुकसान का निर्धारण केवल उपग्रह से ली गई तस्वीरों से नहीं, बल्कि भौतिक सत्यापन और उपज परीक्षण से भी होना चाहिए। बीमा कंपनियों की जवाबदेही तय करने के लिए बीमा भुगतान में अनुचित कटौती पर आर्थिक दंड लगाने की व्यवस्था होनी चाहिए। राज्य स्तर पर पारदर्शी पोर्टल विकसित किए जाने चाहिए, ताकि प्रत्येक किसान अपने नुकसान और भुगतान की स्थिति आनलाइन देख सके। बीमा प्रीमियम की समीक्षा करना भी जरूरी है, प्रीमियम के अनुपात में न्यूनतम मुआवजा राशि की कानूनी गारंटी होनी चाहिए। इसके अलावा प्राकृतिक आपदा और प्रारंभिक फसल क्षति को भी बीमा योजना में शामिल किया जाना जरूरी है। फसल बीमा का उद्देश्य किसानों को संकट से उबारना है, न कि उन्हें बीमा कंपनियों के जाल में फंसाना। करोड़ों रुपए का प्रीमियम देने के बाद भी जब किसान को न राहत मिलती है, न भरोसा, तो यह नीति सुधार की मांग बन जाती है। अब आवश्यक है कि केंद्र और राज्य सरकारें मिलकर इस योजना की समीक्षा करें, ताकि यह बीमा कंपनियों का सुरक्षा कवच नहीं, बल्कि किसानों की वास्तविक वित्तीय ढाल बन सके।

# कला के आयाम

## दुनिया मेरे आगे

### एकता कानूनगो बक्षी

जब भी हम कला और उसके कलाकार के बारे में सोचते हैं, हमारे मन में कई छवियां उभरने लगती हैं। हमें कला के विभिन्न रूप अनूठे, उत्कृष्ट और विशिष्ट लगने लगते हैं, फिर चाहे वह चित्रकारी, गीत, गायन, लेखन, नृत्य, नाटक जैसी अनगिनत विधाएं हों। कलाकार की मेहनत और उसके समर्पण भाव से जीवंत हुई हर कृति हमें चकित कर देती है। वास्तविक या सपनीली दुनिया को कैनवास पर या मंच पर उकेरता या रेखांकित करता कलाकार जब अपनी नैतिक जिम्मेदारियों के प्रति सजग रहता है, तब वह बिना किसी हथियार और बल के अपनी संवेदनाओं की प्रभावी अभिव्यक्ति के माध्यम से समाज में सकारात्मक क्रांति लाने में सक्षम हो जाता है। वह कभी शोषितों की आवाज बनकर न्याय के रंगों से पूरा कैनवास भर देता है, तो कभी सभागार कंपित हो जाता है उसकी ऊंची पुकार से।

यह कला है या जिद है कलाकार की कि वह निस्वार्थ भाव से चाहता है दुनिया को सुंदर रंगों से भर देना, मीठी सुरीली तान में सबको एक सुर में बांधकर। देखना चाहता है सबको एक साथ हंसते-मुस्कुराते। वह लिखता है लगातार इस उम्मीद से कि किसी दिन उम्मीदों से भरे शब्द कागज के पन्नों से निकलकर उसके सामने जीवंत रूप में समाज में घुल-मिल जाएंगे। संवेदनाओं से भरा कलाकार मनुष्यता के उजले रंगों को संभाले रखने के लिए किसी सिपाही की तरह हमेशा डटा रहता है। यही कारण है कि कलाकार किसी क्षेत्र या वर्ग का नहीं होता, वह सबका होता है और सबको अपना मानता है। आम इंसान भी अपने जीवन की जटिलताओं में व्यस्त होते हुए कला में सुकून पाता है।

> **संभव है कि कला के माध्यम से हर इंसान के जीवन की आर्थिक स्थिति मजबूत न हो सके, पर यह भी निश्चित है कि कलात्मक सोच हमारे जीवन को हर परिस्थिति में निखार देती है। कैनवास, मंच, कागज पर उकेरने से कहीं पहले कला का उद्गम हमारे मन और विचारों में होता है।**

कलाकार की यह संवेदनाओं से भरी दुनिया थोड़ी ज्यादा भली, स्वस्थ और सुरक्षित प्रतीत होती है। लगने लगता है कि अगर मनुष्य अपने सामान्य जीवन में भी इतना ठहराव ला सके कि उसका हर कदम और निर्णय गहराई लिए हो, तो आम इंसान की दुनिया भी किसी अर्थपूर्ण कृति की तरह ही सुंदर और स्वस्थ नजर आने लगेगी। कलाकार और उसकी दुनिया को खिन्न कर देते हैं सांप्रदायिकता, क्रोध, भ्रष्टाचार और शोषण जैसे दुखद प्रसंग। आम इंसान और कलाकार की दुनिया की भिन्नता को खोजने की कोशिश करें, तो मालूम पड़ता है कि किसी भी सृजन के लिए बहुत अधिक समर्पण, अध्ययन और मेहनत लगती है। अपने ही बनाए पर बार-बार पुनर्विचार करना होता है, लेकिन क्या इसे भी भिन्नता माना जा सकता है? आम जीवन के हर विचार को जो व्यक्ति गहराई से डूबकर और सबके हितों में सोचते हुए निर्णय लेता है, उसे भी तो कलाकार ही कहा जा सकता है। जो खुद के और दूसरों के जीवन में मधुर संगीत घोल दे, सही के पक्ष में हमेशा खड़ा रहे और गलत को गलत कहने का साहस रख सके, वह भी तो कलाकार ही है।

हर इंसान को कला और कलाकार का संसार कभी न कभी आकर्षित जरूर करता है, लेकिन यह मत हावी होने लगता है कि आम इंसान, जिसका जीवन मूलभूत जरूरतों को पूरा करने में गुजर रहा है, उसका विषय कला कैसे हो सकता है। हां, अगर हुनर के जरिए अपने जीवन की आवश्यक जरूरतें पूरी होने लगें, व्यवसाय के रूप में परिवर्तित किया जा सके या फिर बेहद प्रतिभाशाली होने के कारण आर्थिक स्थिति मजबूत बन जाए या फिर कोई अन्य आय का जरिया हो, तो फिर सोचा जा सकता है। इस विचारधारा के विपरीत, अनेक कठिनाइयों के बावजूद भी अक्सर कला तो जन्म ही वही लेती है, जहां विषमताओं के बाद भी थोड़ी-सी नमी बची रहती है, जो किसी व्यक्ति के भीतर की अच्छाई को लगातार सींचती रहती है। समानुभूति के बिना किसी भी कला को उकेरना कठिन है। यही कारण है कि हर कृति में कलाकार के जीवन के अलग-अलग पड़ाव की यात्रा भी होने लगती है। जिसने जितनी गहराई में उतरकर जीवन का अनुभव किया है, उतनी ही कुशलता उसके काम में नजर आने लगती है।

संभव है कि कला के माध्यम से हर इंसान के जीवन की आर्थिक स्थिति मजबूत न हो सके, पर यह भी निश्चित है कि कलात्मक सोच हमारे जीवन को हर परिस्थिति में निखार देती है। कैनवास, मंच, कागज पर उकेरने से कहीं पहले कला का उद्गम हमारे मन में होता है, हमारे विचारों में होता है। कलात्मक सोच हमें मजबूत, निष्पक्ष और स्वस्थ बनाती है। यह हमारे जीवन के लगभग हर पक्ष पर अपना गहरा प्रभाव छोड़ती है। कलात्मक सोच के माध्यम से हम विकर्षणों से दूर, वापस अपने मूल स्वभाव पर लौटते हैं। हम चीजों को गहराई से समझने लगते हैं। अपनी इंद्रियों का सही अर्थों में उपयोग कर रहे होते हैं। यह हमें कई बंधनों से मुक्त कर देती है। हम खुलकर प्यार कर पाते हैं, खुलकर रोते हैं, खुद को अभिव्यक्त करने का साहस जुटा पाते हैं- उन वास्तविक भावनाओं को सहज रूप से स्वीकार कर पाते हैं, जिन्हें अक्सर छिपा लिया जाता रहा है।

सबसे सुंदर और बहुमूल्य तोहफा जो कला हमें देती है, वह है एक अवसर, जब हम स्वार्थ पूर्ति के लिए बनी सभी रेखाएं मिटाकर एक साथ बैठते हैं, एक दिशा में देखते हैं, महसूस करते हैं, सीखते हैं, आनंदित होते हैं और आभार व्यक्त करते हैं कि सतही उजली दुनिया में भी हमने जमीनी संवेदनाओं के लिए छोटा-सा कोना सुरक्षित कर रखा है।

## जनादेश की जिम्मेदारी

'नतीजों का संदेश' (संपादकीय, 15 नवंबर) में बिहार विधानसभा चुनाव परिणाम की उचित व्याख्या है। दो दशक से इस राज्य में सरकार ने विकास एवं कल्याण के अनेक प्रकल्प लागू किए हैं, लेकिन नए जनादेश से उसकी जिम्मेदारी और बढ़ गई है। अभी भी राज्य का जनमानस बेरोजगारी से मुक्ति, औद्योगिक विकास में गति, प्रशासनिक भ्रष्टाचार का उन्मूलन और विधि व्यवस्था में अपेक्षित सुधार की उम्मीद कर रहा है। आजादी के बाद हुए अधिकतम मतदान में विशेषकर महिलाओं की भागीदारी का यही अर्थ है कि मतदाताओं के मन में बिहार के विकास के सपने तैर रहे हैं। जाति, धर्म और वर्ग से विलग होकर राज्य के मतदाताओं ने इसलिए राजग को जिताया है। विपक्षी राजनीति के महारथी जमीनी हकीकत को समझने में नाकाम इसलिए हुए, क्योंकि वे सिर्फ अतार्किक विरोध को अपना पैमाना मान चुके थे। चुनावी अखाड़े में भारी भीड़ का मत में बदलने का चलन अब खत्म हो रहा है। बहरहाल उम्मीद करें कि राजनीतिक मोर्चे पर बिहार में लोकतंत्र का जीवन पहले से अधिक उन्नत होगा।

*- अशोक कुमार, पटना, बिहार*

## हादसे और लापरवाही

देश भर में जानलेवा दुर्घटनाएं बढ़ रही हैं। लिहाज इन पर अंकुश जरूरी है। हालांकि यातायात नियमों का पालन नहीं करने से भी कई बार दुर्घटनाएं होती हैं। बिना सावधानी के तेज गति से वाहन चलाना एक तरह से मौत को निमंत्रण देना है। ऐसा कोई दिन नहीं जाता, जब सड़क दुर्घटना न होती हों। दुपहिया सवारों को हेलमेट पहनना अनिवार्य है, लेकिन कई लोग इसका पालन नहीं करते। वाहनों की गति सीमा निर्धारित है। फिर भी कुछ लोग निर्धारित गति से अधिक चलते हैं। गति सीमा का पालन नहीं करना भी हादसों का बड़ा कारण है। वाहनों की तेज रफ्तार पर अंकुश लगाना जरूरी है। यातायात नियमों का पालन सुनश्चित करने के लिए व्यस्तम चौराहों पर संकेतक लगाए जाने चाहिए। जहां गति अवरोधक न हो, वहां इसकी व्यवस्था की जानी चाहिए। इस मामले में लापरवाही बरतने वाले विभागीय कर्मियों पर भी कार्रवाई जरूरी है।

*- संजय वर्मा 'दृष्टि', धार, मप्र*

## अपनेपन का भ्रम

संबंधों की दुनिया हमें बचपन से भरोसा दिलाती है कि कुछ लोग हमारे 'अपने' हैं, और यह विश्वास हमारी भावनाओं की नींव बन जाता है। अनुभवों के साथ एहसास होने लगता है कि अपनापन हमेशा वैसा नहीं होता जैसा हम उसे समझते आए हैं। अधिकांश रिश्तों के पीछे अनकहे स्वार्थों और अपेक्षाओं की महीन परतें छिपी होती हैं। आधुनिक जीवन ने संपर्क जरूर बढ़ाए हैं, पर आत्मीयता की दूरी बढ़ा दी है। लोग साथ यात्रा तो करते हैं, पर भीतर से एक-दूसरे तक पहुंच नहीं पाते। कई बार कोई अनजान व्यक्ति कठिन क्षण में ऐसी सहानुभूति दे जाता है, जो वर्षों पुराने रिश्तों से अपेक्षित थी। यही अनुभव हमें सिखाता है कि अपना कहे जाने और सच में अपना होने के बीच गहरा अंतर है। हमें अपेक्षाओं की कठोरता से बाहर आकर रिश्तों को बोझ नहीं, बल्कि सहजता का स्थान देना चाहिए। यह सच है कि अपनापन तभी टिकता है, जब उसमें दिखावे की जगह सादगी हो।

*- अमन सिंह गौर, वाराणसी*

## सार्थक पहल

बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान और उत्तर प्रदेश सहित कई राज्यों में हृदयघात के मामले तेजी से बढ़ रहे हैं। मगर इस दिशा में उत्तर प्रदेश ने सबसे पहले सार्थक पहल की है। राज्य के नागरिकों में बढ़ते हृदयाघात के मामलों पर अंकुश लगाने के लिए सरकार ने निर्णायक कदम उठाया है। अब सभी मेडिकल कालेजों, जिला अस्पतालों और प्रमुख सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्रों में जीवनरक्षक टीका निशुल्क उपलब्ध होगा। बाजार में 40-50 हजार रुपए का यह टीका गरीब मरीजों को बिना किसी आर्थिक बाधा के समय पर मिल सकेगा। यह निर्णय राज्य सरकार की संकट-प्रबंधन क्षमता का प्रमाण है। केंद्र की आयुष्मान योजना से भी आगे बढ़ते हुए राज्य सरकार ने आपातकालीन दवाओं पर सीधे निवेश किया है। इसी तरह देश भर में एकीकृत आपात हृदय-सेवा शुरू की जानी चाहिए।

*- आरके जैन 'अरिजीत', बड़वानी*

हमें लिखें, हमारा पता : edit.jansatta@expressindia.com | chaupal.jansatta@expressindia.com

https://t.me/AllNewsPaperPaid1

# { संपादकीय }

**नई दिल्ली, गुरुवार 20 नवम्बर 2025**

*संस्थापक-सम्पादक* : स्व. मायाराम सुरजन

## सड़क पर उतरने की तैयारी में कांग्रेस

बिहार चुनाव में हार के बाद एक बार फिर कांग्रेस के पतन की भविष्यवाणी होने लगी है। कई स्वनामधन्य पत्रकारों ने विश्लेषण करना शुरु कर दिया है कि राहुल गांधी जिन राज्यों में चुनाव प्रचार के लिए जाते हैं, वहां कांग्रेस को किस तरह हार मिलती है। ऐसा लगता है मानो बिहार में भाजपानीत एनडीए की जीत नहीं, महागठबंधन की हार इनके लिए ज्यादा मायने रखती है। अब यह सबका अपना विवेक है कि वे बिहार के चुनाव परिणामों का विश्लेषण किस तरह करते हैं। लेकिन इस बीच कांग्रेस ने मौजूदा हाल पर गहन मंथन शुरु कर दिया है। एक तरफ कांग्रेस ने सांगठनिक स्तर पर कार्रवाई आरंभ की है, तो दूसरी तरफ चुनावी धांधली के खिलाफ सड़कों पर उतरने की उसकी तैयारी है।

कांग्रेस विरोधियों को यह देखकर निराशा हो सकती है कि 14 नवंबर को आए नतीजों के चार दिन बाद ही कांग्रेस ने एक बड़ी बैठक बुला ली। हार से परेशान होकर उसके नेता घरों में बंद नहीं हुए। बल्कि इन परिणामों की समीक्षा कर नयी रणनीति बनाने में जुट गए। मंगलवार 18 नवंबर को दिल्ली में कांग्रेस मुख्यालय में उन 12 राज्यों के एआईसीसी महासचिवों, कांग्रेस प्रभारियों, प्रदेश कांग्रेस अध्यक्षों समेत बड़े पदाधिकारियों की एक बैठक हुई, जहां अभी चुनाव आयोग विशेष गहन पुनरीक्षण (एसआईआर) प्रक्रिया चला रहा है। बैठक में कांग्रेस अध्यक्ष मल्लिकार्जुन खड़गे तो थे ही, राहुल गांधी भी इसमें शामिल हुए।

बता दें कि अपने दैनिक एसआईआर बुलेटिन में चुनाव आयोग ने कहा था कि 12 राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों में 50.11 करोड़ गणना प्रपत्र वितरित किए जा चुके हैं। इन राज्यों में तमिलनाडु, पुडुचेरी, केरल और पश्चिम बंगाल में अगले साल विधानसभा चुनाव होने हैं। जिसमें पुडुचेरी के अलावा बाकी तीनों राज्यों में एसआईआर के खिलाफ राज्य सरकारों ने आपत्ति दर्ज कराई है। तमिलनाडु और प.बंगाल से एसआईआर रोकने के लिए सुप्रीम कोर्ट का दरवाजा खटखटाया गया है और इन राज्यों की याचिकाओं पर सुप्रीम कोर्ट में सुनवाई भी हुई है। वहीं केरल सरकार ने भी सुप्रीम कोर्ट में एसआईआर रोकने की याचिका दायर की है। याचिका में केरल सरकार ने एसआईआर प्रक्रिया को राज्य में चल रही स्थानीय स्वशासन संस्थाओं (एलएसजीआई) की चुनाव प्रक्रिया पूरी होने तक रोकने की मांग की है। गौरतलब है कि केरल में स्थानीय निकाय चुनाव दो चरणों में 9 दिसंबर और 11 दिसंबर को कराए जाएंगे, जबकि राज्य में 4 नवंबर से एसआईआर प्रक्रिया शुरू हो गई है और 4 दिसंबर को ड्राफ्ट प्रकाशित किया जाएगा। केरल सरकार का तर्क है कि केरल पंचायत राज कानून संवैधानिक प्रक्रिया है और इस अहम प्रक्रिया के दौरान एसआईआर कराना, प्रशासनिक गतिरोध पैदा हो सकता है। जबकि तमिलनाडु में अधिकारी और कर्मचारी ही एसआईआर का विरोध कर रहे हैं। तमिलनाडु के बूथ स्तर के अधिकारी बीएलओ के साथ ही तहसीलदार स्तर तक के अधिकारियों ने मंगलवार से बहिष्कार का ऐलान किया था। तमिलनाडु राजस्व कर्मचारी संघों के संगठन ने कहा कि वे काम का बोझ, कम लोग, समयबद्ध दबाव, अधूरी ट्रेनिंग और मेहनताने के विरोध में प्रदर्शन करेंगे। ये विरोध और अदालत में पहुंचती याचिकाएं बता रही हैं कि निर्वाचन आयोग और उसका साथ देती भाजपा मतदाता सूची शुद्धिकरण के जितने तर्क दें, उन शंकाओं का समाधान फिर भी नहीं हो पा रहा, जिनमें वैध मतदाताओं के नाम काटने की बात कही गई है।

इधर भाजपा शासित असम में भी अगले साल विधानसभा चुनाव होना है। लेकिन आयोग ने पूर्वोत्तर के इस राज्य के लिए 'विशेष पुनरीक्षण' यानी केवल एसआर की घोषणा की है। इसे लेकर भी विपक्ष हमलावर है और सवाल उठा रहा है कि यहां एसआईआर क्यों नहीं किया जा रहा है, क्या यह भाजपा का दोहरा मापदंड नहीं है।

बहरहाल, जैसे बिहार एसआईआर में आपत्तियों को अनसुना किया गया, वही रवैया अब भी अपनाया जाएगा, यह तय है। लेकिन इस बार कांग्रेस ने आवाज बुलंद करने के लिए सड़कों पर उतरने का फैसला लिया है। मंगलवार की बैठक में यह भी तय हुआ है कि दिसम्बर के पहले सप्ताह में रामलीला मैदान में विशाल रैली आयोजित की जाएगी। कांग्रेस नेता पवन खेड़ा ने बताया कि इस रैली में हम चुनाव आयोग के राजनीतिकरण का पर्दाफाश करेंगे। चुनाव आयोग ने जैसा बिहार में किया, वही नीति बाकी राज्यों में अपनाई जाएगी। एसआईआर को लेकर हम बिहार चुनाव के पहले से सवाल उठा रहे हैं। हमने बिहार में 'वोटर अधिकार यात्रा' भी निकाली थी और देश को बताया था कि एसआईआर में बहुत सारी गड़बड़ियां हैं। एसआईआर के बारे में सुप्रीम कोर्ट के 5 आदेश आए, जो कि चुनाव आयोग की बदनीयत को दिखाते थे और उसे सुप्रीम कोर्ट ने भी देखा। कांग्रेस पार्टी ने देशभर में एक 'हस्ताक्षर अभियान' चलाया, जिसमें 5 करोड़ हस्ताक्षर इकट्ठा हुए हैं। ये पार्टी स्तर से चलाया जाने वाला अभियान रहा। अगर वोटर का अधिकार छीना जाएगा तो हम सब आवाज उठाएंगे और यह हमारा कर्तव्य है।

कांग्रेस का ये ऐलान भाजपा को तो परेशान करेगा ही, चुनाव आयोग के लिए भी चुनौती खड़ी करेगा। क्योंकि कांग्रेस अध्यक्ष मल्लिकार्जुन खड़गे ने कहा है कि कांग्रेस पार्टी संस्थानों के पक्षपातपूर्ण दुरुपयोग से लोकतांत्रिक सुरक्षा उपायों को नष्ट नहीं होने देगी। चुनाव आयोग को साबित करना होगा कि वह भाजपा की छाया में काम नहीं कर रहा है और उसे अपनी संवैधानिक शपथ और भारत के लोगों के प्रति निष्ठा याद है, किसी सत्तारूढ़ दल के प्रति नहीं। श्री खड़गे ने कहा, हमारा दृढ़ विश्वास है कि भाजपा वोट चोरी के लिए एसआईआर प्रक्रिया को हथियार बनाने का प्रयास कर रही है। यदि निर्वाचन आयोग इसे नजरअंदाज करता है, तो वह विफलता सिर्फ प्रशासनिक नहीं है, यह संलिप्तता है।

जाहिर है कांग्रेस एक बार फिर बड़ी लड़ाई लड़ने की तैयारी में है। एसआईआर पर आर-पार की लड़ाई किस नतीजे पर आती है, इसी पर देश के संविधान और लोकतंत्र का भविष्य टिका है।

# कांग्रेस के भविष्य पर मोदी की चिंता

**दुनियादारी**

**■ सर्वमित्रा सुरजन**

बिहार में जीत दर्ज करने के बाद प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने भाजपा मुख्यालय में जब जीत का जश्न मनाया तो उसमें फिर उसी प्रतीकात्मक राजनीति को बढ़ावा दिया, जिसके चंगुल में फंसकर जनता अपने ही जीवन से जुड़े बुनियादी मुद्दों की अनदेखी कर रही है। प्रधानमंत्री मोदी ने पहले तो गमछा लहराकर अपने कार्यकर्ताओं का अभिवादन किया। गमछा एकदम सतह से जुड़े लोगों की खास पहचान है और केवल बिहार ही नहीं, समूचे भारत में आम आदमी इसका इस्तेमाल करता है। बिहार में एक बार तेजस्वी यादव ने गमछा हिलाया था तो फिर नरेन्द्र मोदी ने इसका महत्व समझ लिया। भाजपा कार्यकर्ता जमीन पर काफी मेहनत करते हैं, इसमें कोई दो राय नहीं है, लेकिन मोदी युग में भाजपा उद्योगपतियों की चहेती पार्टी बन चुकी है। नरेन्द्र मोदी ने अपने ही नामाक्षर वाले सुनहरे धागों से उकेरे गए नमो-नमो लिखे 10 लाख का सूट पहना था, यह देश को याद होगा ही। इसके बाद मोदी सरकार को सूट-बूट की सरकार कहा गया, तो अब भाजपा को जमीन से जुड़ी पार्टी दिखाने के लिए नरेन्द्र मोदी गमछा लहरा रहे हैं।

जीत के बाद श्री मोदी का अभिनंदन मखाने की बड़ी सी माला पहना कर किया गया। ध्यान रहे कि मखाना भी इस बार चुनाव का अहम मुद्दा रहा। अमीरों के लिए जो मखाना सुपर फूड कहा जा रहा है, उसे उपजाने वाले किसानों की जो दुर्दशा है, उसे समझने के लिए राहुल गांधी मखाना किसानों के साथ तालाब में उतरे थे। लेकिन अब भाजपा यह साबित करने में लगी है कि किसानों ने राहुल नहीं मोदी को चुना है। मखाना भी प्रतीकात्मक राजनीति का औजार बन गया है।

अपने संबोधन की शुरुआत नरेन्द्र मोदी ने जय छठी मईया कहकर की। ओडिशा जीतने के बाद जय जगन्नाथ से जय छठी मईया का यह सफर भी प्रतीकात्मक राजनीति का सबूत है। छठ पूजा के समय नरेन्द्र मोदी दूसरे घाट और साफ पानी की पोल खुल जाने के कारण अर्घ्य देते हुए वीडियो और तस्वीरें नहीं बनवा पाए थे। लेकिन बिहार चुनाव की जीत ने उन्हें छठी मईया का जयकारा लगाने का मौका दे ही दिया। यह तय बात है कि अगर भाजपा यह चुनाव हारती, तब नरेन्द्र मोदी इसे छठी मईया का आदेश मानकर स्वीकार नहीं करते, बल्कि वे इस पर कुछ कहते ही नहीं। लेकिन अब उन्हें अपने एक झूठे नैरेटिव को आगे बढ़ाने का मौका मिल गया है। अपने संबोधन में नरेन्द्र मोदी ने कहा कि विपक्ष ने छठी मईया का अपमान किया, छठ पूजा को नौटंकी कहा। हालांकि ये बात सरासर झूठ है। राहुल गांधी ने साफ शब्दों में कहा था कि नरेन्द्र मोदी अपने लिए अलग घाट बनवाकर छठ पूजा की नौटंकी कर रहे हैं। इसमें छठ पूजा की अवहेलना या छठी मईया का अपमान नहीं था, बल्कि नरेन्द्र मोदी के दिखावे की पोल खोल रहे थे। खबरों के फैक्ट चेक में भी यह साबित हो चुका है कि राहुल गांधी ने छठी मईया का अपमान नहीं किया था, मगर अब नरेन्द्र मोदी इसी झूठ को सौ बार बोलकर उसे सच साबित करने में लगे हैं।

नरेन्द्र मोदी ने कहा कि जंगलराज वालों ने एमवाय का तुष्टिकरण किया। हमारे लिए एमवाय का मतलब महिला और यूथ है। गौरतलब है कि लालू प्रसाद की राजनीति में एम वाय फार्मूला यानी मुस्लिमों और यादवों के वोटों की मिली जुली ताकत को महत्व दिया गया था। राजद का जनाधार मजबूत होने के पीछे यह एक बड़ा कारण रहा। अब मोदी और भाजपा की मर्जी है कि वे एम वाय का विस्तारीकरण अपने हिसाब से करें। हालांकि मोदी ने जिस तरह महिला और यूथ यानी युवा का जिक्र किया है, उससे यह तो तय हो ही गया है कि 10 हजार रूपए चुनावों के वक्त खाते में डालने का फायदा भाजपा को मिला। अब चुनाव आयोग ने यह बेईमानी होने दी कि एक पार्टी आचार संहिता का उल्लंघन करे और उस पर कोई कार्रवाई न हो, तो विपक्षी चाहे जितने दांव-पेंच चल लें, क्या फर्क पड़ेगा।

> जीत के बाद श्री मोदी का अभिनंदन मखाने की बड़ी सी माला पहना कर किया गया। ध्यान रहे कि मखाना भी इस बार चुनाव का अहम मुद्दा रहा। अमीरों के लिए जो मखाना सुपर फूड कहा जा रहा है, उसे उपजाने वाले किसानों की जो दुर्दशा है, उसे समझने के लिए राहुल गांधी मखाना किसानों के साथ तालाब में उतरे थे। लेकिन अब भाजपा यह साबित करने में लगी है कि किसानों ने राहुल नहीं मोदी को चुना है।

प्रधानमंत्री मोदी ने जीत के जश्न में प्रतीकों के इस्तेमाल और विपक्ष पर तंज कसने के अलावा अपने भाषण का एक बड़ा हिस्सा कांग्रेस को समर्पित किया। जिससे समझ आता है कि कांग्रेस को लेकर उनका डर अब तक गया नहीं है। जब तक राहुल गांधी कांग्रेस पार्टी के कद्दावर नेता बने रहेंगे, नरेन्द्र मोदी चैन से अपनी सत्ता का मजा नहीं लूट पाएंगे। नरेन्द्र मोदी ने अपने भाषण में कांग्रेस के विभाजन की भविष्यवाणी ही कर दी। उन्होंने कहा कि- 'कांग्रेस के नामदार जिस रास्ते पर पार्टी को लेकर चल रहे हैं, उसके प्रति घोर निराशा और घोर नाराजगी अंदर ही अंदर पनप रही है।' पाठक जानते हैं कि राहुल गांधी का सीधा नाम नरेन्द्र मोदी कभी नहीं लेते। कभी शहजादे, कभी नामदार ऐसे ही उन पर निशाना साधते हैं। तो अब राहुल गांधी कांग्रेस को किस रास्ते पर ले जा रहे हैं, इससे नरेन्द्र मोदी फिक्रमंद हो रहे हैं। अगर वाकई राहुल के कारण कांग्रेस को नुकसान है, तब तो मोदी को खुश होना चाहिए। लेकिन मोदी भी जानते हैं कि राहुल के कारण ही कांग्रेस की ताकत बची है। वर्ना उसे भीतर ही भीतर तोड़ने वालों की कमी नहीं है। राहुल ही ऐसे नेता हैं, जिन्हें मोदी और उनके दोस्त अब तक डरा नहीं पाए हैं।

बहरहाल, मोदी ने कहा कि मुझे आशंका है कि आगे कांग्रेस का एक और बड़ा विभाजन होगा। कांग्रेस की राजनीति अब नकारात्मक राजनीति वाली हो गई है। पार्टी के शीर्ष नेतृत्व के रवैये की वजह से अंदर-अंदर ही एक नया गुट उभर सकता है। साथ ही उसके सहयोगी भी अब दूरी बनाना शुरू कर देंगे। क्योंकि कांग्रेस के सहयोगियों को भी समझ आ रहा है कि सभी को निगेटिव दिशा में ले जा रही है। कांग्रेस के नामदार खुद और दूसरों को भी डुबोने की प्रैक्टिस कर रहे हैं।'

नरेन्द्र मोदी ने कह दिया कि कांग्रेस का विभाजन होगा तो अब मीडिया भी इसके पिष्टपेषण में लग गया है। भाजपा का समर्थित मीडिया है, तो उसे वही नैरेटिव बनाना होगा जो मोदी चाहते हैं। कांग्रेस का भविष्य क्या होगा, इसकी चिंता कांग्रेसियों से ज्यादा भाजपा और मीडिया को होने लगी है। दरअसल इन्हें अल्लामा इकबाल के तराने की पंक्तियां पढ़ने की जरूरत है कि-

कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी,
सदियों रहा है दुश्मन दौर-ए-ज़मां हमारा।

28 दिसंबर 1885 को स्थापित कांग्रेस एक नहीं कई बार टूट देख चुकी है और कई बार पार्टी से सारे पद और सुविधाएं हासिल करने वाले लोग सत्ता की खातिर उसे छोड़कर जा चुके हैं। ज्योतिरादित्य सिंधिया, मिलिंद देवड़ा जैसे नाम हाल की मिसालें हैं। मोदी को पता होना चाहिए कि राहुल गांधी के ग्रेट ग्रैंड फादर यानी पर-परनाना मोतीलाल नेहरू ने सबसे पहले 1922 में कांग्रेस को तोड़ा था। उन्होंने चितरंजन दास के साथ मिलकर नई पार्टी का गठन किया, जिसे स्वराज पार्टी का नाम दिया गया। इसके बाद, सुभाषचंद्र बोस ने 1939 में अखिल भारतीय फारवर्ड ब्लाक के नाम से अलग पार्टी बनाई। जेबी कृपलानी ने 1951 में कांग्रेस से अलग होकर किसान मजदूर प्रजा पार्टी का गठन किया था। 1956 में सी राजगोपालाचारी ने कांग्रेस छोड़कर इंडियन नेशनल डेमोक्रेटिक पार्टी का गठन किया। 1959 में बिहार, राजस्थान, गुजरात और ओडिशा में कांग्रेस में टूट हुई थी। 1964 में केएम जार्ज ने केरल में कांग्रेस को तोड़कर केरल कांग्रेस के नाम से नई पार्टी बनाई। 1967 में चौधरी चरण सिंह ने कांग्रेस से अलग होकर भारतीय क्रांति दल का गठन किया, जो बाद में लोकदल के नाम से जाना गया।

इंदिरा गांधी को कांग्रेस ने 12 नवंबर 1969 को पार्टी से बर्खास्त कर दिया, जिसके बाद इंदिरा गांधी ने कांग्रेस (आर) के नाम से नई पार्टी का गठन किया, जिसे बाद में कांग्रेस (आई) के नाम से जाना गया। अभी यही भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस बनी है। वीपी सिंह ने 1984 में इंदिरा गांधी की हत्या के बाद पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गांधी के खिलाफ हो गए और उन्होंने जनमोर्चा के नाम से अपनी नई पार्टी बनाई। बाद में जनमोर्चा से ही जनता दल, जनता दल (यू), राजद और समाजवादी पार्टी का जन्म हुआ। 1999 के आसपास कांग्रेस में सोनिया गांधी के नाम पर फिर से बगावत हुई। तब शरद पवार ने राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी, ममता बनर्जी ने तृणमूल कांग्रेस बनाई।

पिछले पंजाब चुनाव के वक्त अमरिंदर सिंह ने पंजाब लोक कांग्रेस नाम से पार्टी बनाई। अब इसका विलय भाजपा में कर लिया गया है। गुलाम नबी आजाद ने भी कांग्रेस का साथ छोड़ा और डेमोक्रेटिक प्रगतिशील आज़ाद पार्टी बनाई। एनसीपी, टीएमसी के अलावा अब अन्य दिग्गजों की पार्टियों का क्या हाल है, यह सबको पता है। जिन लोगों ने भाजपा से हाथ मिला लिया या उसके सामने घुटने टेक दिए, वे किसी तरह राजनीति में अपनी प्रासंगिकता बनाए हुए हैं, अन्यथा बाकियों का न अस्तित्व बचा है, न साख। लेकिन 2014 से सत्ता से बाहर कांग्रेस अब भी भाजपा के लिए बड़ी चुनौती बनी हुई है, तो यह उसकी संविधानपरक, लोकतांत्रिक राजनीति के कारण ही है। राहुल गांधी से कांग्रेस को कितना फायदा हो रहा है या नुकसान पहुंच रहा है, यहां यह सवाल है ही नहीं। बल्कि असली सवाल तो यह है कि मोदी को राहुल गांधी से इतना डर क्यों लग रहा है।

# शेख हसीना को न्यायाधिकरण द्वारा मृत्युदंड दिए जाने के बाद बांग्लादेश में नई उथल-पुथल

**■ नित्य चक्रवर्ती**

बांग्लादेश में सोमवार, 17 नवंबर को एक नई उथल-पुथल मच गई, जब बांग्लादेश के अंतरराष्ट्रीय अपराध न्यायाधिकरण (आईसीटी) ने पूर्व बांग्लादेशी प्रधानमंत्री शेख हसीना को पिछले साल के छात्र-नेतृत्व वाले आंदोलन, जिसके कारण 5 अगस्त, 2024 को उनकी अवामी लीग सरकार गिर गई थी, के दौरान किए गए 'मानवता के विरुद्ध अपराधों' के लिए मृत्युदंड की सजा सुनाई।

मुख्य सलाहकार डॉ. मुहम्मद यूनुस के नेतृत्व वाली बांग्लादेश की अंतरिम सरकार द्वारा गठित आईसीटी ने शेख हसीना पर दो अन्य मामलों में भी अभियोग लगाया। फैसला अपेक्षित ही था। शेख हसीना, जो पिछले साल 5 अगस्त की दोपहर से भारत में रह रही हैं, चुनौती देने के मूड में थीं। उन्होंने कहा कि न्यायाधिकरण में धांधली की गई थी। उन्होंने हर आरोप का खंडन किया और अवामी लीग और खुद को अपना बचाव करने का उचित मौका न देने के लिए ट्रिब्यूनल की कड़ी आलोचना की।

> मुख्य सलाहकार डॉ. मुहम्मद यूनुस के नेतृत्व वाली बांग्लादेश की अंतरिम सरकार द्वारा गठित आईसीटी ने शेख हसीना पर दो अन्य मामलों में भी अभियोग लगाया। फैसला अपेक्षित ही था। शेख हसीना, जो पिछले साल 5 अगस्त की दोपहर से भारत में रह रही हैं, चुनौती देने के मूड में थीं। उन्होंने कहा कि न्यायाधिकरण में धांधली की गई थी।

आक्रामक मुद्रा में, शेख हसीना ने अपने बयान में कहा, 'इस फैसले ने एक अनिर्वाचित सरकार, जिसके पास कोई लोकतांत्रिक जनादेश नहीं है, पर चरमपंथियों के निर्लज्ज और जानलेवा इरादे उजागर कर दिए हैं।' उन्होंने यूनुस सरकार पर यह आरोप भी लगाया कि वर्तमान प्रशासन के अंदर मौजूद इस्लामी चरमपंथी, जिनमें हिज्बुल्लाह ताहिर के नेता भी शामिल हैं, बांग्लादेश की धर्मनिरपेक्ष सरकार की मज़बूत परंपरा को कमज़ोर करना चाहते हैं।'

सोमवार का घटनाक्रम बांग्लादेश में फरवरी 2026 में होने वाले आम चुनावों से तीन महीने से भी कम समय पहले हुआ है। हालांकि, चुनाव आयोग द्वारा सटीक तारीख की घोषणा जल्द ही की जाएगी, लेकिन अंतरिम सरकार प्रमुख ने पिछले गुरुवार को घोषणा की थी कि आम चुनाव और जुलाई चार्टर पर जनमत संग्रह, दोनों फरवरी में एक ही दिन होंगे। प्रतिबंधित अवामी लीग को छोड़कर सभी राजनीतिक दल चुनावी जंग में पूरी तरह से व्यस्त हैं क्योंकि सोमवार दोपहर यह फैसला आया।

दिन भर सुरक्षा स्थिति तनावपूर्ण रही क्योंकि अवामी लीग ने ढाका और अदालत के आसपास के इलाकों में तालाबंदी का आह्वान किया था। देश की राजधानी के सभी महत्वपूर्ण स्थानों पर सेना की चौकियां तैनात की गईं। छिटपुट विस्फोट और बम हमले हुए। हसीना पिछले कुछ हफ़्तों से सक्रिय हैं और सूत्रों के अनुसार, अवामी लीग के समर्थक, जिनमें पहले छिपे हुए नेता भी शामिल हैं, प्रदर्शनों और बंद में भाग लेने के लिए बाहर आ रहे हैं। ऐसा लगता है कि उन्होंने सार्वजनिक रूप से अपनी ताकत दिखाने का फैसला किया है। अवामी लीग के लिए, इस फैसले के बाद, उनके सदस्यों को नए हमलों का सामना करना पड़ेगा और उन्हें इस चुनौती का सामना करना होगा।

परिणामस्वरूप, आने वाले कुछ हफ़्ते तूफ़ानी होने वाले हैं, हालांकि बीएनपी, जमात-ए-इस्लामी, एनसीपी और अन्य प्रमुख राजनीतिक दल अपने उम्मीदवार चुनने और चुनाव प्रचार में व्यस्त रहेंगे। एक निजी एजेंसी द्वारा आगामी चुनावों के बारे में हाल ही में किए गए एक जनमत सर्वेक्षण से पता चला है कि अवामी लीग को, समर्थन के बावजूद, बीएनपी से लगभग 20 प्रतिशत कम समर्थन प्राप्त है। अन्य पार्टियां उससे काफ़ी नीचे हैं। इससे अवामी लीग समर्थकों का मनोबल बढ़ा है, लेकिन साथ ही, विभाजित लीग-विरोधी राजनीतिक दल भयभीत हो रहे हैं और अवामी लीग के किसी भी नए कदम के खिलाफ़ एक साझा रुख अपनाने की कोशिश कर रहे हैं।

ज़मीनी स्तर पर जहां बांग्लादेश में स्थिति और भी उथल-पुथल भरी हो गई है, वहीं भारत, ख़ासकर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के लिए यह चुनौती और भी कठिन हो गई है। शेख हसीना को मृत्युदंड के फ़ैसले से निपटना और उन्हें भारतीय धरती से अपना चुनाव प्रचार जारी रखने की अनुमति देना, नरेंद्र मोदी के लिए सबसे बड़ी कूटनीतिक चुनौती होगी। शेख हसीना हाल के हफ़्तों में यूनुस सरकार के ख़िलाफ़ प्रचार और बयानबाज़ी कर रही हैं। भारत सरकार के मौन समर्थन के बिना यह संभव नहीं हो सकता था। इससे पहले, बांग्लादेश सरकार ने कई बार भारत से अनुरोध किया था कि वह शेख हसीना को यूनुस सरकार के खिलाफ अपनी राजनीतिक कार्रवाइयों के लिए भारतीय धरती का इस्तेमाल न करने दे। लेकिन मोदी सरकार ने इस पर कोई ध्यान नहीं दिया। अब हसीना का इस फैसले और आईसीटी के खिलाफ ताजा बयान दे रही हैं।

भारत इस समय शेख हसीना को बांग्लादेश को नहीं सौंप सकता, हालांकि बांग्लादेश अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारत पर शेख हसीना को बांग्लादेश को सौंपने के लिए अधिकतम कूटनीतिक दबाव डालेगा। पाकिस्तान और कुछ अन्य मुस्लिम देश इस मामले में बांग्लादेश का समर्थन कर सकते हैं। भारत को इस तरह के अंतरराष्ट्रीय दबाव के लिए तैयार रहना होगा। डॉ. यूनुस के लिए, यह अपनी कट्टर दुश्मन शेख हसीना से मुकाबला करने का एक सुनहरा अवसर है। वह शेख हसीना को भारत से निर्वासित करने के लिए हर संभव प्रयास करेंगे। उनकी राजनीतिक महत्वाकांक्षाएं हैं, हालांकि वह सार्वजनिक रूप से ऐसा नहीं दिखाते। अगर वह आम चुनावों से पहले अपने प्रयास में सफल हो जाते हैं, तो डॉ. यूनुस फरवरी के चुनाव के बाद नई सरकार के राष्ट्रपति पद के लिए बांग्लादेशी राजनीतिक दलों के स्वीकृत नेता हो सकते हैं।

शेख हसीना को सोमवार को मृत्युदंड सुनाए जाने के बाद स्थिति नाजुक बनी हुई है। इस स्थिति से केवल हमारे प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की असाधारण कूटनीतिक कुशलता ही भारत को बचा सकती है। यह पूरी तरह से नरेंद्र मोदी पर निर्भर करता है कि वे राष्ट्रीय सुरक्षा के संदर्भ में भारत के सर्वोत्तम हितों को ध्यान में रखते हुए इस नाजुक स्थिति से कैसे निपटते हैं। अगले कुछ सप्ताह भारतीय कूटनीति के लिए महत्वपूर्ण हैं।

## ललित सुरजन की कलम से

### 21 वीं सदी में जनतंत्र!

*हैदराबाद के तकनीकीविद् एम. विजय कुमार ने तर्क रखा कि विकेंद्रीकरण और जनतंत्रीकरण दो अलग-अलग बातें हैं। विकेंद्रीकरण एक सीमित प्रक्रिया है जबकि जनतंत्रीकरण का दायरा व्यापक है। उन्होंने यह आशंका भी व्यक्त की कि आज की प्रौद्योगिकी कहीं अधिनायकवादी प्रवृत्ति को बढ़ावा देने का काम तो नहीं कर रही? गोवा के डॉ. ईश्वर सिंह दोस्त का भी प्रश्न था कि- विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विकास से होने वाला लाभ अंतत- कौन उठा रहा है। दिल्ली के वैज्ञानिक डॉ. सोमा एस. मार्ला ने नवउदार पूंजीवाद की चर्चा करते हुए कुछ मौजूं प्रश्न सामने रखे जैसे कि टेक्नालॉजी के विकास से श्रमिकों को क्या लाभ मिला है? क्या इससे अमीर और गरीब के बीच की खाई बढ़ी है? क्या इससे श्रमिक समुदाय का जीवनस्तर बेहतर हुआ है? उन्होंने यह भी बताया कि आज दुनिया के दो तिहाई से यादा वैज्ञानिक बहुराष्ट्रीय निगमों के लिए काम कर रहे हैं।*

**(देशबन्धु में 06 फरवरी 2014 को प्रकाशित)**

https://lalitsurjan.blogspot.com/2014/02/21.html

## पावन प्रसंग

### वर्तमान समय ही वास्तविक समय

हम प्राय: या तो अतीत की अच्छी-बुरी, खट्टी-मीठी स्मृतियों में खोए रहते हैं या आने वाले समय की कल्पना में रमे रहते हैं या यह सोचते रहते हैं कि अभी बहुत समय है, हम फलां काम थोड़ी देर बाद कर लेंगे और इस प्रकार काम को टालते रहते हैं और वर्तमान समय को अपने हाथ से निकल जाने देते हैं। यह वास्तव में समय की उपेक्षा है, क्योंकि वर्तमान ही हमारे हाथ में है। हमारे हाथ में न तो अतीत है न ही भविष्य। अस्तु, वर्तमान ही वास्तविक समय है।

जिन्होंने इसे समझ लिया, पहचान लिया तो फिर वे न तो आलस्य प्रमाद में समय बर्बाद कर सकेंगे, न ही वर्तमान को हाथ से निकल जाने देंगे।

महात्मा गांधी भी समय को बहुत मूल्यवान कहा करते थे। दांडी यात्रा के समय की बात है। गांधीजी तेज-तेज कदमों से चलते जा रहे थे। उनका ध्यान लक्ष्य की ओर था। सभी के बहुत आग्रह करने पर वे थोड़ी देर के लिए एक स्थान पर रुक गए। तभी एक अंग्रेज व्यक्ति उनसे मिलने आया। गांधीजी को देखकर वह बोला- हैलो मिस्टर गांधी। मेरा नाम वाकर है।

गांधीजी बोले-आप वाकर हैं, तो मैं भी वाकर हूं। (यानी सदैव चलने वाला)। प्रत्युत्तर में इतना कहकर वे अपनी यात्रा पर आगे चल पड़े। तभी एक व्यक्ति उनके पास आया और बोला- आपको उनसे मिल लेना चाहिए था। पता है वे कौन थे? अगर आपका नाम तमाम अखबारों में उनके साथ छपता तो आप प्रसिद्ध हो जाते।

गांधीजी ने प्रत्युत्तर में बोले- मेरे लिए प्रसिद्धि से अधिक कीमती मेरा समय है। जब व्यक्ति समय के मूल्य को समझ लेता है, पहचान लेता है तभी वह अपने वर्तमान समय का सदुपयोग कर पाता है। समय किसी का दास नहीं। वह अपनी गति से चलता जाता है, बहता जाता है। जो समय के प्रवाह में प्रवाहित होता रहता है अर्थात पल-पल पराक्रम में लगाता जाता है, उसे दुनिया की कोई भी ताकत मंजिल पाने से रोक नहीं सकती। उसे उसकी मंजिल मिल कर रहती है।

कल्याण साधना के कार्य जो कल करने हैं, उन्हें आज ही कर लो। पता नहीं पल भर में क्या हो जाए। फिर कब करोगे। हम धर्म-अध्यात्म, शिक्षा, चिकित्सा, खेल उद्योग, व्यापार, कृषि, विज्ञान आदि किसी भी क्षेत्र में सफलता के शिखर तक पहुंचने के बड़े-बड़े सपने देखें, वह अनिवार्य है, क्योंकि आपका सपना ही आपका लक्ष्य बनता है और लक्ष्य निर्धारण करना आवश्यक है पर बड़े सपने देखना ही पर्याप्त नहीं होता, बल्कि उन बड़े सपनों को पूरा करने के लिए बड़े पुरुषार्थ किया जाना भी आवश्यक है। बड़े सपने बड़े-बड़े पुरुषार्थ से ही पूर्ण होते हैं। अपनी समस्त शारीरिक, मानसिक ऊर्जा को अपने बड़े सपनों को पूरा करने में लगाना अनिवार्य भी है और आवश्यक भी।

**-अखंड ज्योति**

## आपके पत्र

### क्या आर्थिक दंड ही हरित भविष्य का मार्ग बना सकता है?

भारत विश्व के उन देशों में है जहां वायु, जल और मिट्टी का प्रदूषण तीव्र स्वास्थ्य संकट का रूप ले चुका है। विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा जारी सबसे प्रदूषित नगरों की सूची में भारत के अनेक नगर शामिल हैं। जल-प्रदूषण से प्रतिवर्ष लाखों लोग रोगग्रस्त होते हैं। दूसरी ओर, स्वच्छ ऊर्जा, हरित अवसंरचना और प्रदूषण नियंत्रण हेतु सरकार के पास पर्याप्त वित्तीय संसाधन नहीं। ऐसे समय में 'प्रदूषण कर'—अर्थात प्रदूषण फैलाने पर आर्थिक दंड—को एक समुचित समाधान के रूप में देखा जा रहा है, क्योंकि इससे प्रदूषण में कमी और पर्यावरण-रक्षा के लिए स्थायी राजस्व दोनों प्राप्त हो सकते हैं।

प्रदूषण कर का विचार नया नहीं, परन्तु इसकी आवश्यकता आज पहले से कहीं अधिक है। अर्थशास्त्र में यह माना जाता है कि जब कोई उद्योग, वाहन या गतिविधि प्रदूषण फैलाती है तो उसका दुष्परिणाम पूरे समाज को भुगतना पड़ता है, न कि केवल उसे जो प्रदूषण फैला रहा है। यह बाज़ार व्यवस्था की वह गंभीर विफलता है जिसे बाह्य लागत कहा जाता है—अर्थात नुकसान तो समाज को होता है, पर उसका मूल्य न तो वस्तु की कीमत में जुड़ता है, न ही प्रदूषण फैलाने वाला उसे भरता है। ऐसे में 'प्रदूषण कर' इसी असंतुलन को सुधारने का प्रयास करता है, जहां जो जितना अधिक प्रदूषण फैलाए, वह उतनी अधिक आर्थिक कीमत चुकाए।

वैश्विक स्तर पर भी प्रदूषण कर का महत्व बढ़ रहा है। कई विकसित देश अब उन आयातित वस्तुओं पर अतिरिक्त शुल्क लगा रहे हैं जो अधिक प्रदूषणकारी स्रोतों से बनती हैं। यदि भारत घरेलू स्तर पर प्रदूषण पर उचित कर लागू करता है, तो भारतीय निर्यातकों को विदेशी बाज़ारों में अतिरिक्त शुल्क से राहत मिल सकती है। इस प्रकार प्रदूषण कर केवल पर्यावरण-हित में नहीं, बल्कि भारत की निर्यात प्रतिस्पर्धा की रक्षा में भी सहायक सिद्ध हो सकता है। परंतु इन सबके बीच सबसे बड़ा प्रश्न यह उठता है कि क्या प्रदूषण कर गरीबों पर भारी पड़ सकता है? यह चिंता बिल्कुल वास्तविक है। यदि ईंधन और बिजली की लागत बढ़ेगी, तो उसके साथ ही परिवहन, खाद्य पदार्थ और आवश्यक वस्तुओं की कीमतें भी बढ़ सकती हैं। इसका सीधा प्रभाव निम्न-आय वर्ग पर पड़ता है, जिनके पास विकल्प सीमित होते हैं। इसलिए प्रदूषण कर को न्यायपूर्ण बनाने के लिए यह अनिवार्य होगा कि निम्न-आय वाले परिवारों को प्रत्यक्ष नकद सहायता, ऊर्जा सब्सिडी और रसोई गैस जैसी आवश्यकताओं पर राहत दी जाए।

उद्योग जगत की चिंताएं भी कम नहीं। विशेषकर सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्योग ऊर्जा-प्रधान होते हैं और किसी भी अतिरिक्त कर का प्रभाव उनकी लागत पर पड़ता है। अत: प्रदूषण कर को चरणबद्ध ढंग से लागू करना होगा—पहले बड़े उद्योगों पर, फिर धीरे-धीरे छोटे उद्योगों को तकनीकी और वित्तीय सहायता के साथ इस दायरे में लाना होगा। हरित मशीनरी पर अनुदान, ब्याज रहित ऋण, और तकनीकी उन्नयन के लिए मार्गदर्शन इस परिवर्तन को सुगम बना सकते हैं। प्रदूषण का सटीक मापन, डेटा की विश्वसनीयता और निगरानी तंत्र की पारदर्शिता अत्यंत आवश्यक होगी। छोटे उद्योगों और गैर-प्रमाणित स्रोतों की निगरानी आज भी चुनौतीपूर्ण है। यदि उत्सर्जन मापन ही विश्वसनीय न हो, तो कर प्रणाली पर विश्वास नहीं किया जा सकता। इसलिए भारत को आधुनिक सेंसर-तकनीक, कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित निगरानी, डिजिटल उत्सर्जन-पंजीकरण तथा रियल-टाइम निगरानी प्रणाली को मजबूत करना होगा।

**- डॉ. सत्यवान सौरभ**

https://t.me/AllNewsPaperSPaid1

*प्रकाशक, मुद्रक : राजीव रंजन श्रीवास्तव द्वारा पत्रकार प्रकाशन प्रा. लि. के लिए 506, आई.एन.एस. बिल्डिंग, 9, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित एवं बीएफएल इंफोटेक लि., सी 9, सेक्टर-3, नोएडा से मुद्रित। सम्पादक : राजीव रंजन श्रीवास्तव, (पी.आर.बी. एक्ट के तहत समाचार चयन के लिए जिम्मेदार)। आर.एन.आई. नं. DELHIN/2008/24216. दिल्ली कार्यालय :फोन: 011-23718195,23357784, फैक्स: 011-43581404, नोएडा कार्यालय: फोन: 0120-4114404 फैक्स: 0120-4273770*

*ई-मेल: deshbandhudelhi@gmail.com वेब: www.deshbandhu.co.in*

## चिंतन

# विस्तारवादी चीन से हमेशा सतर्क रहने की जरूरत

हिन्दी की बहुत पुरानी कहावत है, चोर चोरी से जाए पर हेराफेरी से न जाए। ये हमारे पड़ोसी चीन पर पूरी तरह से फिट बैठती है। चीन चाहे भारत का मित्र होने के हजार दावे करे, लेकिन सच्चाई यही है कि जब भी उसे मौका मिलता है, वो अपनी नापाक हरकत करने से बाज नहीं आता। उसकी ऐसी ही एक करतूत का खुलासा अमेरिकी रिपोर्ट में हुआ है। इसमें दावा किया गया है कि आपरेशन सिंदूर के दौरान चीन ने राफेल की बिक्री रोकने के लिए फर्जी कैंपेन चलाया था। भारत और पाकिस्तान के बीच हुए सैन्य संघर्ष के तुरंत बाद चीन ने फर्जी सोशल मीडिया अकाउंट्स के जरिए राफेल गिराने का दावा किया। चीन ने भारत-पाकिस्तान युद्ध के दौरान हर संभव प्रयास किया कि किसी भी तरह से दुनिया के हथियारों को बेकार बताकर अपने जंगी जहाज बेचे जा सकें। एआई से बनाई गई नकली तस्वीरें फैलाई गईं, जिनमें दावा किया गया कि भारतीय राफेल को चीन के हथियारों ने गिराया है और यह उसके मलबे की तस्वीरें हैं। इशारा साफ था कि फ्रांस का राफेल चीन के जे-35 के सामने धराशायी हो गया। राफेल विमान फ्रांस की दसॉ एविएशन द्वारा बनाया गया दो इंजन वाला लड़ाकू विमान है। ये एक मिनट में 60,000 फीट की ऊंचाई तक पहुंच सकता है। इसकी रेंज 3700 किलोमीटर है। साथ ही यह 2200 से 2500 किलोमीटर प्रति घंटे की रफ्तार से उड़ सकता है। सबसे खास बात ये है कि इसमें मॉडर्न 'मिटिअर' मिसाइल और इजराइली सिस्टम भी है। जो दुश्मन की किसी भी हरकत का जवाब देने में सक्षम है, लेकिन चीन ने नकली वीडियो से इसे बेकार सबित करने का प्रयास किया। असल में चीन हर वो संभव प्रयास करता है, जिससे उसे आर्थिक रूप से लाभ हो। अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप द्वारा दुनियाभर के देशों पर लगाए गए टैरिफ के बाद चीन-भारत के संबंधों में कुछ हद तक सुधार हुआ है। अब भी अहम सवाल यही है कि क्या चीन का भारत के प्रति वाकई कोई हृदय परिवर्तन हुआ है और अगर ऐसा हुआ है तो इसका कारण क्या है। बीते 12 वर्षों से चीन पर राज करते हुए तानाशाह राष्ट्रपति शी चिनफिंग की मंशा पर ध्यान दें तो यह असंभव है कि उन्होंने एशिया और विश्व में चीन के वर्चस्व और विस्तारवाद का सपना रातोंरात त्याग दिया हो। चीन कभी भी अपनी विस्तारवादी मंशा को त्यागने को तैयार नहीं दिखता और पड़ोसी देशों के साथ विवादों में अपनी शक्ति एवं श्रेष्ठता के बलबूते हावी होने को कोशिश करता रहता है। भारत के अलावा एक दर्जन से अधिक देशों के साथ चीन के अनसुलझे क्षेत्रीय विवाद हैं और इन सभी के प्रति चीन ने दबंग व्यवहार अपनाकर धौंस दिखाता रहता है। शी जैसे कट्टर नेता का महाशक्ति बनने का महत्वाकांक्षी स्वप्न को भुला देना नामुमकिन सा है। चीन सपना केवल महाशक्ति बनाना ही नहीं, बल्कि अमेरिका को पछाड़कर विश्व का सबसे बड़ा दादा बनने की है। इसके बाद वो पूरी दुनिया को अपने हिसाब से चला सके। भारत एशिया में ही इसका सबसे बड़ा रोड़ा है। ऐसे में वो कब और कितना नुकसान कर दे, कुछ कहा नहीं जा सकता। इसलिए जरूरी है कि हम चीन को लेकर हमेशा सतर्क और सजग रहें और अपनी अर्थव्यवस्था को सेवा के साथ निर्माण क्षेत्र में भी गति दें तभी चीन से मुकाबला कर पाएंगे।

# शिक्षित वर्ग को शिकार बना रहे आतंकी

**आतंकवाद**
योगेश कुमार सोनी

> आतंकवादियों के सभी हमलों ने यह तो दर्शा दिया कि उनका नेटवर्क इतना मजबूत है कि वह अपने मंसूबों में हमेशा कामयाब हो जाते हैं। आतंकवादियों के लिए आतंक फैलाना हमेशा बड़ा व्यवसाय रहा है। उनके गुर्गों की ट्रेनिंग इतनी खतरनाक तरह से होती है कि वह अपनी जान की परवाह किए बिना किसी भी आतंकी घटना को अंजाम दे देते हैं। आतंकवादी संगठन मजहब के नाम पर हर रोज सैकड़ों युवाओं को दलदल में डालने का काम करते हैं। मजहब के नाम पर कुर्बान होने के लिए उनका जिस तरह माइंड वॉश किया जाता है वह बेहद आश्चर्यचकित करता है। सरकार को इसे समझते हुए बड़ी रणनीति की आवश्यकता है जिससे देशवासियों को धैर्य व विश्वास के साथ जिंदगी जीने को मिले।

देश में आजादी से लेकर आज तक आतंकवाद नहीं रुक सका है। हालांकि इस बात में कोई दोराय नहीं है कि आतंकवाद पर शिकंजा कसने का सभी सरकारों ने अथक प्रयास किया है। हमारे देश में वर्ष 1980 से लेकर आज तक लगभग 125 बड़े हमले हो चुके हैं जिसमें हजारों लोग बेमौत मारे गए हैं। आतंकवादियों के सभी हमलों ने यह तो दर्शा दिया कि उनका नेटवर्क इतना मजबूत है कि वह अपने मंसूबों में हमेशा कामयाब हो जाते हैं। दरअसल, आतंकवादियों के लिए आतंक फैलाना हमेशा एक बड़ा व्यवसाय रहा है। उनके गुर्गों की ट्रेनिंग इतनी खतरनाक तरह से होती है कि वह अपनी जान की परवाह किए बिना किसी भी आतंकी घटना को अंजाम दे देते हैं। आतंकवादी संगठन मजहब के नाम पर हर रोज सैकड़ों युवाओं को दलदल में डालने का काम करते हैं। मजहब के नाम पर कुर्बान होने के लिए उनका जिस तरह माइंड वॉश किया जाता है वह बेहद आश्चर्यचकित करता है।

दिनों दिल्ली में हुए हमले को अंजाम देने वाले डॉक्टर जैसे पढ़े-लिखे पेशे का इस्तेमाल किया और यह एक लंबी कतार निकली। दिल्ली लाल किला ब्लास्ट केस में शामिल आतंकी लखनऊ की डॉ. शाहीन सईद बीते दशकभर से पाकिस्तान के आतंकी संगठन जैश-ए-मोहम्मद से जुड़ी थी। नेशनल इन्वेस्टिगेशन एजेंसी के एक वरिष्ठ अधिकारी के अनुसार शाहीन 2015 में जैश से जुड़ी थी। एक डॉक्टर होने के बावजूद किसी के मन में इतना जहर कैसे हो सकता है। जबकि आप जिस देश में रह रहे हों और उसी देश के लिए इतनी बड़ी गद्दारी कर रहे हों। जांच में पता कि वर्ष 2021 में एक रिश्तेदार ने डॉ. शाहीन को पति, बच्चे और नौकरी छोड़ने पर जब टोका तो शाहीन ने कहा था- परिवार और नौकरी में क्या रखा है। अपने लिए बहुत जी लिए। अब कौम का कर्ज उतारने का समय है। इस वाक्य से बहुत कुछ तय हो जाता है चूंकि पूरी दुनिया में माना जाता है कि डॉक्टरी की पढ़ाई सबसे मुश्किल पढ़ाइयों में से एक है और वहीं दूसरी ओर यह लोगों की जान बचाने का भी पेशा है तो बेहद सम्मानित व पूजनीय भी है लेकिन बावजूद इसके, यदि ऐसे लोगों का मस्तिष्क बदला जा सकता है तो फिर किसी का भी संभव है। सवाल यही है कि आखिर इनके पास ऐसी कौन सी शक्ति है जो यह किसी को भी नियंत्रित कर लेती है। आखिर अमेरिका व अन्य शक्तिशाली देश भी इन पर नियंत्रण क्यों नहीं पा सके। आतंकी हमले में हमेशा आम आदमी ही मारा जाता रहा है और हजारों-लाखों लोग इसमें अपनी बिना वजह जान गंवा चुके। भारत सरकार ने अब तक 42 संगठनों को आतंकवादी संगठन घोषित किया है। हालांकि, विकिपीडिया के अनुसार दक्षिण एशिया आतंकवाद पोर्टल ने भारत में संचालित होने वाले 180 से अधिक आतंकवादी समूहों को सूचीबद्ध किया है, जिनमें से कुछ पड़ोसी देशों में भी सक्रिय हैं। इस खेल में आश्चर्य की बात यह भी है कि हमारे देश में बैठे कुछ आस्तीन के सांप खुलेआम समर्थन भी करते हैं। कुछ वर्ष पूर्व जाकिर नाईक जैसे फर्जी धर्मगुरुओं ने धर्म परिवर्तन की खुले आम दुकान खोलकर लाखों युवाओं को आतंकवाद में धकेलने का काम किया। वहीं छांगुर बाबा जैसा फर्जी बाबा आतंकवाद समर्पित निकला और वह धर्मांतरण का बहुत बड़ा रॉकेट चला रहा था। हालांकि ऐसे और भी

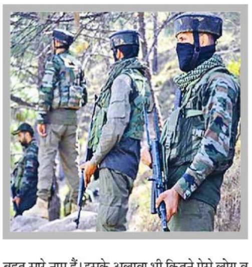

बहुत सारे नाम हैं। इसके अलावा भी कितने ऐसे लोग व संगठन हो सकते हैं जो आतंकवादी संगठनों के लिए काम कर रहे हों। इस बात को समझने में हमें कोई शक नहीं है कि हर सरकार आतंकवाद पर शिकंजा कसने के लिए हर अथक प्रयास करती है और पूरी निगरानी भी रखती है लेकिन सवाल यही उठता है कि आखिर आतंकवादी तकनीकी रूप से विश्व की बड़ी-बड़ी एजेंसियों से इतना अपडेट व अपग्रेड हैं कि इनके इरादों की भनक तक भी नहीं लग पाती। भारत के परिवेश में विशेषज्ञों का मानना है कि यहां लगातार जनसंख्या बढ़ रही है जिसको नियंत्रित करने के लिए पुलिस व सभी तरह की एजेंसी बल इतना नहीं है कि वह निगरानी रख सकें। भारत जैसे देश पर तो सभी कट्टर इस्लामिक आतंकवादी संगठनों की निगाह है।

हाल ही में हरियाणा के फरीदाबाद स्थित अल-फलाह यूनिवर्सिटी वाले प्रकरण से देश में एक नकारात्मक संदेश गया। तीन संदिग्ध डॉक्टरों की वजह से बहुत सारे सही विद्यार्थियों पर भी गाज गिर रही है और अब यूनिवर्सिटी की मान्यता भी रद्द कर दी गई है। साथ ही अब जितनी भी इस्लामिक यूनिवर्सिटी हैं, उनको भी शक के घेरे में लिया जा रहा है। आतंकवादी जिस ट्रैक पर काम करते हैं वह बेहद आश्चर्य में डाल देता है। चूंकि उसके लिए जो लोग काम करते हैं वह शिक्षित वर्ग होता है और कोई भी जांच एजेंसी एकाएक ऐसे लोगों पर शक नहीं करती जिसका वह जमकर फायदा उठाते हैं। इस घटना से देश में सभी मुस्लिम डॉक्टरों को भी सही निगाह से भी नहीं देखा जा रहा जबकि हर कोई एक जैसा नहीं होता। चूंकि डॉक्टरों का धर्म, फर्ज व कर्तव्य मरीजों को इलाज देना व जान बचाना होता है लेकिन यदि उस रूप में भी जिहादी निकल जाए तो इसमें तो उसके अलावा किसी की भी गलती नहीं मानी जा सकती। अब विश्व के नेताओं व जांच एजेंसियों को सबसे पहले यह समझना होगा कि आखिर आतंकी संगठन कैसे लोगों के मस्तिष्क को नियंत्रित करके उनको काबू करते हैं व साथ यह भी समझना होगा कि इनका संपर्क साधने का तरीका क्या है। यह किस तरह के लोगों को टारगेट करते हैं। चूंकि एक कहावत है कि 'चोर नही चोर की मां को पकड़ो' तो सब पता चल जाता है। दरअसल सोशल मीडिया के दौर में संपर्क साधना बहुत आसान हो गया है और आतंकवादी संगठन इसका जमकर फायदा उठा रहे हैं।

इस खेल के चक्रव्यूह को भेदना आसान तो नहीं हैं लेकिन असंभव भी नहीं हैं। ऐसे लोगों की सोशल मीडिया गतिविधियों पर ध्यान रखने के लिए अधिक बल की जरूरत है और साथ में तकनीकी भी मजबूत होना पड़ेगा। बाकी जहां शक की गुंजाइश कम या न हो, वहां तुरंत प्रभाव के साथ सक्रियता दिखानी चाहिए। जो लोग सोशल मीडिया पर देश विरोधी एजेंडा चला रहे हों, उन पर सबसे पहले कार्यवाही होनी चाहिए। चूंकि वह अपने फॉलोवर्स को गलत संदेश प्रेषित करके समाज में तो जहर घोलने का काम करते ही हैं, साथ में उनकी अनैतिक गतिविधियों में लिप्त होने की आशंका बढ़ जाती है। बाकी लोगों को यह समझना होगा कि यह देश उनका भी है इसलिए उससे गद्दारी करके हम आने वाली पीढ़ी को भी गलत संदेश दे रहे हैं। यदि आतंकवाद इतना सरल हो जाएगा तो यह मानव जीवन पर प्रहार के रूप में काम करेगा। हमने आज तक बहुत सारे परिवारों को उजड़ते देख लिया और यह ही लगता है कि आखिर उन बेगुनाहों का क्या कसूर है जो हर बार बिना वजह बेमौत मारे जाते हैं। सरकार को इस पीड़ा को समझते हुए एक बहुत बड़ी रणनीति की आवश्यकता है जिससे कि देशवासियों को धैर्य व विश्वास के साथ जिंदगी जीने को मिले, चूंकि हर कोई सबसे पहले सुरक्षा चाहता है।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं, ये उनके अपने विचार हैं।)

लेख पर अपनी प्रतिक्रिया haribhoomi@gmail.com पर दे सकते हैं।

## सियासत
विवेक शुक्ला

# बिहार चुनाव : चाणक्य की जीत, महागठबंधन की हार

बिहार विधान सभा के नतीजे आने के बाद से ही केन्द्रीय गृह मंत्री अमित शाह के राजधानी दिल्ली स्थित आवास में राज्य की नई सरकार के गठन के सवाल पर एनडीए के नेताओं के बीच बैठकों के दौर जारी है। बिहार में नीतीश कुमार के नेतृत्व में नई सरकार 20 नवंबर को पदभार संभाल लेगी। बिहार विधान सभा के चुनाव परिणाम पर भी कुछ समय तक और बहस जारी रहने वाली है। अब मुख्य रूप से इस मुद्दे पर बहस हो रही है कि क्या प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के सामने किसी का भी चुनाव जीतना अब नामुमकिन है? ज्यादातर राजनीतिक पंडितों की राय यह बन रही है कि बीजेपी और प्रधानमंत्री मोदी को हराना नामुमकिन नहीं भी है तो यह मुश्किल जरूर है। एक बात साफ है कि भाजपा के लिए चुनाव तैयारी कोई पार्ट टाइम गेम नहीं है, बल्कि यह जनता से जुड़े रहने और मुद्दों के आसपास पार्टी को तैयार रखने का सतत अभियान है। भाजपा की जिस चुनावी रणनीति का लोग आज लोहा मान रहे हैं, उसे विकसित करने और उसकी धार बनाए रखने की जिम्मेदारी स्वयं गृह मंत्री अमित शाह निभाते हैं। बिहार में महागठबंधन के नेताओं जैसे राहुल गांधी, तेजस्वी यादव, प्रियंका गांधी और अन्य नेता जनता को अपने साथ जोड़ने में एक सिरे से विफल रहे। राहुल गांधी तो वोट चोरी के आरोप लगाने के अलावा अब सब कुछ भूल गए। अगर उनके पास कोई ठोस सुबूत हैं तो वे कोर्ट में क्यों नहीं जाते। पहले वे ईवीएम में गड़बड़ी का रोना रोते थे। बहरहाल, बिहार में भी एनडीए की इस चुनावी जीत के सूत्रधार अमित शाह बने हैं, जिन्होंने महागठबंधन के किसी भी पैतरे को चलने नहीं दिया और राहुल- तेजस्वी की जोड़ी को करारी शिकस्त दे दी। 2010 के बाद भाजपा फिर से 90 प्रतिशत की स्ट्राइक रेट के साथ 89 सीटें जीतने में कामयाब रही और इस बार बिहार विधान सभा में सबसे बड़ी पार्टी भी बन गई। जबकि कांग्रेस के लिए चुनाव परिणाम शर्मनाक स्तर का है और आरजेडी 2010 की स्थिति में पहुंच गई है। बीजेपी नेतृत्व को बिहार की नब्ज पर पकड़ का अंदाज था। खासकर अमित शाह ने अपनी तीन महीने के धुआंधार दौरे से यह अंदाज लगा लिया था कि जनता क्या चाहती है और उसी के अनुसार जब केंद्र और राज्य सरकार ने बिहार की जनता की अपेक्षाओं को पूर्ण करने का काम पूरा किया, तो जनता गदगद हो उठी। अमित शाह पहले नेता थे जिन्होंने एक चुनावी रैली में ही यह ऐलान कर दिया था कि इस बार एनडीए 160 से ज़्यादा सीटें जीतेगा और बिहार में सरकार बनाएगा। फिर अंतिम चरण के मतदान से कुछ ही दिन पहले एक रैली में, शाह ने फिर घोषणा की कि 14 नवंबर को राजद और कांग्रेस परिवारों के राजनीतिक सफाए का दिन होगा। यदि अमित शाह ने चुनावी सफलता का कोई रिकार्ड बनाया है, तो इसके पीछे उनका अनथक परिश्रम है। पार्टी में रणनीति और उस पर क्रियान्वयन के लिए पूरी तरह से समर्पित कार्यकर्ताओं के निर्माण की एक बड़ी प्रक्रिया है। अमित शाह न सिर्फ इस प्रक्रिया के निर्माण और संचालन की जिम्मेदारी उठाते हैं, बल्कि कार्यकर्त्ताओं और निचले स्तर पर काम कर रहे भाजपा नेताओं और गठबंधन सहयोगियों में विश्वास का भाव भी पैदा करते हैं। दूसरी तरफ राहुल और तेजस्वी अकेले चने की तरह भाड़ फोड़ने में लगे थे। कांग्रेस की तरफ से प्रियंका के अलावा किसी बड़े नेता की उपस्थिति महसूस ही नहीं की गई और तेजस्वी अपने घर के असंतोष को भी खत्म नहीं कर सके। अमित शाह ने स्वयं बिहार में 35 रैलियों को संबोधित किया और एक बड़े रोड शो का नेतृत्व किया। वह केवल भाषणों और रैलियों तक खुद को सीमित नहीं करते, बल्कि बूथ स्तर तक अपनी उपस्थिति बनाए रखते हैं। इससे पार्टी के साथ कार्यकर्ताओं का एक मज़बूत जुड़ाव होता है और फिर बूथ कार्यकर्ता भी अधिकतम वोट हासिल करने के लिए भरपूर मेहनत करता है। कांग्रेस का संगठन बिहार में भी गायब है और केवल गाली गलौच की सुर्खियों तक ही सीमित है। अमित शाह को भाजपा का 'चाणक्य' कहा जाता है, और बिहार में उनकी भूमिका निर्णायक साबित हुई। जीत के बाद शाह ने कहा कि यह जनादेश विकास, महिलाओं की सुरक्षा, सुशासन और गरीब कल्याण पर मुहर है। जंगलराज और तुष्टीकरण की राजनीति को बिहार ने नकार दिया। विपक्ष के 'वोट चोरी' आरोपों को खारिज करते हुए शाह ने मतदाता सूची शुद्धिकरण को राष्ट्रव्यापी मूड बताया। संक्षेप में, अमित शाह की दूरदर्शी रणनीति, असंतोष प्रबंधन और माइक्रो-प्लानिंग ने एनडीए को असंभव लग रही जीत दिलाई। यह जीत भाजपा की बिहार में मजबूती और शाह के चुनावी मास्टरमाइंड की मिसाल है। बिहार 2025 ने साबित किया कि संगठन और रणनीति से कोई भी चुनौती पार की जा सकती है।

( लेखक वरिष्ठ स्तंभकार हैं, ये उनके अपने विचार हैं।)

## ज्ञान का अभिषेक

संकलित
**दर्शन**

अखिल ब्रह्मांड ईश्वर का स्वरूप है। श्रावण मास में बरस रही जलधारा ही ऐसी प्रतीत होती है मानो प्रकृति इस धरा का अभिषेक कर रही है। प्रकृति के इसी कृत्य का अनुकरण हम मानव भी करते हैं। श्रावण मास में हम भी शिवलिंग पर जल चढ़ा कर अपने आपको ईश्वर के उसी कृत्य के साथ जोड़ लेते हैं। ईश्वर अथवा प्रकृति के गुणों को अपनाना सदाचार है। श्रावण मास हमें यह अवसर देता है। जल जीवन है और यह धरती को पुनर्जीवित करता है। वर्षा से प्रकृति पनपती है। तपती हुई धरती पर जब वर्षा होती है तो उसे शीतलता का आभास होता है। वनस्पतियां उगने लगती हैं। पेड़ों पर नए पत्ते लगने लगते हैं। जैसे श्रावण में लोगों को गर्मी से राहत मिलती है, वैसे ही ज्ञान के श्रवण से मन को पीड़ा और बेचैनी से राहत मिलती है। श्रावण में लोग एकत्रित होकर ज्ञान-श्रवण करते हैं। दिव्य कथाएं सुनते हैं। ईश्वर का गुणगान करते हैं, जिससे उन्हें संतोष प्राप्त होता है। जब मन पर ज्ञान का अभिषेक होता है, तो मन शांत और शीतल हो जाता है। श्रावण को सबसे पवित्र महीना माना जाता है, क्योंकि यह अनेक धार्मिक उत्सवों और पर्वों को अपने साथ लाता है। हिंदू कैलेंडर में श्रावण मास भगवान शिव को समर्पित है। शिव परिवर्तन के लिए उत्तरदायी ऊर्जा हैं। शिव जीवन के मार्ग की बाधाओं को दूर करने वाले हैं। वह पुरातन को विनष्ट कर नूतन के लिए मार्ग प्रशस्त करते हैं। शिव कल्याणकारी हैं। शिव कैलाश पर्वत पर निवास करते हैं। कैलाश का अर्थ ही है कि जहां केवल उत्सव हो, केवल आनंद हो। श्रावण के महीने में संपूर्ण वातावरण उत्सव से भर जाता है।

## समस्याएं तो आती-जाती रहेंगी, हमें रुकना नहीं चाहिए

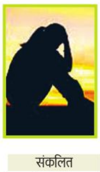

संकलित
**प्रेरणा**

एक व्यक्ति बहुत दुखी था। उसके पिता की मृत्यु हो चुकी थी, पूरे घर की जिम्मेदारी उस पर आ गई थी। बहुत मेहनत करने के बाद भी उसकी समस्याएं खत्म नहीं हो रही थीं। वह निराश रहने लगा था। एक दिन उस व्यक्ति को एक विद्वान संत मिले। व्यक्ति ने संत से कहा कि मैं बहुत परेशान हो गया हूं। मुझे अपना शिष्य बना लीजिए।संत ने कहा कि ठीक है, तुम शिष्य बन जाना, लेकिन पहले अपनी परेशानी बताओ। शिष्य ने कहा कि गुरु जी मेरे जीवन में एक समस्या खत्म नहीं होती है और उससे पहले ही दूसरी सामने आ जाती है। इस कारण मैं बहुत दुखी हूं। किसी भी काम में सफलता नहीं मिल पाती है, घर की भी समस्याएं बनी रहती हैं। गुरु ने कहा कि तुम मेरे साथ चलो। वह व्यक्ति संत के साथ चल दिया। कुछ देर में संत और शिष्य पास की नदी के किनारे पहुंच गए। किनारे पर पहुंचकर गुरु ने कहा कि हमें ये नदी पार करनी है। इतना कहकर संत किनारे पर ही खड़े हो गए। शिष्य भी गुरु के साथ खड़ा रहा। कुछ देर बाद शिष्य ने कहा कि हमें नदी पार करनी है तो हम यहां क्यों खड़े हैं? गुरु ने कहा कि हम इस नदी के सूखने का इंतजार कर रहे हैं, जब ये सूख जाएगी, हम इसे आसानी से पार कर लेंगे। ये बात सुनकर शिष्य बहुत हैरान हो गया। वह बोला कि गुरु जी ये कैसी बात कर रहे हैं? नदी का पानी कैसे और कब सूखेगा। हमें नदी को इसी समय पार करनी होगी। संत ने कहा कि मैं तुम्हें यही बात समझाना चाहता हूं। जीवन में भी समस्याएं आती-जाती रहेंगी। हमें सकारात्मक रहना चाहिए। निराश होकर रुकना नहीं चाहिए, लगातार आगे बढ़ते रहना चाहिए।

## अंतर्मन

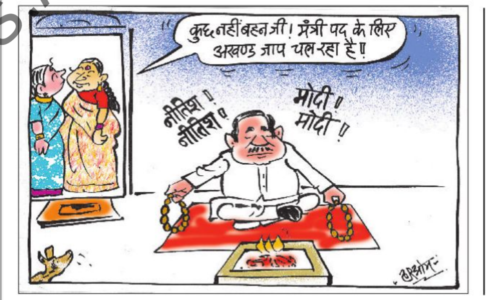


## आज की पाती

### बदले की भावना है यह

बांग्लादेश की पूर्व प्रधानमंत्री शेख हसीना को वहां के अंतरराष्ट्रीय अपराध न्यायाधिकरण ने फांसी की सजा सुनाई है। उन पर आरोप यह भी है कि उनके राज में जब हिंसक प्रदर्शन हुआ था, तब बहुत से लोग मारे गए थे और वह उस समय वहां से भागकर हमारे देश में आ गई थी और यहां पनाह लिए हुए हैं। राजा का फर्ज होता है कि वो सुख और दुख में प्रजा के साथ खड़ा हो, खासतौर पर दुख में प्रजा के साथ खड़ा होना चाहिए। शेख हसीना बेशक अपनी जान की परवाह करते हुए हमारे देश आ गई थी, लेकिन उन्हें ऐसा नहीं करना चाहिए था, वहीं रहकर अपने देश की समस्या का हल निकालना चाहिए था और विदेशों से मदद की गुहार लगानी चाहिए थी। फिर भी फांसी की सजा बदले की भावना लगती है। - *प्रदीप साहू, बलौदाबाजार*

## ट्रेंड

### साईं बाबा का संदेश

श्री सत्य साईं बाबा को समर्पित एक स्मारक सिक्का और डाक टिकट जारी किया है। उनका संदेश समय और स्थान की सीमाओं से परे है। करुणा, सेवा और सार्वभौमिक प्रेम की उनकी शिक्षाएं आज भी दुनिया भर के लोगों का मार्गदर्शन करती हैं।
**- नरेंद्र मोदी, प्रधानमंत्री**

### मखाना बोर्ड

पहले मुख्यतः मखाने का उत्पादन बिहार में होता था, लेकिन अब मखाने का उत्पादन छत्तीसगढ़ में भी हो रहा है इसीलिए मखाना बोर्ड में छत्तीसगढ़ को भी शामिल किया जाएगा, ताकि यहां के मखाना किसानों को लाभ मिल सके।
**-शिवराज सिंह चौहान, केंद्रीय कृषि मंत्री**

### एनआरसी

असम में एनआरसी अधिसूचित नहीं किया गया है, इसलिए मतदाता सूची का विशेष गहन पुनरीक्षण अस्थायी रूप से स्थगित कर दिया है। हालांकि, चुनाव आयोग ने मतदाता सूचियों के विशेष संक्षिप्त पुनरीक्षण का आदेश दिया है। इससे हमें अवैध लोगों को बाहर निकालने में मदद मिलेगी।
**- हिमंत बिस्वा सरमा, सीएम, असम**

### एसीबी की वसूली

झारखंड में एसीबी ने शराब घोटाले के आरोपियों को गिरफ्तारी का भय दिखाकर सैकड़ों करोड़ की वसूली की। कुछ आरोपियों को गिरफ्तार तो किया, लेकिन तय समय के भीतर चार्जशीट दाखिल नहीं की गई।
**-बाबूलाल मरांडी, पूर्व सीएम, झारखंड**

## करंट अफेयर

# सांता क्लॉज बनकर यहूदी बच्चों को दी जहरीली कैंडी

पूर्वी यूरोप के एक नव-नाजी समूह के नेता ने यहूदियों और नस्लीय रूप से अल्पसंख्यकों के खिलाफ हिंसक हमले कराने के लिए लोगों की भर्ती करने की कोशिश का जुर्म स्वीकार कर लिया। इन साजिशों में सांता क्लॉज का भेष धारण कर बच्चों को जहरीली 'कैंडी' बांटना भी शामिल था। संघीय अभियोजकों ने कहा कि वे 22 वर्षीय मिखाइल चिखिकविशविली के लिए 18 वर्ष तक की जेल की सजा की मांग करेंगे। दोषी जॉर्जिया गणराज्य का नागरिक है और उसे 'कमांडर बुचर' के नाम से जाना जाता है। चिखिकविशविली ने ब्रुकलिन की एक संघीय अदालत में घृणा अपराधों के लिए उकसाने और बम व राइसिन बनाने की जानकारी फैलाने के आरोपों को स्वीकार कर लिया। अभियोजकों के अनुसार, चिखिकविशविली अंतरराष्ट्रीय चरमपंथी समूह 'मेनिएक मर्डर कल्ट' का नेता है। यह समूह ऐसी विचारधारा को मानता है जो नस्ली एवं धार्मिक युद्ध छेड़ने के उद्देश्य से हिंसा को बढ़ावा देती है। चिखिकविशविली को जुलाई 2024 में मोल्दोवा में गिरफ्तार किया गया था और मई 2025 में उसे अमेरिका प्रत्यर्पित किया गया। अभियोजकों के अनुसार, 2022 से वह कई बार ब्रुकलिन आया, जहां उसने एक बुजुर्ग यहूदी व्यक्ति की पिटाई करने का दावा किया।

## ऑफ बीट

# बैठने के बजाय खड़े होकर काम करना फायदेमंद है?

आधुनिक समय में हममें से अधिकतर लोग जागते हुए अपना अधिकांश समय बैठकर गुजारते हैं। हाल में एक अनुसंधान में लंबे समय तक बैठने के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभावों को रेखांकित किया गया है। कई कार्यस्थलों पर 'सिट-स्टैंड' डेस्क सिस्टम को अपनाया गया है, जिस पर आप लंबे समय तक बैठने के नुकसान से बचने के लिए डेस्क को बटन या लीवर दबाकर ऊंचा कर सकते हैं और खड़े होकर काम कर सकते हैं। लेकिन खड़ा होना बेहतर कैसे है? और क्या बहुत अधिक खड़े होने के भी नुकसान हैं? बहुत अधिक बैठने और खड़े होने के जोखिमों के बारे में अनुसंधान क्या कहता है, और क्या 'सिट-स्टैंड' डेस्क में निवेश करना ठीक है। बहुत अधिक बैठने के क्या नुकसान हैं? जो लोग बहुत अधिक बैठते हैं उनमें टाइप 2 मधुमेह, हृदय रोग और कुछ प्रकार के कैंसर जैसी गंभीर बीमारियों के विकसित होने और उनका जीवन कम होने की आशंका बढ़ जाती है। लंबे समय तक बैठे रहने से मांसपेशियों, हड्डियों में, खासकर गर्दन और पीठ में दर्द संबंधी शिकायत बढ़ जाती है। उन लोगों को अधिक बैठने से और भी ज्यादा नुकसान हो सकता है जो बहुत कम व्यायाम करते हैं या एक मानक स्तर तक शारीरिक गतिविधियां नहीं करते।

## अपने विचार

**हरिभूमि कार्यालय**

टिकरापारा, रायपुर में पत्र के माध्यम से या फैक्स : 0771-4242222, 23 पर या सीधे मेल से hbcgpati@gmail.com पर भेज सकते हैं।

https://t.me/AllNewsPaperPaid